किताब-ए-ईक़ान

(सम्पूर्ण आस्था की पुस्तक)

(धर्म की प्रकृति और उद्देश्य की एक दिव्य विवेचना)

बहाउल्लाह

किताब-ए-ईक़ान

परिचय

अनादि काल से ईश्वर के अवतारों - कृष्ण, बुद्ध, जरश्तुस्थ, मूसा, ईसा, मुहम्मद, बाब और बहाउल्लाह ने पावन ग्रंथों के माध्यम से मानवजाति का पथ-प्रदर्शन किया है। सभी अवतारों ने अलग-अलग तरीके से, अलग-अलग कालखण्ड में और अलग-अलग स्थानों से लोगों को आध्यात्मिक ज्ञान दिया है और सभ्यता को आगे बढ़ाया है। उनकी वाणी से निकले शब्द संग्रहित किये गये जिसे अनुयायियों ने मानवजाति के लिये पवित्र ग्रंथ की संज्ञा दी। एक शक्तिशाली दिव्य ग्रंथ के विभिन्न अध्यायों की भाँति प्रकटीकरण के ये संग्रह समय और शताब्दियों के साथ बढ़ते चले गये और वेदों, भगवद्गीता, ज़ेन्द-अवस्ता, धम्मपद, बाइबिल, कुरआन, बयान, ईक़ान और अक़दस को शामिल करते चले गये।

इन पावन पुस्तकों के अनेक उद्देश्य हैं: पृथ्वी पर मानव के अस्तित्व को आध्यात्मिक रूप से उन्नत करना और इसे उदात्त बनाना, धर्म के क्रमिक प्रकटीकरण का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत करना और भाषागत विशेषताओं को उजागर करना, रचना-शैली, प्रतीक और जीवन के विभिन्न आयामों पर टिप्पणी देना।

यहाँ हम जिस रचना का परिचय दे रहे हैं वह है ईक़ान (आस्था) की पुस्तक। इसे बहाई धर्म के संस्थापक बहाउल्लाह द्वारा 1861/62 ई. में प्रकट किया गया। प्रकटीकरण-काल की अवधि थी दो दिन और दो रात। धर्म के आध्यात्मिक महत्व पर लिखी गई यह अत्यन्त महत्वपूर्ण पुस्तक है, एक पुस्तक जिसे बहाउल्लाह ने 'पुस्तकों के स्वामी' की संज्ञा दी है। उनके प्रकटीकरण की सर्वाधिक महत्वपूर्ण रचनाओं में 'ईक़ान' के समान कोई अन्य रचना सम्पूर्ण बहाई साहित्य में दूसरी नहीं, सिवाय 'किताब-ए-अक़दस' के जो एक नई विश्व-व्यवस्था का घोषणापत्र है। ईक़ान इस अर्थ में भी एक अद्वितीय पुस्तक है कि यह विश्व के विभिन्न धर्मों के मूल सिद्धांत और आध्यात्मिक विभूतियों के प्रति बहाउल्लाह के अनुयायियों की अवधारणा का वर्णन है तथा मानव-सभ्यता के इतिहास में हर एक विभूति के उद्देश्य की चर्चा है। 'ईक़ान' प्रतीकात्मक लेखांशों पर प्रकाश डालती है और बाइबिल तथा कुरआन जैसे पावन ग्रंथों के रहस्यों को उजागर करती है। दुनिया के धार्मिक इतिहास में यह पुस्तक बहाउल्लाह के महान योगदान के रूप में देखी जाती है और बहाई काल के इस महान रचनाकार की महत्वपूर्ण रचनाओं में एक है।

यह पुस्तक दो भागों में है: पहले भाग में बुनियादी बातों की चर्चा है कि किस प्रकार धर्म का प्रगतिशील प्रकटीकरण हुआ है और सभी धर्म एक-दूसरे से जुड़े हैं, जिसमें प्रत्येक एकेश्वरवादी धर्म पहले आये धर्मों को स्वीकार करता है और अक्सर प्रतीकों के माध्यम से आने वाले समय के विषय में भविष्यवाणी करता है। चूँकि बहाउल्लाह से सवाल पूछने वाले एक मुस्लिम थे, इसलिये वह बाइबिल के पदों का उल्लेख करते हैं और प्रतीकों के माध्यम से यह बतलाना चाहते हैं कि किस प्रकार एक ईसाई अपने पावन ग्रंथ की व्याख्या अगले युगधर्म में विश्वास व्यक्त करने के लिये कर सकता है। व्याख्या के इसी तरीके का इस्तेमाल कर मुस्लिम बाब (1819-1850) के दावे को सही समझ सकता है, जो पावन ग्रंथों में की गई दो अवतारों की भविष्यवाणियों में पहली विभूति थे। पुस्तक का दूसरा भाग और तुलनात्मक रूप से बड़ा भाग, इस बात का यथेष्ट वर्णन प्रस्तुत करता है और ठोस प्रमाण देता है बाब के अवतरण के उद्देश्य का। एक सुप्रसिद्ध अंश इस भाग में जो मिलता है उसे हम ''सच्चे जिज्ञासु के नाम पाती'' के रूप में जानते हैं।

जब पश्चिम में इस पुस्तक को प्रकाशित किया गया तब बहाउल्लाह के उत्तराधिकारी अब्दुल-बहा ने लिखा: ''यह संरक्षित पाती का अनुवाद है, 'विस्तृत चर्मपत्र', 'ईश्वरीय घोषणापत्र', 'सर्वदयालु का फरमान' 'किताब-ए-ईक़ान' जो सर्वमहान लेखनी द्वारा प्रकट किया गया है और 'आशीर्वादित सौन्दर्य' के पावन अधरों से प्रवाहित हुआ है।''

बाद में जब बहाई धर्म के संरक्षक शोगी एफेंदी ने बहाई धर्म के एक सौ साल के इतिहास को लिखा तब इस पुस्तक के लिये उनके निम्नांकित उद्गार थे:

''यह पुस्तक दो सौ पृष्ठों में ईश्वर के अस्तित्व और उसकी एकता की स्पष्ट रूप से घोषणा करती है; ईश्वर जो अज्ञेय है, अगम्य है, अनादि-अनंत है, सर्वज्ञ है, सर्वव्यापी है, सर्वशक्तिशाली है और समस्त प्रकटीकरणों का स्रोत है; यह धार्मिक सत्य की सापेक्षता और दिव्य प्रकटीकरणों की निरन्तरता का दृढ़ता से दावा करती है; अवतारों की एकता, उनके संदेश की सार्वभौमिकता, उनकी आधारभूत शिक्षाओं की एकरूपता, उनके ग्रंथों की पवित्रता तथा उनके स्थान के दोहरे स्वरूप की पुष्टि करती है; यह हर युग के धर्माचार्यों और विद्वानों के अन्धेपन और भ्रष्टता की भत्र्सना करती है; न्यू टेस्टामेंट के दृष्टांकित उद्धरणों, कुरआन के गूढ़ श्लोकों तथा मुहम्मद की उन रहस्मयी परम्पराओं के दृष्टांत देती है और इन्हें समझाती है, जिनके कारण सदियों से ऐसी गलतफहमियों, संदेहों और शत्रुता को बढ़ावा मिला है जिन्होंने विश्व की जानी-मानी धार्मिक व्यवस्थाओं के अनुयायियों को एक-

दूसरे से अलग कर दिया है और एक-दूसरे से दूर रखा है; यह पुस्तक उन अत्यावश्यक पूर्वापेक्षाओं का वर्णन करती है जो हर उस सच्चे जिज्ञासु के लिए जरूरी है, जो अपनी खोज के लक्ष्य को पाना चाहता है; यह बाबी प्रकटीकरण की वैधता, उदात्तता और महत्व को प्रमाणित करती है; बाब के अनुयायियों की वीरता और अनासक्ति की जयजयकार करती है; जिस प्रकटीकरण का वचन बयान के लोगों को दिया गया था उस प्रकटीकरण की विश्वव्यापी विजय की भविष्यवाणी करती है और उसका पूर्वाभास कराती है; पवित्र मेरी की पवित्रता और बेगुनाही का समर्थन करती है; मुहम्मद के धर्म के इमामों की प्रशंसा करती है; इमाम हुसैन की शहादत का गुणगान करती है और इमाम हुसैन के आध्यात्मिक प्रभुत्व की प्रशंसा करती है; ''वापसी'', ''पुनरूज्ज़ीवन'',''अवतारों की मुहर'' तथा ''न्याय का दिवस'' जैसे सांकेतिक शब्दों के अर्थ प्रकट करती है; दिव्य प्रकटीकरण के तीन चरणों की रूपरेखा प्रस्तुत करती है और इनके बीच के अन्तर स्पष्ट करती है; और प्रशंसा से भरे शब्दों में ''ईश्वर की उस नगरी'' की व्याख्या करती है जिसका मानवजाति के मार्गदर्शन, हित और मुक्ति के लिए निर्धारित अंतरालों में उस अन्नदाता के विधान द्वारा नवीनीकरण किया जाता है। यह दावा करना बिल्कुल उचित होगा कि बहाई प्रकटीकरण के लेखक द्वारा प्रकट की गई सभी पुस्तकों में, इस पुस्तक ने अकेले ही दुनिया के महान धर्मों के अनुयायियों को ऐसे अलंघनीय रूप से अलग करने वाले सदियों के पुराने अवरोधों को मिटा दिया है और इनके बीच सम्पूर्ण और स्थायी पुनःमित्रता की एक ऐसी विस्तृत नींव रख दी है जिस पर आक्रमण करना असम्भव है।''

ईक़ान की पुस्तक एक सागर के समान है। यह धर्म की अन्तर्निहित वास्तविकता का विवरण प्रस्तुत करती है और इसकी गहराई अथाह है। इसे अनेक बार पढ़ा जा सकता है और हर बार एक नया सत्य, एक नई दृष्टि हमारी आँखों के सामने उभरती है। पुस्तक का हिन्दी अनुवाद शोगी एफेंदी के अंग्रेजी अनुवाद से किया गया है और फारसी में लिखी इस पुस्तक की सहायता भी हिन्दी अनुवाद के लिए ली गई है।

भाग-1

हमारे परम उदात्त सर्वोच्च

स्वामी के नाम से

कोई भी मनुष्य तब तक सच्ची समझ के महासागर के तट तक नहीं पहुँच पायेगा जब तक वह धरती और आकाश के सब कुछ से अनासक्त नहीं हो जाता। हे तुम, संसार के लोगो ! तुम उस स्थान को प्राप्त कर सको जो परमात्मा ने तुम्हारे लिए नियत किया है और इस प्रकार तुम उस मण्डपवितान में प्रवेश पा सको जो दिव्यविधाता द्वारा दी गई व्यवस्था के अनुरूप ''बयान'' के महाव्योम में फैला दिया गया है।

1. इन शब्दों का सार यह है: वे जिन्हें आस्था के पथ पर कदम बढ़ाना है, वे जिन्हें आस्था की मदिरा की प्यास है, उन्हें स्वयं को धरती के सब कुछ से अनासक्त कर लेना चाहिए - अपने कानों को निरर्थक बातों से, अपने मन को व्यर्थ कल्पनाओं से, अपने हृदय को सांसारिक रागों से, अपने नेत्रों को उन सबसे जो नाशवान हैं। उन्हें परमात्मा में विश्वास रखना चाहिए और परमात्मा के पथ का ही दृढ़तापूर्वक अनुसरण करना चाहिए। तभी वे दिव्य ज्ञान और समझ के सूर्य से निस्सरित होते प्रकाश को धारण करने के योग्य बन सकेंगे और असीम तथा अदृश्य कृपा प्राप्त करेंगे, क्योंकि कोई भी मनुष्य तब तक उस सर्वमहिमावंत के ज्ञान को पाने की आशा नहीं कर सकता, जब तक वह दिव्य ज्ञान एवं विवेक की सरिता का रसपान नहीं कर लेता और न ही दिव्य सामीप्य की कृपा के प्याले का रसपान ही कर सकता है जब तक वह नश्वर मानव के शब्दों तथा कर्मों को परमात्मा और उसके अभिज्ञान का मापदण्ड मानना बंद नहीं कर देता।

2. अतीत पर विचार करो: कितने ही, उच्च और निम्न दोनों तरह के लोगों ने परमात्मा के चुने हुए जनों के पावन स्वरूप में ईश्वरीय अवतारों के आने की प्रत्येक काल में व्याकुलता से प्रतीक्षा की, उसके अवतरण की उन्होंने न जाने कितनी आस लगाई, न जाने कितनी बार उन्होंने प्रार्थना की कि दिव्य कृपा की बयार बहे और वह प्रतिज्ञापित ''सौंदर्य'' पर्दे के पीछे से पदार्पण करे तथा समस्त संसार के समक्ष प्रकट हो, और जब कभी भी कृपा के कपाट खुले और दिव्य अनुग्रह

के मेघ मानवजाति पर बरसे तथा उस अगोचर की ज्योति स्वर्गिक शक्ति के क्षितिज पर प्रकाशित हुई तो सबने उस परमेश्वर को नकार दिया और उसके मुखड़े से विमुख हो गए - वह मुखड़ा जो स्वयं ईश्वर का मुखारबिंदु था। तुम देखो, प्रत्येक पवित्र ग्रंथ में जो कुछ अंकित किया गया है, कैसे वे उस सत्य को प्रमाणित करते हैं।

3. पलभर के लिए विचार करो, और सोचो कि जिन्होंने इतनी उत्कंठा और लालसा से उसकी खोज की, क्यों अस्वीकार किया उन्होंने उसे ? उन्होंने उस पर जो बर्बरतापूर्ण आक्रमण किए उनका समग्र वर्णन न तो कोई जिह्वा कर सकती है, न कोई लेखनी। ऐसा एक भी पावनता का अवतार प्रकट नहीं हुआ जिसे अस्वीकार किए जाने, परित्यक्त किये जाने और अपने समकालीन लोगों के उग्र विरोध की पीड़ा नहीं सहनी पड़ी हो। इसी कारण यह वचन प्रकट किया गया है: "हे मानव के हतभाग्य! ऐसा कोई संदेशवाहक नहीं हुआ जो उन तक आया हो और जिसकी खिल्ली न उड़ाई गई हो।"[1] फिर वह कहता है: "प्रत्येक कौम ने अपने संदेशवाहक पर कठोर नियंत्रण रखने के इरादे से उसके खिलाफ घोर षड़यंत्र रचे और उसके सत्य को खंडित करने के लिए निरर्थक विवाद खड़े किए।"[2]

4. इसी तरह, शक्ति के स्रोत से प्रवाहित और महिमा के व्योम से प्रकटित ये शब्द हैं जो मनुष्य की साधारण समझ से परे हैं, जो सच्ची समझ और अंतर्दृष्टि से सम्पन्न हैं उनके लिए वास्तव में हूद की सूरा ही पर्याप्त है। सोचो, अपने मन में, उन पवित्र शब्दों पर विचार करो और पूर्ण अनासक्त भाव से उनके अर्थ को समझने का प्रयास करो। ईश्वरीय अवतारों के विलक्षण आचरण पर ध्यान दो और याद करो उन निन्दात्मक, अस्वीकारता से भरे वचनों को जो अवहेलना और असत्य की संतानों ने कहे थे ताकि कदाचित तुम मानव-मन रूपी पंछी को असावधानी और संशय के ठौर से आस्था और निश्चय के आवास की ओर उड़ान भरने की प्रेरणा दे सको, ताकि तुम उसे प्राचीन विवेक की अतल गहराइयों का विशुद्ध जल पीने को प्रेरित कर सको और दिव्य ज्ञान के तरुवर के फलों का आस्वादन करा सको। अनंतता और पवित्रता के लोकों से भेजे गए दिव्यभोज में पावन हृदय के लोगों के लिए जो अंश सुनिश्चित है, वह यही है।

5. यदि तुम परमात्मा के दूतों के अपमान से परिचित हो जाओ और उनके दमनकारियों द्वारा उठाई गई आपत्तियों के सही कारण समझ लो तो निश्चय ही तुम्हें मानना पड़ेगा कि उनका क्या महत्व है। साथ ही, ईश्वरीय गुणों के प्रकटीकरणों का विरोध करने वाले लोगों की अस्वीकृतियों को तुम जितना ही ज्यादा समझोगे, प्रभुधर्म में तुम्हारी आस्था उतनी ही अधिक प्रबल होगी। इसीलिए इस पाती में ईश्वरीय दूतों से सम्बन्धित विभिन्न बातों का संक्षिप्त उल्लेख किया गया है ताकि इस सत्य को स्थापित किया जा सके कि सभी सदियों और युगों में शक्ति और महिमा के प्रकटीकरणों को ऐसी घृणित क्रूरताओं का पात्र बनाया गया है जिसका वर्णन करने की सामर्थ्य किसी भी लेखनी में नहीं है। शायद यह उल्लेख कुछ लोगों को इस योग्य बना सके कि वे इस युग के तथाकथित धर्माधिकारियों और मूर्खों के शोरगुल और विरोध से विचलित न हों तथा उनके विश्वास और निश्चय को बल मिल सके।

6. ईश्वरीय दूतों में से एक थे नूह, बड़े ही प्रार्थनामय भाव से उन्होंने अपने जनों के लिए पूरे नौ सौ पचास वर्षों तक दिव्य उपदेश दिए और सुरक्षा तथा शांति के व्योम में प्रवेश करने का आह्वान किया। किन्तु किसी ने भी उनके आह्वान पर ध्यान नहीं दिया। इस आशीर्वादित आत्मा पर प्रत्येक दिन इतने कष्ट और उत्पीड़न ढाए गए कि किसी को भी उनके जीवित रह पाने का विश्वास नहीं रहा। अनेक बार लोगों ने उन्हें नकार दिया और दुर्भाव के साथ उन पर संदेह किया। इसीलिए यह प्रकट किया गया है कि "जब-जब उन लोगों की टोली उनके पास से गुजरती थी, उनका उपहास किया जाता था"। तभी तो उस ईशदूत ने कहा था: "यद्यपि अभी तुम हमारा उपहास करते हो किन्तु बाद में हम तुम्हारा उपहास करेंगे वैसे ही जैसे तुम आज हमारा करते हो। इसे तुम अन्त में जानोगे।"[3] उन्होंने कई बार अपने साथियों को विजय का वचन दिया और उसका समय सुनिश्चित किया। किन्तु जब वह घड़ी आई, वह दिव्य वचन पूरा नहीं हो सका, इससे उनके थोड़े से अनुयायियों में से कुछ उनसे विमुख हो गए, सुपरिचित पुस्तकों में किए गए उल्लेख इसके प्रमाण हैं। निश्चय ही तुमने उनका अध्ययन किया होगा अथवा निश्चय ही करोगे। जैसाकि इन पुस्तकों और पारम्परिक गाथाओं में बताया गया है, अंत में उनके साथ रह गए केवल चालीस या कोई बहत्तर अनुयायी। अन्ततः अपने अस्तित्व की गहराई से वे चीत्कार उठे "हे प्रभु ! नास्तिकों में से एक को भी इस धरती पर मत छोड़।"[4]

7. अब जरा इन लोगों की दिशाहीनता पर विचार करो। उनकी अस्वीकृति और उपेक्षा का भला क्या कारण रहा होगा ? क्यों उन्होंने अस्वीकार करने और उपेक्षा करने का रुख अपनाया ? किस कारण उन्होंने अस्वीकृति के लबादे को उतार फेंकने और स्वीकृति का जामा पहनने से इन्कार किया ? इसके अतिरिक्त, क्यों नहीं पूरा हुआ वह दिव्य वचन जिसे लोगों ने पहले स्वीकार किया था उसे ही अब खारिज कर दिया ? गहनता से चिन्तन करो जिससे अदृश्य वस्तुओं का रहस्य तुम पर प्रकट हो सके, तुम उस सुरभि को ग्रहण कर सको जो आध्यात्मिक और अनश्वर है तथा तुम इस सत्य को स्वीकार कर सको कि अनादि से अनंत तक सर्वशक्तिमान ईश्वर ने अपने सेवकों की परीक्षा ली है तथा सदैव लेता रहेगा ताकि प्रकाश और अंधकार, सत्य और असत्य, सही और गलत, मार्गदर्शन और भटकाव, सुख और दुःख तथा गुलाब और काँटों में विभेद किया जा सके। जैसाकि उसने प्रकट भी किया है: जब लोग कहते हैं कि "हम विश्वास करते हैं" तो क्या वे यह सोचते हैं कि उन्हें बस इतने भर से ही छोड़ दिया जाएगा और उनकी परीक्षा नहीं ली जाएगी ?"[5]

8. फिर नूह के बाद हूद के मुखमण्डल का प्रकाश सृष्टि के क्षितिज पर प्रकाशित हुआ। जैसाकि लोग कहते हैं, करीब सात सौ वर्षों तक उन्होंने लोगों को दिव्य उपस्थिति के रिज़वान के निकट आने और उसकी ओर उन्मुख होने का उपदेश दिया। उन्हें न जाने कितनी यातनायें दी गईं और उनके संकल्पों का फल यह मिला कि विद्रोह और भी उग्र हो गया तथा उनके घोर परिश्रम का परिणाम बस यही निकला कि उनके लोगों ने सत्य से आँखें फेर लीं। "और उनका अविश्वास अविश्वासीजनों के लिए केवल उनके ही अधोपतन को बढ़ावा देगा।"[6]

9. और उनके बाद, अदृश्य अनंतता के रिज़वान से सालेह की पवित्र विभूति प्रकट हुई जिन्होंने पुनः लोगों को शाश्वत जीवन-सरिता की ओर आने का आह्वान किया। उन्होंने सौ से भी अधिक वर्षों तक लोगों को सचेत किया कि वे परमात्मा के आदेशों में दृढ़ रहें और जो कुछ भी उन्हें मना किया गया है उसे त्याग दें। तथापि उनके उपदेशों का कोई सुफल नहीं निकला और उनके सभी तर्क निरर्थक सिद्ध हुए। कई बार निराश होकर वे एकान्तवास में चले गए। यह सब तब हुआ जबकि वह शाश्वत सौन्दर्य लोगों को और कहीं नहीं बल्कि परमात्मा के नगर की ओर बुला रहा था। जैसाकि प्रकट किया गया है: "और समूद के वंश में हमने उनके भाई

सालेह को भेजा।" 'हे मेरे लोगो!' उन्होंने कहा, "परमात्मा की आराधना करो क्योंकि उसके अतिरिक्त तुम्हारा अन्य कोई परमात्मा नहीं है...।" किन्तु उन्होंने उत्तर दिया: "हे सालेह! अब तक हमारी आशायें तुझ पर टिकीं थीं, तू हमें उसकी आराधना करने से मना करता है जिसकी आराधना हमारे पूर्वजों ने की थी। सचमुच हमें सन्देह है कि तू हमें संदिग्ध दिशा की ओर बुलाता है।"[7] यह सब निष्फल सिद्ध हुआ, यहाँ तक कि अन्त में बड़ा हाहाकार मचा और सबके सब घोर पतन को प्राप्त हुए।

10. बाद में, अदृश्य आवरण से प्रभु के मित्र इब्राहीम के मुखड़े का सौंदर्य प्रकट हुआ और दिव्य मार्गदर्शन की एक और पताका फहराई गई। उन्होंने धरती के निवासियों को धर्म के प्रकाश की ओर आमंत्रित किया। जितनी ही उत्कंठा के साथ उन्होंने लोगों को उपदेश दिये उतनी ही उग्रता से लोगों में ईर्ष्या और उद्दंडता बढ़ती गई, सिवाय उनके जो ईश्वर के सिवा अन्य सबसे अनासक्त थे और निश्चय के पंखों पर सवार होकर उस उच्च स्थिति की ओर बढ़ चले थे जिसे ईश्वर ने मनुष्य की समझ से परे अत्यंत उदात्त बनाया है। यह सबको मालूम है कि शत्रु समुदाय ने चारों ओर से उन्हें घेर लिया था और आखिरकार उनके खिलाफ ईर्ष्या और विद्रोह की आग भड़का दी थी और जब आग भड़काने से भी बात न बनी तो उसे - वह जो मानव समुदाय के बीच ईश्वर का प्रदीप्त दीपक था - अपने नगर से निर्वासित कर दिया गया, जैसाकि सभी ग्रंथों और वृत्तांतों में उल्लिखित है।

11. और जब उनका कालखण्ड समाप्त हुआ तो मूसा की बारी आई। दिव्य साम्राज्य के राजदंड से सुसज्जित, ईश्वरीय ज्ञान के धवल कर से सुशोभित और परमात्मा के प्रेम के फ़ारान से अग्रसर होते हुये तथा शक्ति और अनन्त शक्ति के सर्प को धारण किये हुये वह ज्योतिर्मय सिनाई से जगमगाते हुये सम्पूर्ण विश्व में प्रकाशित हो उठे। उन्होंने पृथ्वी के सभी मानवों और सगोत्रों का आह्वान किया कि वे अनंतता के साम्राज्य में प्रवेश करें और उन्हें आमंत्रित किया कि वे निष्ठा के वृक्ष का आस्वादन करें। तुम्हें निश्चय ही यह भी मालूम होगा कि किस तरह फ़िरऔन और उसके लोगों ने उसका प्रबल विरोध किया और किस तरह उस आशीर्वादित वृक्ष पर अविश्वासियों ने संदेह के पत्थर फेंके। यहाँ तक कि अंत में फिरऔन और उसके लोग पूरी शक्ति लगाकर असत्य और अवहेलना के पानी से उस पवित्र वृक्ष की अग्नि को बुझाने के लिये उठ खड़े हुये और वे इस सत्य को भूल गये कि वह उस दिव्य विवेक की लौ थी जिसे पार्थिव संसार के किसी भी जल से बुझाया नहीं जा

सकता और न ही नश्वर झोकों से शाश्वत साम्राज्य का प्रदीप्त दीप बुझाया जा सकता है। नहीं, बल्कि ऐसा जल लौ के प्रकाश को और बढ़ा देगा और ऐसे झोंके उस प्रदीप्त लौ को और भी सुरक्षा प्रदान करेंगे बशर्ते तू विवेक की दृष्टि से देखने वाला हो और परमात्मा की पवित्र इच्छा तथा प्रसन्नता की राह पर चलने वाला हो। सर्वमहिमावान प्रभु ने अपने ग्रंथ में एक कथा कही है जो उन्होंने अपने एक प्रियपात्र के लिए प्रकट की कि किस तरह फिरऔन के ही कुटुम्बी, एक धर्मानुयायी ने अपनी विवेकदृष्टि का परिचय दिया और फिरऔन के ही परिवार के एक व्यक्ति ने जो धर्मानुयायी था किन्तु जिसने अपनी निष्ठा छिपा रखी थी, कहा है: "क्या तुम इसलिए किसी के प्राण ले लोगे क्योंकि वह कहता है कि मेरा स्वामी परमेश्वर है, जबकि वह प्रभु के चिह्नों को लेकर तुम्हारे पास अवतरित हो चुका है ? यदि वह झूठा है तो उसका झूठ उसे ही नष्ट कर देगा किन्तु यदि वह सच्चा हुआ तो उसकी चेतावनी तुम पर टूट पड़ेगी। वस्तुतः ईश्वर उसे मार्गदर्शन नहीं देता जो आक्रामक, झूठा है।"[8] अन्ततः उनका अन्याय इतना प्रबल हुआ कि इस स्वनामधन्य अनुयायी को उन्होंने घृणित रूप से मार डाला। "अत्याचारियों को ईश्वर का श्राप मिले।"[9]

12. अब ज़रा इन बातों पर ध्यान दो। इतना विवाद और संघर्ष भला कैसे उत्पन्न हो सका ? ऐसा क्यों होता है कि ईश्वर के प्रत्येक अवतार के आने के साथ ही इतना संघर्ष और कलह, अत्याचार और उथल-पुथल शुरू हो जाती है, इसके बावजूद कि ईश्वर के सभी दूतों ने, जब कभी भी वे मनुष्य के बीच प्रकट हुए निर्विवाद रूप से अपने बाद आने वाले अवतार के प्रकट होने की पूर्वघोषणा की और ऐसे चिह्न सुनिश्चित किए जो बाद के धर्मयुगों के आगमन का संकेत देंगे। इसका प्रमाण हैं, सभी पवित्र ग्रंथों के उल्लेख। जबकि मानव "पावनता के अवतारों" की खोज में, उसकी प्रतीक्षा में रत है और उनके संकेत पवित्र ग्रन्थों में दिए गए हैं, फिर भी प्रत्येक युग और काल में ईश्वरीय दूतों और उनके चुने हुए जनों पर इतने अत्याचार, इतनी क्रूरता और हिंसा क्यों बरसाई गई ? जैसाकि उसने स्वयं भी प्रकट किया है: "जब कभी भी कोई देवदूत तुम्हारे पास वह लेकर आता है जिसकी चाह तुम्हारी आत्मा को नहीं होती तो तुम अहंकार से फूल उठते हो, उनमें से कितनों को पाखंडी करार देते हो और कितनों को मार डालते हो।"[10]

13. ज़रा सोचो कि ऐसा करने का कारण भला क्या रहा होगा? उस सर्वमहिमावान परमेश्वर के सौन्दर्य को प्रकट करने वालों के प्रति ऐसा व्यवहार जताने की दुष्प्रेरणा कहाँ से मिली होगी ? अतीत के युगों में इन लोगों ने जिस कारण से विरोध किया और उन्हें नकार दिया, उसी कारण से आज के युग के लोग भी पथभ्रष्ट हो चले हैं। यह कहते रहना कि विधाता का प्रमाण अपूर्ण था और इसीलिए लोगों ने उन्हें नकार दिया, खुली ईश-निन्दा के सिवा अन्य कुछ नहीं है। सर्वदयालु परमेश्वर की कृपा, उसकी स्नेहिल कल्याण-भावना और दयालुता से कितनी अलग लगती है यह बात कि मनुष्यों के बीच से किसी एक को वह अपनी समस्त सृष्टि के मार्गदर्शन के लिए चुन ले। और उसे अपने दिव्य प्रमाण का सम्पूर्ण अंश भी प्रदान न करे और दूसरी ओर, अपने उस 'चुने हुए जन' से विमुख हुए लोगों को कठोर दण्ड का भागी बनाये। नहीं, बल्कि सम्पूर्ण अस्तित्व के प्रभु की अनगिनत कृपाओं ने उसके दिव्य सार-तत्व के प्रकटावतारों के माध्यम से, सदासर्वदा इस पूरी धरती को घेर रखा है और उन सबको जो इस पर निवास करते हैं एक पल के लिए भी उसकी कृपा नहीं थमी और न ही मानवजाति पर कभी उसकी स्नेहिल दयालुता की फुहारों की वर्षा ही रोकी गई। अतः, ऐसे व्यवहार के मूल में लोगों की तुच्छ मानसिकता के सिवा अन्य कुछ नहीं है जो अहंकार और दुराग्रह की घाटी में विचरण करते हैं, जो भटकते फिर रहे हैं किसी सुदूर बियावान में, जो अपनी निरर्थक कल्पनाओं के अनुगामी हैं और जो केवल अपने धर्मगुरूओं का हुक्म बजाते हैं। उन्हें सिर्फ विरोध करना है, उनकी एकमात्र कामना है सत्य की उपेक्षा करना। प्रत्येक विचारशील प्राणी के लिए यह स्पष्ट और प्रकट है कि यदि इन लोगों ने सत्य-सूर्य के प्रत्येक प्रकटावतार के युग में अपनी दृष्टि, अपने कानों और अपने हृदय को उन सबसे पवित्र कर लिया होता जो उन्होंने देखा, सुना और महसूस किया था तो निश्चय ही वे ईश्वर के सौन्दर्य को देखने से वंचित नहीं रहते और न ही वे महिमा के आवास से दूर भटकते। किन्तु परमात्मा के साक्ष्य को अपने ही ज्ञान के मापदण्ड से तौलकर, अपने धर्मगुरूओं की शिक्षाओं के कतिपय अंशों को लेकर और उन्हें अपनी सीमित बुद्धि से परे जानकर वे अशोभनीय कार्यों में लग गए।

14. प्रत्येक युग में धार्मिक नेताओं ने लोगों को अनंत मुक्ति के तट तक पहुँचने में बाधा पहुँचाई है क्योंकि प्रभुत्व की लगाम सदा उनकी ही शक्तिशाली मुट्ठी में रही। कुछ

लोगों ने नेतृत्व के लोभ के कारण और अन्य लोगों ने ज्ञान तथा समझ की कमी के कारण लोगों को इससे वंचित रखा। उन्हीं के अनुमोदन और प्रभुत्व से, ईश्वर के प्रत्येक दूत ने त्याग की मदिरा का आस्वादन किया है और गरिमा की ऊँचाइयों की ओर उड़ान भरी है। प्रभुत्व और ज्ञान के आसन पर कब्जा जमाए बैठे इन लोगों ने संसार के सच्चे सम्राटों, दिव्य सद्गुण के इन 'महारत्नों' को कितनी ही अकथनीय क्रूरताओं का पात्र बनाया है। क्षणभंगुर साम्राज्य से संतुष्ट इन लोगों ने स्वयं को अनन्त प्रभु-सत्ता से वंचित कर रखा है। इस तरह न तो उनकी आँखों ने 'परम-प्रियतम' के मुखमंडल की ज्योति के दर्शन किए और न ही उनके कानों ने अभिलाषा के पक्षी का सुमधुर कलरव ही सुना। यही कारण है कि प्रत्येक पवित्र ग्रंथ में प्रत्येक युग के धर्माधिकारियों का उल्लेख है। इस भाँति कहता है वह: "हे ग्रन्थ के लोगो ! भला क्यों तुम ईश्वर के चिह्नों में अविश्वास करते हो जबकि तुम स्वयं ही साक्षी रहे हो ?"[11] और उसी ने यह भी कहा है: "हे ग्रन्थ के लोगो! क्यों डाल रहे हो सत्य पर असत्य का आवरण ?" क्यों जानबूझ कर छुपा रहे हो सच को ?"[12] उन्होंने फिर कहा: "कहो, हे ग्रंथ में उल्लिखित जनो ! अनुयायियों को ईश्वर के पथ से दूर क्यों करते हो ?"[13] यह स्पष्ट है कि "ग्रंथ में उल्लिखित जनों" - जिन्होंने लोगों को ईश्वर के सीधे मार्ग से दूर किया है - का मतलब है उस युग के धर्मगुरू जिनके नाम और लक्षण पवित्र ग्रंथों में प्रकट किए गए हैं और जो श्लोकों में संकेतित शब्दों और गाथाओं में अंकित हैं, बशर्ते तुम ईश्वर की दृष्टि से परखने वाले हो।

15. एक क्षण के लिए, परमात्मा की दोषरहित आँखों से सम्बलित, सुस्थिर और अपलक दृष्टि डाल और जरा माप ले दिव्य ज्ञान के इस क्षितिज का विस्तार और विचार कर पूर्णता के उन शब्दों पर जिन्हें अनंत ईश्वर ने प्रकट किया है। शायद दिव्य विवेक के रहस्य जो अब से पहले महिमा के आवरण में निगूढ़ और उस परमात्मा की दया के मण्डप-वितान तले संचित पड़े थे, तेरे समक्ष प्रकट हो जायें। इन धार्मिक नेताओं की अस्वीकृतियाँ और उनके विरोध मुख्य रूप से उनके ज्ञान और उनकी समझ की कमी के कारण रहे हैं। उन्होंने उन शब्दों को न कभी समझा न उनकी थाह ली जो एकमेव सत्य ईश्वर के सौन्दर्य को प्रकट करने वालों ने कहा था और जिनमें उन्होंने उन संकेतों को सुनिश्चित किया था जो आने वाले युग के अवतारों के आगमन की पूर्व-घोषणा करेंगे। इसीलिए उन्होंने विद्रोह के झंडे खड़े किए और उत्पात तथा द्रोह भड़काये। यह स्पष्ट रूप से प्रकट है कि 'अनंतता के

पक्षियों' की वाणी का सच्चा अर्थ सिर्फ उन्हीं के समक्ष प्रकटित होता है जो 'अनन्त पुरूष' के प्रकटस्वरूप हैं और 'पावनता की बुलबुल' के कलरव सिर्फ उन्हीं कानों द्वारा सुने जा सकते हैं जो शाश्वत जन हैं। अत्याचार का प्रतिरूप 'कोप्ट' न्याय के प्रतिरूप 'सेप्ट' के होठों से छुए हुए प्याले को नहीं चख सकता और अनास्था का प्रतिरूप फिरऔन कभी भी सत्य के मूसा के हाथ को थाम पाने की आशा नहीं कर सकता। जैसाकि 'उसने' कहा है: "उसका अर्थ अन्य कोई नहीं जानता सिवाय ईश्वर के और सिवाय उनके जो ज्ञान में पारंगत हैं।"[14] और फिर भी लोगों ने ग्रंथ की व्याख्या उन लोगों से चाही है जो परदों में लिपटे हैं और जिन्होंने ज्ञान के निर्झर-स्रोत से बोध प्राप्त करने को नकार दिया है।

16. जब मूसा का युग समाप्त हुआ और चेतना के प्रभात से विकीर्ण ईसा की ज्योति विश्व पर छा गई तो इस्राईल के सभी लोग उनके विरोध में उठ खड़े हुए। वे चिल्लाने लगे कि वह जिसके आगमन की भविष्यवाणी 'बाइबिल'(पूर्व विधान) में की गई, उसके लिए ज़रूरी है कि वह मूसा के विधानों की उद्घोषणा करे और उन्हें पूरा करे किन्तु दिव्य मसीहा होने का दावा करने वाले इस यौवन-सम्पन्न नाज़रीन ने मूसा के दो बड़े विधानों - तलाक के नियम और शनिवार के नियम को निरस्त कर दिया। इसके अलावा, अवतार के और कौन से चिह्न अभी आने थे ? इस्राईल के ये लोग आज भी उस प्रकटीकरण की आस लगाए बैठे हैं जिसकी भविष्यवाणी 'बाइबिल' (पूर्व विधान) ने की थी। मूसा के समय से लेकर अब तक पावनता के कितने ही अवतार, शाश्वत प्रकाश के कितने ही प्रकटकर्ताओं का आगमन हो चुका है किन्तु इस्राईल है कि वह आज भी अपने शैतानी ख्यालों और अपनी मिथ्या कल्पनाओं के सघन आवरण से लिपटा आस लगाये बैठा है कि उसके अपने ही हस्तकौशल की प्रतिमूर्ति उन्हीं के चिह्नों के साथ प्रकट होगी जो उनकी अपनी धारणा में समाये हुए हैं। इस तरह ईश्वर ने उनके पापों की खातिर उन्हें जकड़ रखा है, उनकी आस्था ही खत्म कर डाली है और घोर रसातल की लपटों से उन्हें ग्रस्त किया है। यह सब कुछ सिर्फ इसलिए कि इस्राईल ने आगामी धर्मप्रकाशन के चिह्नों से सम्बन्धित 'बाइबिल'(पूर्व विधान) में प्रकट किए गए वचनों का अर्थ समझने से इन्कार कर दिया, उनके सच्चे महत्व को उसने कभी ग्रहण नहीं किया और बाहरी तौर से देखने पर वैसी घटनायें कभी घटित नहीं हुईं। अतः वह ईश्वर के सौंदर्य को पहचानने और परमात्मा का मुखड़ा देखने से वंचित रह गये। वे अभी

तक 'उसके' आने के इंतजार में हैं। पुरातन काल से लेकर आज तक धरती के सब लोग, ऐसे ही काल्पनिक और अनुपयुक्त विचारों से चिपके बैठे हैं और इस प्रकार उन्होंने विशुद्धता और पावनता के स्रोतों से प्रवाहित स्वच्छ जल से स्वयं को वंचित कर रखा है।

17. इन रहस्यों को प्रकट करने में हमने एक मित्र को हिजाज़ की मधुर भाषा में सम्बोधित अपनी पूर्व पातियों में प्राचीन ईश-दूतों के प्रति प्रकट किए गए पदों के दृष्टांत दिए और अब तुम्हारे अनुरोध पर हम पुनः इसी पृष्ठ में उन्हीं पदों को इराक की अद्‌भुत बलाघात वाली शैली में प्रस्तुत करेंगे ताकि शायद कहीं सुदूर बियावान में भटकते प्यासे जन दिव्य उपस्थिति का महासागर पा सकें और वियोग के बंजर में मृतप्राय जन अनंत पुनर्मिलन के आवास तक लौट सकें। इस तरह भटकाव का कुहासा छँट जाये और दिव्य मार्गदर्शन का दीप्त प्रकाश मानव हृदय के क्षितिज पर उदित हो। परमात्मा में हमारा विश्वास है और उसी को हम सहायता के लिए पुकारते हैं ताकि सम्भवतः इस लेखनी से वह प्रवाहित हो सके, जो मानव आत्माओं को अनुप्राणित कर सके, ताकि वे असावधानी की शैय्या से जागें और उस वृक्ष से आती सुमधुर स्वरलहरियों को सुनें जिसे परमेश्वर की अनुमति से सर्वमहिमावान के रिज़वान में दिव्य शक्ति के हाथों रोपा गया है।

18. विवेक-सम्पन्न जनों के लिए यह स्पष्ट रूप से प्रकट है कि जब ईसा की प्रेमाग्नि ने यहूदी धर्म की सीमा-रेखाओं को भस्मसात कर दिया और जब उनकी प्रभुसत्ता प्रकट हुई और थोड़ी-बहुत प्रभावी भी हो गई तो अदृश्य "सौन्दर्य" के उस 'प्रकटकर्ता' ने अपने शिष्य के सम्मुख अपनी मृत्यु का उल्लेख करते हुए, अपने शिष्यों के दिल में वियोग की ज्वाला धधकाते हुए कहा: "मैं जाता हूँ और पुनः तुम्हारे पास आऊँगा।" और दूसरी जगह उसने कहा "मैं जाऊंगा तब एक दूसरा आएगा जो तुम्हें वह सब बतला देगा जो मैंने तुम्हें नहीं बतलाया है और वह मेरे सारे वचनों को पूरा करेगा।" इन दोनों कथनों का अर्थ एक ही है बशर्ते 'परमात्मा की एकता के अवतारों' के बारे में तू दिव्य अन्तर्दृष्टि से विचार करे।

19. प्रत्येक विवेकशील व्यक्ति यह पहचान लेगा कि क़ुरआन के धर्मयुग में ईसा के ग्रंथ और उनके धर्म दोनों की ही पुष्टि की गई है। जहाँ तक नामों का सम्बन्ध है, स्वयं मुहम्मद ने घोषणा की थी "मैं ही ईसा हूँ" उन्होंने ईसा के चिह्नों, शब्दों और

उनकी भविष्यवाणियों के सत्य को पहचाना और प्रमाणित किया था कि वे सब ईश्वर के हैं। इस अर्थ में न तो स्वयं ईसा और न ही उनके पवित्र लेख मुहम्मद और उनके ग्रंथ से भिन्न थे क्योंकि ये दोनों ही प्रभुधर्म के अग्रनायक थे, दोनों ने ईश्वर का गुणगान किया था और उसके आदेशों को प्रकट किया था। यही कारण है कि ईसा ने स्वयं यह घोषणा की: "मैं जाता हूँ और फिर तुम्हारे पास आऊँगा।" सूर्य का विचार करो। यदि वह अभी यह कहे कि "मैं बीते हुए कल का सूर्य हूँ।" तो वह सत्य ही कहता है और यदि वह काल-क्रम का विचार करते हुए उससे भिन्न सूर्य होने का दावा करे तब भी वह सच ही कहता है। इसी तरह, यदि यह कहा जाये कि सभी दिन एक ही हैं, एक जैसे ही हैं तो यह बिल्कुल सही है और यदि दिनों के खास नामों और अवस्थाओं के प्रसंगानुसार कहा जाये कि यह दिन उस दिन से अलग है, तो यह भी सही होगा क्योंकि यद्यपि वे एक समान हैं फिर भी लोग प्रत्येक दिन में एक अलग ही अवस्था, गुण और विशेषता देखते हैं। इसी तरह पावनता के भिन्न-भिन्न अवतारों की विशिष्टता, अन्तर और एकता के लक्षणों पर विचार करो ताकि तुम सभी नामों और गुणों के रचयिता द्वारा उनकी विशिष्टता और एकता के संकेतित रहस्यों को समझ सको और अपने इस सवाल का जवाब पा सको कि वह अनन्त सौन्दर्य भिन्न-भिन्न कार्यों में स्वयं को भिन्न-भिन्न नामों और उपाधियों से क्यों पुकारता है।

20. उसके बाद ईसा के मित्रों और शिष्यों ने उनसे उन चिह्नों के सम्बन्ध में पूछा जो उनके पुनप्रकटीकरण को संकेतित करेंगे। उन्होंने पूछा कि ये बातें कब घटित होंगी ? अनेक बार उन्होंने उस अप्रतिम 'सौंदर्य' से सवाल किए और प्रत्येक बार उसने उत्तर दिए। उन्होंने विशेष चिह्न सुनिश्चित किया जो कि प्रतिज्ञापित अवतार के आगमन की पूर्वघोषणा करेगा। चारों गॉस्पलों (इंजीलों) के अभिलेख इसे प्रमाणित करते हैं।

21. यह अत्याचार-पीड़ित इनमें से मात्र एक का उदाहरण उद्धृत करेगा, जो परमेश्वर के निमित्त, मानवजाति को ऐसे अनुग्रह प्रदान किए जाने का है जो अभी तक उस अप्रकट और पवित्र वृक्ष में छिपे हैं, ताकि नश्वर मनुष्य सम्भवतः अमर फल के अपने अंश से वंचित न रहे और अक्षय जीवन-जल की एक बूंद प्राप्त कर सके, जो "शांति गृह" बगदाद से समस्त मानवजाति के लिए सुरक्षित की गई है। हम न तो

प्रतिफल चाहते हैं और न पारितोषिक। "हम परमात्मा की ओर से तुम्हारी आत्माओं को पोषित करते है, तुमसे हम न तो प्रतिदान चाहते हैं और न ही धन्यवाद।"[15] यह वह भोज है जो विशुद्ध हृदयी जनों तथा प्रदीप्त चेतनायुक्त जनों को अक्षय जीवन प्रदान करता है। यही वह रोटी है जिसके बारे में कहा गया है: "प्रभु, हमें आसमान से अपनी रोटी भेज।"[16] यह रोटी उनसे कभी नहीं छीनी जायेगी जो इसके हकदार है और न ही यह कभी समाप्त होगी, यह सदैव प्रभु-कृपा से सम्पोषण प्राप्त करती है। यह प्रत्येक युग में न्याय तथा दयालुता के व्योम से उतरती है। यहाँ तक कि वह कहता है: "क्या तू नहीं देखता कि एक परिशुद्ध शब्द की समानता परमेश्वर किससे करता है ? एक अच्छे वृक्ष की जड़ें सदैव दृढ़ता से जमी होती हैं और उसकी शाखाएँ अम्बर के पार तक पहुँचती हैं, सभी मौसम में यह अपने फल प्रदान करता है।"[17]

22. यह कितना दुःखद होगा कि मनुष्य सर्वोत्तम उपहार, कभी न समाप्त होने वाली कृपा और इस अनंत जीवन से अपने को वंचित कर ले। उसके लिए तो यही योग्य है कि इस आहार का आदर करे जो महाव्योम से आया है, ताकि संयोग से, सत्य-सूर्य की अद्‌भुत कृपाओं के द्वारा, मृतक पुनर्जीवित हो उठें और मुरझाई हुई आत्माएँ असीम चैतन्य से स्फूर्ति प्राप्त कर सकें। शीघ्रता करो, हे मेरे भ्रात ! अभी समय है कि तुम्हारे अधर अनश्वर घूंट का रसास्वादन कर सकते हैं, क्योंकि इस समय अतिशय प्रिय की नगरी से बहने वाला जीवन-समीर सदैव बना नहीं रहेगा और पावन शब्दों की वेगवती सरिता अवश्य ही थम जायेगी और रिज़वान के कपाट सदैव खुले नहीं रह पायेंगे। निश्चय ही वह दिन आएगा जब बैकुण्ठ की कोकिला अपने पार्थिव घरौंदे से अपने स्वर्गिक नीड़ को उड़ जायेगी। तब उसका मधुर संगीत फिर नहीं सुना जा सकेगा, तब गुलाब का सौन्दर्य अपनी कांति बिखेरना बन्द कर देगा। अतः समय को थामो, इससे पहले कि दिव्य बासन्तीकाल की भव्यता बीत जाए और शाश्वतता का पक्षी सुमधुर संगीत का गुंजन करना बन्द कर दे, जिससे तेरे कान उसका आह्वान सुनने से वंचित न रहें। तुझे और परमेश्वर के प्रियजनों को यही मेरा परामर्श है। जो चाहे उसे उस ओर उन्मुख होने दो। जो चाहे उसे विमुख होने दो। सत्य ही परमात्मा स्वतंत्र है उससे जिसका वह साक्षी है।

23. मेरी के पुत्र ईसा के गॉस्पल के रिज़वान में प्रभावपूर्ण शक्ति के स्वरों में गाये गए मधुर गीत हैं, जो उन चिह्नों को प्रकट कर रहे हैं जिनसे उनके बाद के प्राकट्य के अवतरण की सुनिश्चित घोषणा होती है। पहली गॉस्पल में मैथ्यू[18] के अनुसार यह उल्लेख हुआ है: और जब उन्होंने ईसा से उनके आगमन के चिह्नों के सम्बन्ध में पूछा तो उन्होंने उनसे कहा: ''उन दिनों के अत्याचार (प्रयुक्त यूनानी शब्द 'थ्लिप्सिस' के दो अर्थ है: दबाव और अत्याचार) के तुरन्त बाद सूर्य अंधकारमय हो जाएगा और चन्द्रमा अपना प्रकाश नहीं देगा और तारे आकाश से गिर जायेंगे और पृथ्वी की शक्तियाँ प्रकम्पित हो जायेंगी: और तब आसमान में मनुष्य के पुत्र का चिह्न प्रकट होगा। और पृथ्वी की सभी जातियाँ विलाप करेंगी और वे मनुष्य के पुत्र को आकाश के मेघों से शक्ति और महान भव्यता के साथ आते हुए देखेंगी और वह अपने देवदूतों को तुरही के एक गम्भीर स्वर सहित भेजेगा''[18] फारसी भाषा में अनुवादित,[19] इन शब्दों का मंतव्य निम्नलिखित है: जब मानवजाति पर होने वाले अत्याचार और उत्पीड़न समाप्त होने को होंगे, तब सूर्य को चमकने से, चन्द्रमा को प्रकाश देने से रोका जायेगा, आकाश के तारे पृथ्वी पर गिर जायेंगे और धरती के स्तम्भ काँप उठेंगे। उस समय मनुष्य के पुत्र के चिह्न आकाश में प्रकट होंगे, अर्थात प्रतिज्ञापित सौंदर्य और जीवन का सार, इन चिह्नों के प्रकट होने पर, अदृश्य साम्राज्य से दृश्य जगत में पदार्पण करेगा। वह कहते हैं: उस समय पृथ्वी पर निवास करने वाले सभी लोग और बंधु-बांधव शोक और विलाप करेंगे और वे उस दिव्य सौन्दर्य को शक्ति, वैभव तथा गौरव के साथ बादलों पर सवार होकर आकाश से आते, अपने देवदूतों को एक तुरही के गम्भीर स्वर के साथ भेजते देखेंगे। इसी प्रकार तीन अन्य गॉस्पलों (इंजीलों) में, लूका, मार्कस और यूहन्ना के अनुसार यही वक्तव्य अभिलिखित हैं। अरबी भाषा में प्रकट की गई अपनी पातियों में हमने इनका विस्तार से वर्णन किया है, अतः इन पृष्ठों में उनका कोई उल्लेख नहीं किया है और मात्र एक ही संदर्भ में परिसीमित रखा है।

24. चूँकि ईसाई धर्मोपदेशक इन शब्दों का अर्थ समझने में असफल रहे हैं और उन्होंने इनका उद्देश्य और प्रयोजन नहीं पहचाना और ईसा के शब्दों की शाब्दिक व्याख्या से ही बंधे हैं, अतः, वे इस्लाम धर्म प्रकाशन की प्रवाहमान कृपा से और उसके निर्झर अनुग्रहों से वंचित रह गए। अपनी आस्था के नेताओं के उदाहरण का

अनुगमन करते, ईसाई समुदाय के अज्ञानीजनों को इसी भाँति भव्यता के सम्राट के सौन्दर्य का अवलोकन करने से रोका गया, क्योंकि वे चिह्न, जो मुस्लिम धर्मकाल के सूर्योदय के साथ आने थे, वस्तुतः घटित नहीं हुए। इस प्रकार युग बीत गए और सदियाँ व्यतीत हो गईं और वह अत्यन्त विशुद्ध आत्मा अपनी प्राचीन सर्वोच्चता के विश्राम-स्थल को वापस जा चुकी है। एक बार पुनः उस शाश्वत चेतना ने रहस्यमयी तुरही में श्वांस फूंकी और मृतजनों को प्रमाद और भूल की उनकी कब्रों से, मार्गदर्शन तथा कृपा के साम्राज्य में गतिमान किया है और फिर भी, वह आशावान समुदाय अभी तक चीख रहा है: ये चीजें कब होंगी ? वह प्रतिज्ञापित, हमारी आशाओं का लक्ष्य, कब प्रकट होगा, जब हम उसके धर्म की विजय के लिए उठ खड़े हों, जब हम उसके निमित्त अपनी समस्त सम्पदा न्योछावर कर दें, जब उसके मार्ग में हम सर्वस्व बलिदान करें और उसके पथ पर अपना जीवन न्योछावर कर सकें ? इसी प्रकार से, इन मिथ्या कल्पनाओं ने अन्य समुदायों को भी परमात्मा की असीम दयालुता के 'कौसर' से भटकाया है और उनके अपने निरर्थक विचारों में व्यस्त बनाए रखा है।

25. इस लेखांश के अतिरिक्त गॉस्पल की एक अन्य आयत है जिसमें वह कहता है: ''आकाश और पृथ्वी समाप्त हो जायेंगे, लेकिन मेरे शब्द कभी समाप्त नहीं होंगे।''[20] इस तरह, ईसा के अनुयायियों ने मान लिया है कि गॉस्पल के विधान कभी रद्द नहीं होंगे और जब भी वह प्रतिज्ञापित सौन्दर्य प्रकट किया जायेगा और सभी चिह्न प्रकट किए जायेंगे, तब वह अनिवार्यतः गॉस्पल में घोषित विधान की पुनर्पुष्टि तथा स्थापना करेगा, ताकि दुनिया में उसके धर्म के अतिरिक्त कोई धर्म न रहे। यह उनका मौलिक विश्वास है, इस सम्बन्ध में उनका दृढ़ विश्वास ऐसा है कि यदि कोई व्यक्ति गॉस्पल के विधान के विपरीत कुछ घोषित करने के लिए सारे प्रतिज्ञापित चिह्नों सहित प्रकट किया जाये तो निश्चय ही वे उसे त्याग देंगे। उसके विधान को मानने से इन्कार कर देंगे, उसे नास्तिक घोषित कर देंगे और घृणापूर्वक उस पर हँसेंगे। जो कुछ मुहम्मद के धर्मप्रकाशन का सूर्य प्रकट होने पर हुआ यह बात इससे प्रमाणित है, यदि लोगों ने प्रत्येक धर्मकाल के ईश्वरातार से विनीत भाव से पवित्र पुस्तकों में प्रकटित इन शब्दों का सच्चा अर्थ खोजा होता - उन शब्दों का जिनकी अशुद्ध समझ ने मनुष्यों को सद्रतुल-मुन्तहा के अंतिम प्रयोजन की पहचान से वंचित कराया है - तो निश्चय ही सत्य-सूर्य के प्रकाश की ओर

उनका मार्गदर्शन किया जाता और उन्होंने दिव्य ज्ञान तथा विवेक के रहस्य खोज लिये होते।

26. यह सेवक इन पवित्र शब्दों में संग्रहित सत्य के अथाह महासागर की एक बूंद में तुझे सहभागी बनायेगा, ताकि कदाचित विवेकवान हृदय पवित्रता के प्राकट्यों के कथनों की सभी भ्रांतियों तथा उलझनों को समझ लें, जिससे ईश्वरीय वाणी की महिमा उसके नामों तथा गुणों के महासमुद्र की प्राप्ति से उन्हें रोक न सके और न उन्हें परमेश्वर के उस दीपक को ही पहचानने से वंचित कर सके जो उसके गरिमामय सार के प्रकटीकरण की पीठिका है।

27. "उन दिनों के उत्पीड़न के तुरन्त बाद" से उनका संकेत उस समय से है जब मनुष्य उत्पीड़ित और वेदनाग्रस्त होंगे, जिस समय सत्य-सूर्य और ज्ञान तथा विवेक के वृक्ष के फल मनुष्यों के बीच से लुप्त हो जायेंगे, जब मानवजाति की बागडोर मूर्खों तथा अज्ञानियों की मुट्ठी में आ जायेगी, जब दिव्य एकता तथा ज्ञान के द्वार, सृष्टि में सारभूत तथा उच्चतम प्रयोजन बंद हो जायेंगे, जब कोई ज्ञान निरर्थक कल्पनाओं को छूट दे देगा और भ्रष्टाचार सद्धर्मिता के स्थान को ग्रस लेगा। इस प्रकार की दशा आज के दिन दिखाई देती है जब प्रत्येक समुदाय की लगाम दिशाविहीन नेतृत्व देने वालों के हाथों में चली गई है जो अपनी ही चपलताओं तथा स्वार्थपूर्ण इच्छाओं के वशीभूत हो नेतृत्व दे रहे हैं। उनकी जिह्वाओं पर परमात्मा के नामों का स्मरण मात्र एक कोरा नाम भर रह गया है, उनके बीच उसकी पवित्र वाणी निरर्थक शब्दावली बन कर रह गई है। ऐसा उनकी समस्त कामनाओं का बहाव है कि बुद्धि और विचारशक्ति का दीपक उनके हृदयों से बुझ गया है और यह तब है जबकि दिव्य शक्ति की अंगुलियों ने ईश्वरीय ज्ञान के कपाट खोल दिये हैं और दिव्य ज्ञान तथा स्वर्गिक कृपा के प्रकाश ने समस्त सृजित वस्तुओं को इस तरह प्रकाशित तथा प्रेरित किया है कि प्रत्येक अणु में ज्ञान का द्वार खोला गया है और एक-एक परमाणु में सूर्य के चिह्न प्रकट किए गए हैं। फिर भी, दिव्य ज्ञान के इन अनेक प्रकटीकरणों के बावजूद, जिन्होंने विश्व को घेर लिया है, वे अभी तक ज्ञान का द्वार बंद किए जाने की और दया की बौछारें निस्पंद होने की व्यर्थ कल्पना करते हैं। निरर्थक कल्पनाओं से जुड़े वे दिव्य ज्ञान के 'उर्वतुलवुस्का' से दूर भटक गए हैं। उनके हृदय, ज्ञान तथा उसके द्वार की ओर प्रवृत नहीं दिखाई देते हैं, न वे उसके प्राकट्यों का ही विचार करते हैं क्योंकि निरर्थक कल्पना में उन्होंने पार्थिव

सम्पदाओं की ओर ले जाने वाला द्वार पाया है, जबकि ज्ञान के प्रकाशक के प्रादुर्भाव में वे और कुछ नहीं बल्कि आत्मत्याग का आवाह्न पाते हैं। अतः स्वाभाविक ही वे पहले को दृढ़ता से पकड़ते हैं और दूसरे से दूर भागते हैं। यद्यपि उनके हृदयों में यह अनुभूति है कि परमात्मा का विधान एक और एकमात्र यही है, फिर भी प्रत्येक दिशा से वे एक नया आदेश देते हैं और प्रत्येक मौसम में वे एक नई व्यवस्था की घोषणा करते हैं। कोई दो लोग किसी एक नियम पर सहमत नहीं पाए जाते हैं, क्योंकि वे किसी परमेश्वर की नहीं बल्कि अपनी ही कामना तलाशते हैं और किसी पथ पर नहीं बल्कि भूलों के पथ का ही अनुसरण करते हैं। अपने महोद्योग का अंतिम लक्ष्य, नेतृत्व में ही उन्होंने पहचाना है और अहंकार को अपनी हार्दिक कामना की सर्वोच्च उपलब्धियाँ माना है। अपने निम्न कोटि के छल-कपट को उन्होंने दिव्य आदेश से ऊपर माना है, ईश्वरेच्छा की मान्यता का परित्याग कर दिया है, स्वार्थपूर्ण कामनाओं में अपने को निमग्न कर लिया है और पाखण्ड के मार्ग पर चले हैं। अपनी सम्पूर्ण शक्ति से, अपनी तुच्छ प्रवृत्तियों में अपनी सुरक्षा का वे प्रयास करते हैं और भयभीत हैं कि कहीं ऐसा न हो कि जरा सा असम्मान उनके अधिकार का महत्व घटा दे या उनकी शान-शौकत में बट्टा लगा दे। यदि ईश्वरीय ज्ञान के सुर से रंजित तथा प्रकाशित नेत्र होते, तो वह निश्चय ही यह देख पाते कि अतिलोलुप वन-पशु एकत्र हो गए हैं और मानवात्माओं के सड़े हुए मांस पर झपट रहे हैं।

28. जिसका वर्णन किया गया है उससे बढ़कर उत्पीड़न और क्या हो सकता है ? इससे अधिक दुःखदायी और कौन-सा उत्पीड़न हो सकता है कि सत्य को जानने की इच्छा रखने वाला व्यक्ति और ईश्वर का ज्ञान प्राप्त करने की अभिलाषा करने वाला यह जान ही न पाये कि उसके लिए उसे कहाँ जाना है और किससे पूछना है ? क्यों मतांतर इतना अधिक हो गया है और परमेश्वर की सिद्धि के मार्ग अनेक हो गए हैं ? यह "उत्पीड़न" प्रत्येक धर्मप्रकाशन का एक आवश्यक अंग बन गया है। यह जब तक व्याप्त नहीं होगा, तब तक सत्य का सूर्य प्रकट नहीं किया जाएगा, क्योंकि दिव्य मार्गदर्शन का प्रभात भूलों की रात्रि के अंधकार के बाद ही आता है। इसी कारण, सभी ऐतिहासिक वृत्तांतों तथा पारम्परिक कथनों में इन चीजों का उल्लेख किया गया है, जैसे कि अधर्म पृथ्वी को आच्छादित कर लेगा और अंधकार मानवजाति को ग्रसित कर लेगा। पारम्परिक कथन अच्छी तरह से ज्ञात है और

इस सेवक का प्रयोजन संक्षिप्त रहना है, अतः यह सेवक संक्षिप्तता को ध्यान में रखकर इन कथनों के मूल विषय को उद्धृत नहीं करेगा।

29. यदि इस "उत्पीड़न" से यह समझा जाये कि धरती सिकुड़ जायेगी या ऐसे ही दूसरे विचार जो उन्होंने गढ़ लिये हैं कभी पूरे नहीं होंगे तो वे निश्चय ही विरोध करेंगे कि दिव्य धर्मप्रकाशन की यह शर्त प्रकट नहीं की गई। ऐसे ही उनके विवाद के विषय रहे हैं और आज भी हैं। जबकि "उत्पीड़न" का मतलब है आध्यात्मिक ज्ञान को पाने और ईश्वरीय वचन को समझने की क्षमता का अभाव। इसका तात्पर्य है कि जब सत्य का दिवानक्षत्र अस्त हो जाता है और उसका प्रकाश प्रतिबिम्बित करने वाले दर्पण विलुप्त हो जाते हैं तब मानवजाति "उत्पीड़न" और कठिनाइयों से पीड़ित हो जाती है। उसे यह ज्ञान नहीं रहता है कि मार्गदर्शन के लिए किधर जायें। इस तरह हम तुझे पारम्परिक कथनों की व्याख्या समझाते हैं और तेरे समक्ष दिव्य विवेक के रहस्य प्रकट करते हैं। सम्भवतः तू उनका सच्चा अर्थ समझ सके और उनमें से बन सके जिन्होंने दिव्य ज्ञान और समझ के प्याले का छक कर पान किया है।

30. और अब, उसके उन शब्दों के सम्बन्ध में - "सूर्य काला पड़ जायेगा और चन्द्रमा प्रकाश देना बंद कर देगा और तारे आकाश से गिर जायेंगे।" परमात्मा के अवतारों द्वारा लिखे गए लेखों में वर्णित "सूर्य" और "चन्द्रमा" शब्दों से इस दृश्य ब्रह्माण्ड के सूर्य और चन्द्रमा का तात्पर्य नहीं है, बल्कि इन शब्दों में उनके अनेक अर्थों का अभिप्राय है। प्रत्येक उदाहरण में, उन्होंने उन्हें एक खास महत्व दिया है। इस प्रकार, एक अर्थ में "सूर्य" से उनका अभिप्राय है सत्य के वे सूर्य जो प्राचीन महिमा के व्योम में उगते हैं और संसार को कृपा के उन्मुक्त प्रवाह से भर देते हैं। सत्य के ये सूर्य अपने गुणों तथा नामों के लोकों में सार्वभौम ईश्वर के अवतार हैं, उसी प्रकार जैसे यह दृश्य सूर्य है जो उस उपास्य, उस एक सत्य परमात्मा की व्यवस्था के अनुसार पेड़ों, फलों और उनके रंगों, पृथ्वी के खनिजों और सृष्टि-जगत में जो कुछ प्रत्यक्ष देखा जा सकता है उस सबके विकास में सहायता प्रदान करता है। यही दिव्य प्रकाश के स्रोत भी करते हैं, अपनी प्रेमपूर्ण देखभाल और शिक्षाप्रद प्रभाव से वे दिव्य एकता के वृक्ष, उसके एकत्व के फल, अनासक्ति के पत्ते, ज्ञान तथा निश्चय के पुष्प, विवेक तथा वाणी की कलियों का अस्तित्व रखते हैं और उन्हें प्रकट करते

हैं। इसी विधि से इन ईश्वरीय प्रकाश केन्द्रों के उत्थान से संसार नया बनता है, शाश्वत जीवन-जल प्रवाहमान होता है, स्नेहिल सौजन्यता की लहरें उत्पन्न होती हैं, कृपा के मेघ एकत्र होते हैं और समस्त सृष्ट वस्तुओं पर अनुग्रहों का समीर प्रवाहित होता है। यही वह ताप है जिसे ईश्वरीय प्रकाश-स्रोत उत्पन्न करते हैं और वे कभी न बुझने वाली अग्नि प्रज्वलित करते हैं जो मानवता के हृदय में ईश्वरीय प्रेम के प्रकाश को चमकाती है। अनासक्ति के इन प्रतीकों की महती कृपा से ही मृतकों समान शरीर में अनन्त जीवन-चेतना की श्वांस फूंकी जाती है। निश्चय ही, दृश्य सूर्य सत्य के उस दिवानक्षत्र के वैभव का प्रतीक मात्र है, जिसकी बराबरी, समानता या प्रतिद्वन्द्विता कभी कोई नहीं कर सकता। उसी के माध्यम से समस्त वस्तुएँ जीवंत हैं, गतिमान और अस्तित्व में रहती हैं। उसकी कृपा के द्वारा प्रकट होती है और उसी में वापस हो जाती है। सारी वस्तुयें उसी से उत्पन्न है और उसके प्रकटीकरण के कोषों में ही वे शरण प्राप्त करती हैं। समस्त सृष्ट वस्तुयें उससे ही वृद्धि प्राप्त करती हैं और उसके विधान के भण्डार को ही वापस हो जाती हैं।

31. ये दिव्य प्रकाशस्रोत समय-समय पर विशिष्ट पदों तथा गुणों तक सीमित प्रतीत होते हैं, जैसाकि तुमने देखा है और इस समय देख रहे हो। इसका एकमात्र कारण कुछ लोगों की सीमित तथा अपूर्ण समझ है। अन्यथा, वे प्रत्येक समय प्रत्येक प्रशंसित नाम से ऊपर अत्यन्त उदात्त और प्रत्येक वर्णनीय गुण से पवित्र रहे हैं और अनंतकाल तक रहेंगे। प्रत्येक नाम का सार उनकी पावनता के सभामण्डप तक पहुँचने की आशा नहीं कर सकता और समस्त गुण उच्चतम और विशुद्धतम भव्यता के साम्राज्य तक कदापि नहीं पहुँच सकते। ईशदूत मानव समझ से परे उदात्त, अपरिमित रूप से उच्च होते हैं। जिन्हें ईशदूत की इच्छा के अतिरिक्त मनुष्य अन्य किसी साधन से नहीं जान सकता, उसकी महिमा अपरम्पार है। यह भी कि ईश्वर के प्रियजन उसके अतिरिक्त अन्य किसी से प्रशंसित हों। ईशदूत मनुष्य की प्रशंसा से परे महिमावंत हैं, मानव समझ से ऊपर, उदात्त हैं।

32. ''पवित्र आत्माओं'' के पावन लेखों में अनेक बार ''सूर्य'' शब्द परमात्मा के ईशदूतों के लिए, अनासक्ति के उन प्रकाशित प्रतीकों के लिए प्रयोग में लाया गया है। उन लेखों में ''नुद्बा की प्रार्थना'' में उल्लिखित शब्द निम्नांकित है: (इमाम अली लिखित 'विलाप')[21] ''कहाँ चले गए हैं प्रभासित सूर्य ? कहाँ विलग हो गए हैं वे चमकते

चन्द्र और जगमगाते नक्षत्र ?'' इस प्रकार, यह स्पष्ट हो गया है कि शब्द ''सूर्य'', ''चन्द्रमा'' और ''तारे'' प्राथमिक रूप से ईशदूतों, संतों और उनकी संगत में रहने वालों की ओर इशारा करते हैं, उन प्रकाश-बिंदुओं को जिनके ज्ञान के प्रकाश ने दृश्य और अदृश्य वस्तुओं के लोकों पर अपनी किरणें बिखेरी हैं।

33. दूसरे अर्थों में, इन शब्दों से पूर्ववर्ती धर्मकालों के धर्मोपदेशकों से तात्पर्य है, जो बाद के धर्म प्रकटीकरणों के काल में रहते हैं और धर्म की बागडोर अपनी मुट्ठी में रखते हैं। यदि ये धर्मोपदेशक बाद के धर्मप्रकाशन के प्रकाश से प्रकाशित हों तो वे परमात्मा के समक्ष स्वीकार्य होंगे और लगातार स्थायी प्रकाश से चमकेंगे। अन्यथा, वे अंधकार ग्रसित कहे जायेंगे, भले ही बाहर से देखने पर वे मनुष्यों के धार्मिक नेता हों, क्योंकि आस्था और अनास्था, मार्गदर्शन और त्रुटि, आनन्दमयता और विपत्ति, प्रकाश और तमस् सभी उसके अनुमोदन पर निर्भर हैं जो सत्य का दिवानक्षत्र है। प्रत्येक युग के धर्मोपदेशकों में जो भी अन्तिम निर्णय के दिन सच्चे ज्ञान-स्रोत से आस्था का प्रमाण ग्रहण करता है, वह सत्यतः ज्ञान को, दिव्य कृपा को और सच्ची समझ के प्रकाश को पाने वाला बन जाता है। ऐसा न होने पर वह मूर्खता, अस्वीकृति, ईश-निन्दा और उत्पीड़न का अपराधी करार दिया जाता है।

34. प्रत्येक विवेकवान व्यक्ति के समक्ष यह स्पष्ट और प्रत्यक्ष है कि जैसे सूर्य से उत्पन्न वैभव के सम्मुख तारे का प्रकाश मंद पड़ जाता है, उसी प्रकार पार्थिव ज्ञान, विवेक और समझ के प्रकाशक दिव्य ज्ञान के दिवानक्षत्र सत्य सूर्य की जगमगाती भव्यता के सम्मुख शून्यता में विलीन हो जाते हैं।

35. धर्म के नेताओं के लिए ''सूर्य'' शब्द प्रयुक्त हुआ है। ऐसा उनकी अत्युच्च स्थिति, उनकी प्रसिद्धि और यश के कारण है। ऐसे प्रत्येक युग के सार्वभौम रूप से जाने-माने, धर्मोपदेशक हैं, जो अधिकारपूर्वक बोलते हैं और जिनकी प्रसिद्धि सुरक्षित रूप से स्थापित है। यदि वे सत्य-सूर्य की सदृश्यता में हों तो निश्चय ही उनको समस्त प्रकाश स्रोतों में सर्वाधिक उच्च गिना जायेगा। अन्यथा, वे नारकीय अग्नि के केन्द्रों के रूप में पहचाने जाऐंगे। जैसाकि, वह कहता है: ''सत्य ही, सूर्य और चन्द्रमा दोनों ही नारकीय अग्नि की यातना से पीड़ित होने हेतु शापित हैं।''[22] तुम निस्संदेह इस आयत में चर्चित ''सूर्य'' और ''चन्द्रमा'' शब्दों की व्याख्या से

परिचित हो, अतः उसके उल्लेख की आवश्यकता नहीं और जो कोई इस "सूर्य" और "चन्द्रमा" के तत्व का है, अर्थात मिथ्या की ओर उन्मुख होने और सत्य से विमुख होने में इन नेताओं के उदाहरण का अनुसरण करता है, वह निःसंशय नारकीय अंधकार से ग्रस्त होता है और उसी में समा जाता है।

36. और अब, हे जिज्ञासु,! हमारे लिए यही योग्य है कि हम 'उर्वतुल वुस्क़ा' को दृढ़तापूर्वक थामे रहें, ताकि भूल की अंधकारमय रात्रि को पीछे छोड़ सकें और दिव्य मार्गदर्शन के प्रभात का आलिंगन कर सकें। क्या हम इन्कार की छाया से भागकर शरणदायी छाया नहीं खोजेंगे? क्या हम अपने को शैतानी आतंक से मुक्त कर दिव्य सौन्दर्य के उदीयमान प्रकाश की ओर शीघ्रगमन नहीं करेंगे ? हम तुम्हें दिव्य ज्ञानवृक्ष का फल इस रीति से प्रदान करते हैं, कि तुम लोग प्रसन्नता से और आनन्दपूर्वक अलौकिक विवेक के रिज़वान में निवास कर सको।

37. एक अन्य अर्थ में, "सूर्य", "चन्द्रमा" और "तारों" से तात्पर्य है ऐसे नियम और शिक्षाएँ, जो प्रत्येक धर्मकाल में स्थापित और घोषित की जाती हैं, जैसे प्रार्थना तथा उपवास के नियम। कुरआन के विधान के अनुसार, ईशदूत मुहम्मद का सौन्दर्य अस्त होने के बाद, इन विधानों को उनकी व्यवस्था के अत्यन्त मूलभूत और बाध्यकारी नियम माना गया है। पारम्परिक कथनों तथा इतिहास के मूलपाठ इसे प्रमाणित करते हैं जो भलीभाँति जाने जाते हैं और उनका उल्लेख यहाँ आवश्यक नहीं है। बल्कि प्रत्येक धर्मकाल में प्रार्थना से सम्बन्धित नियम पर बल दिया गया है और सार्वभौम रूप से लागू किया गया है। सत्य के दिवानक्षत्र, ईशदूत मुहम्मद के सार से उत्पन्न और प्रकाशित कथन इसे प्रमाणित करते हैं।

38. परम्पराओं ने इस तथ्य को स्थापित कर दिया है कि सभी ईश्वरीय अवतारों के धर्म प्रकाशन में प्रार्थना का विधान एक मूलभूत तत्व रहा है - एक विधान जिसका रूप तथा प्रकार प्रत्येक युग की बदलती हुई आवश्यकता के अनुरूप था। यहाँ तक कि प्रत्येक नये आने वाले धर्म ने अपने पहले धर्म के द्वारा प्रतिपादित रीतिरिवाज, प्रचलन और शिक्षाओं को समाप्त कर दिया और इनको प्रतीकात्मक रूप में "सूर्य" तथा "चन्द्रमा" शब्दों से व्यक्त किया, "ताकि तुममें से कर्मों में कौन श्रेष्ठ है, इसका निश्चय ईश्वर कर सके।[23]

39. इसके अतिरिक्त पारम्परिक कथनों में "सूर्य" तथा "चन्द्रमा" का उपयोग प्रार्थना तथा उपवास के लिए किया गया है। यहाँ तक कि यह भी कहा गया है, - "उपवास अन्तर्मन की दीप्ति है और प्रार्थना प्रकाश है।" एक दिन एक सुप्रसिद्ध धर्मोपदेशक हमसे मिलने आये। जब हम उनसे वार्तालाप कर रहे थे, उन्होंने ऊपर उद्धृत पारम्परिक कथन का उल्लेख किया। उन्होंने कहा: "उपवास शरीर की तपन को बढ़ाता है; अतः सूर्य के प्रकाश से उसकी समता की गई है और रात्रिकालीन प्रार्थना मनुष्य को शीतलता देती है। अतः उसकी तुलना चन्द्रमा की चाँदनी से की गई है।" इस पर हमने अनुभव किया कि उस बेचारे को सच्ची समझ के महासागर की एक बूंद का भी प्रसाद प्राप्त नहीं हुआ है और वह दिव्य विवेक की प्रज्वलित झाड़ी से दूर भटक गया था। तब हमने नम्रता से यह कहकर अपना मंतव्य प्रकट किया: "श्रीमंत् ने इस पारम्परिक कथन की वह व्याख्या की है जो लोगों में प्रचलित है। क्या इसकी दूसरी तरह से व्याख्या नहीं की जा सकती ?" उसने हमसे पूछा: "फिर यह क्या हो सकती है ?" हमने उत्तर दिया: "मुहम्मद, ईशदूतों की मुहर और परमात्मा के प्रियजनों में सर्वाधिक विशिष्ट, ईश्वर के चुने जनों में से एक ने कुरआन के धर्मकाल की तुलना, उसके बेजोड़ प्रभाव, उसकी महिमा और सभी धर्मों की उसकी सविस्तार समझ के कारण, आकाश से की है। चूँकि "सूर्य" तथा "चन्द्रमा" आकाश के सबसे उज्जवल और सबसे विशिष्ट स्रोत हैं, इसलिए ईश्वरीय धर्म के आकाश में दो जगमगाते प्रकाश-पुंज उपवास तथा प्रार्थना के रूप में निर्दिष्ट किए गए हैं।" इस्लाम है आकाश; उपवास है उसका सूर्य, प्रार्थना उसका चाँद।"

40. यही ईश्वरावतारों के प्रतीकात्मक शब्दों का निहित अभिप्राय है। निष्कर्षतः, पूर्वोल्लिखित के लिए "सूर्य" तथा "चन्द्रमा" जैसे शब्दों का व्यवहार पवित्र पदों के मूलपाठ तथा अभिलिखित पारम्परिक कथनों में प्रदर्शित और प्रमाणित हुआ है। अतएव, यह स्पष्ट तथा प्रत्यक्ष है कि "सूर्य अंधकाराछन्न हो जायेगा और चन्द्रमा अपना प्रकाश देना बंद कर देगा और तारे आसमान से गिर जायेंगे" शब्दों से धर्मोपदेशकों के भटकाव का और दिव्य धर्मप्रकाशनों द्वारा दृढ़ता से स्थापित नियमों के निरस्तीकरण का तात्पर्य है। प्रतीकात्मक भाषा में ईश्वरावतार ने इन सबका पूर्वाभास दिया है। सद्धर्मियों के अतिरिक्त अन्य कोई इस प्याले का

अंशलाभ नहीं ले पायेगा। पुण्यात्माओं के अतिरिक्त अन्य कोई उसका अंश प्राप्त नहीं कर सकता।'' सद्धर्मीजन कर्पूर की निर्झरनी की सुरभि से सुवासित प्याले से पान करेंगे।''[24]

41. यह अकाट्य तथ्य है कि पहले के प्रत्येक धर्मप्रकाशन में, शिक्षाओं, नियमों, आज्ञाओं तथा निषेधों के ''सूर्य'' तथा ''चन्द्रमा'', जो पूर्व धर्मकाल में स्थापित हुए हैं और जिन्होंने उस युग के लोगों पर अपनी छत्रछाया की हुई हो, अंधकारग्रसित हो जाते हैं, अर्थात प्रभावविहीन हो जाते हैं। अब विचार करो, यदि गॉस्पल के लोगों ने प्रतीकात्मक पदों ''सूर्य'' तथा ''चन्द्रमा'' का अर्थ समझ लिया होता, उन्होंने, हठधर्मियों तथा कुटिलताओं से भिन्न, उसके प्रकाश की चाह की होती जो दिव्य ज्ञान को देने वाला है, तो निश्चय ही इन पदों का प्रयोजन उन्होंने समझ लिया होता और अपनी स्वार्थपूर्ण कामनाओं के अंधकार में ग्रसित तथा दमित न होते। किन्तु सच्चे ज्ञान के स्रोत से ही उसे पाने में वे असफल रहे, अतः वे भटकाव और अंधविश्वास की संकटापन्न घाटी में विनष्ट हो गए। वे यह देख पाने को अभी तक जाग्रत नहीं हो पाये हैं कि पूर्वकथित सभी चिह्न प्रकट कर दिए गये हैं, कि जिसका वचन दिया गया था वह सूर्य दिव्य धर्मप्रकाशन के क्षितिज पर उदित हो गया है और पहले की धर्मव्यवस्था की शिक्षाओं, नियमों तथा ज्ञान के ''सूर्य'' तथा ''चन्द्रमा'' अंधकार में खोकर अस्त हो गए हैं।

42. और अब, स्थिर दृष्टि तथा निरन्तर गतिशील पंखों से तू निश्चय तथा सत्य के मार्ग पर उड़ चल। ''कहो, वह ईश्वर है, फिर उन्हें अपने मिथ्या झगड़ों से अपने को बहलाने के लिए छोड़ दो।''[25] इस प्रकार, तेरी उन साथियों में गणना होगी जिनके सम्बन्ध में वह कहता है: ''जो कहते हैं हमारा स्वामी परमात्मा है और उसके मार्ग पर दृढ़ रहते हैं, उन पर, सत्य ही, देवदूत अवतरित होंगे।''[26] तब इन सभी रहस्यों को तू अपनी आँखों से प्रत्यक्ष देखेगा।

43. हे मेरे भ्रात! तू चेतना का पग ग्रहण कर, जिससे पलक झपकने जैसी गति से तू दूरत्व तथा वियोग के अरण्यों को पार करता चला जायेगा, सर्वदा स्थायी पुनर्मिलन के रिज़वान को प्राप्त होगा और एक श्वांस में स्वर्गिक आत्माओं से

सम्भाषण करेगा, क्योंकि मानव पगों से इन अपरिमेय दूरियों को पार करने की आशा नहीं कर सकता और न अपनी लक्ष्यसिद्धि ही कर सकता है। शांतिलाभ हो उसे, जिसको सत्य का प्रकाश सम्पूर्ण सत्य हेतु मार्गदर्शन करता है और जो, परमात्मा के नाम से, उसके धर्म के मार्ग में सच्चे ज्ञान के सागर-तट पर खड़ा होता है।

44. पवित्र पद का अर्थ यह है: मैं पूर्व तथा पश्चिम के प्रभु की शपथ लेता हूँ''[27] का यही आशय है, क्योंकि संदर्भित प्रत्येक ''सूर्य'' का अपना विशिष्ट उदयाचल और अस्ताचल होता है और कुरआन के टीकाकार इन ''सूर्यों'' का प्रतीक अर्थ ग्रहण नहीं कर पाये हैं, अतः वे ऊपर उद्धृत आयत की व्याख्या न कर पाने की दुविधा में रहे। कुछ ने यह माना कि प्रतिदिन सूर्य के एक भिन्न बिन्दु से उदित होने के कारण ''पूर्व'' तथा ''पश्चिम'' पद बहुवचन में प्रयुक्त हुए हैं। दूसरों ने लिखा कि इस पद से वर्ष की चार ऋतुओं का तात्पर्य निकलता है क्योंकि सूर्य के उदय तथा अस्त बिन्दु ऋतु परिवर्तन के साथ बदल जाते हैं। ऐसी है उनके ज्ञान की समझ! तथापि, वे ज्ञान की उन मणियों पर अगम्य तथा विशुद्ध विवेक प्रतीकों पर अशुद्धि और मूर्खता को दोषारोपण करने का हठ करते हैं।

45. इसी प्रकार, तू इन देदीप्यमान, इन शक्तिशाली, निश्चित और असंदिग्ध कथनों से ''आकाश के फटने'' का अर्थ समझने का प्रयास कर। यह एक ऐसा चिह्न है जो अवश्य ही अंतिम क्षण, पुनर्जीवन दिवस की घोषणा करेगा। जैसा उसने कहा है: ''जब आकाश विदीर्ण किया जाएगा''[28] ; ''आकाश'' का अर्थ है दिव्य धर्म प्रकाशन का आकाश जो प्रत्येक अवतार के साथ उदित होता है और बाद के धर्मप्रकाशन के साथ फाड़ कर अलग कर दिया जाता है। ''फाड़ कर अलग किए जाने'' का तात्पर्य यह है कि पूर्व धर्मव्यवस्था निरस्त और निष्प्रभावी हो जाती है। मैं परमात्मा की सौगंध खाता हूँ! कि आकाश को फाड़ कर अलग किया जाना विवेकीजनों के लिए आसमानों की फटन से ज्यादा सामर्थ्यशाली कार्य है। जरा विचार करो, एक दिव्य धर्मप्रकाशन जो वर्षों तक सुरक्षित रूप से संस्थापित होता है, जिसकी छत्रछाया में उसे अंगीकार करने वालों का पालन और पोषण हुआ हो, जिसके विधान के प्रकाश में मानव पीढ़ियाँ अनुशासित हुई हों, जिसकी वाणी की उत्कृष्टता का

मनुष्यों ने अपने पूर्वजों से वर्णन सुना हो, जो इस भाँति स्थापित हुआ हो कि मानव नेत्रों ने उसके अनुग्रह के व्यापक प्रभाव के अतिरिक्त कुछ नहीं देखा हो और नश्वर कर्ण ने उसकी आज्ञा की गूंजती महिमा के अतिरिक्त कुछ नहीं सुना हो। कौन-सा कार्य इतना सामर्थ्यशाली है, कि ऐसा कोई धर्मप्रकाशन परमात्मा की शक्ति से "फाड़ कर अलग" किया जाये और एक आत्मा के प्राकट्य से उन्मूलित हो जाए ? विचार करो, क्या यह उससे ज्यादा सामर्थ्यवान कार्य है जिसकी इन मूर्ख और अधम मनुष्यों ने "आकाश की फटन" का अर्थ करते हुए कल्पना की है ?

46. इसके अतिरिक्त, दिव्य सौन्दर्य के उन प्रकाशकों के जीवन की कठिनाइयों तथा कटुताओं पर विचार करो। सोचो, कैसे एकाकी और अकेले उन्होंने संसार और उसके सभी जनों का सामना किया और परमात्मा का विधान घोषित किया! उन पवित्र, उन बहुमूल्य और सुकोमल आत्माओं पर कितनी ही कठोर यातनाओं के होते हुए भी, अपनी शक्ति भर उन्होंने धैर्य धारण किए रखा और अपने प्रभुत्व के बावजूद उन्होंने कष्ट सहे और सहिष्णु बने रहे।

47. इसी प्रकार, "पृथ्वी के बदलने" का तात्पर्य समझने का प्रयास कर। तू यह जान ले, कि जिन हृदयों पर दिव्य धर्मप्रकाशन के "आकाश" से बरस कर दयालुता की अनुग्रहमयी बौछारें गिरी हैं, उन हृदयों की भूमि का सत्यतः दिव्य ज्ञान और विवेक की भूमि में परिवर्तन हुआ है। एकता की कैसी कलियाँ उनके हृदयों की मिट्टी से उपजी हैं, सच्चे ज्ञान तथा विवेक के कैसे-कैसे पुष्प उनके प्रकाशित हृदयों से प्रस्फुटित हुए हैं। उनके वक्षों की भूमि यदि अपरिवर्तित रह जाती तो वे आत्मायें, जिनको एक अक्षर भी नहीं सिखाया गया, जिन्होंने शिक्षक के दर्शन तक नहीं किए और किसी विद्यालय में प्रवेश नहीं किया, कैसे ऐसे शब्दों का उच्चारण करतीं और ऐसे ज्ञान का दिग्दर्शन करातीं जिसे कोई नहीं समझ सकता ? मेरा विचार है कि उन्हें असीम ज्ञान की माटी से गढ़ा और दिव्य विवेक के जल से गूंथा गया है। इसीलिए, कहा गया है "ज्ञान एक प्रकाश है, जिसे परमात्मा जिसके हृदय में चाहता है, डालता है।" इसी प्रकार का यह ज्ञान है जो प्रशंसनीय है और सदा-सर्वदा रहता है। यह सीमित ज्ञान नहीं है जो आवरणमय तथा अस्पष्ट मनों से उद्‌भूत हुआ हो। इस सीमित ज्ञान को भी वे एक दूसरे से चोरी से लेते हैं और व्यर्थ ही उसका गर्व करते हैं।

48. काश! मनुष्य के हृदय उन पर आरोपित मानव निर्मित सीमाओं तथा अस्पष्ट विचारों से स्वच्छ हो पाते। काश! वे सत्य-ज्ञान के सूर्य के प्रकाश से जगमगा कर दिव्य विवेक के रहस्यों को समझ सकते। अब विचार करो कि, यदि इन हृदयों की शुष्क और अनुर्वरा मिट्टी अपरिवर्तित रह जाती तो वे ईश्वरीय रहस्यों के प्रकटीकरण को प्राप्त करने वाले और दिव्य सार को प्रकट करने वाले कैसे हो पाते ? इसी लिये उसने कहा है: "उस दिन जब धरती दूसरी धरती में परिवर्तित हो जायेगी।"[29]

49. सृष्टि के सम्राट के अनुग्रह रूपी प्रातः समीर ने भौतिक पृथ्वी को भी बदल डाला है, यदि तुम अपने हृदयों में दिव्य धर्मप्रकाशन के रहस्यों पर विचार करो तो इसे समझ पाओगे।

50. और अब, इन शब्दों का अर्थ समझो: "सम्पूर्ण पृथ्वी पुनर्रूत्थान के दिवस में उसकी मुट्ठी में होगी और उसके दायें हाथ में आकाश लिपटे होंगे। स्तुति हो उसकी! वह उदात्त है उनसे जो उसके साझीदार बनते हैं।"[30] और अब अपने निर्णय में तू सच्चा बन। इन शब्दों का यदि यह अर्थ होता जो मनुष्य मानते हैं तो कोई पूछ सकता है कि किस लाभ का वह मनुष्य के लिए हो सकेगा ? इसके अतिरिक्त, यह स्पष्ट और प्रत्यक्ष है कि मानव नेत्रों द्वारा देखा जा सकने वाला कोई हस्त ऐसे कर्म नहीं कर सकता। नहीं, ऐसी चीज को स्वीकार करना मात्र घोर ईश-निन्दा है, सत्य के नितान्त विपरीत और यदि यह माना जाये कि इन शब्दों से ईश्वरावतारों का तात्पर्य है कि वे ये काम सम्पन्न करेंगे तो यह बात भी सत्य से बहुत दूर प्रतीत होती है और निश्चय ही किसी लाभ की नहीं है। इसके विपरीत, "पृथ्वी" शब्द से समझ और ज्ञान की पृथ्वी का तात्पर्य है, और "आकाश" से दिव्य धर्मप्रकाशन के आकाश का। तू विचार कर, कैसे, एक हाथ में, अपनी सामर्थ्यशाली पकड़ से, उसने ज्ञान और विवेक की पृथ्वी को उलट दिया है, जो पहले फैली हुई थी एक मुट्ठी में समेट ली गई। दूसरी ओर, मनुष्यों के हृदयों में एक नई और अत्यन्त उदात्त पृथ्वी विस्तारित कर दी गई और इस प्रकार नवीनतम और अत्यन्त मनोहर पुष्प उत्पन्न किए गये और मनुष्य के प्रकाशित अन्तर्तम से अत्यन्त शक्तिशाली और भव्य वृक्ष उगाए गये हैं।

51. इसी भाँति, विचार करो कि कैसे अतीत के धर्मकालों के ऊँचे उठे आकाश, शक्ति के दायें हाथ में सिमट गये हैं, कैसे दिव्य धर्मप्रकाशन के आकाश परमात्मा की आज्ञा से उठाये गये हैं और उसकी अद्‌भुत आज्ञाओं के सूर्य, चन्द्रमा तथा सितारों से सुशोभित हुए हैं। ऐसे रहस्य हैं ये ईश्वरीय वाणी के, जिन्हें अनावृत कर प्रकट किया गया है, कि संयोग से, तू दिव्य मार्गदर्शन के प्रभातकालीन प्रकाश को समझ सके, विश्वास और त्याग की शक्ति से, निरर्थक लालसा के, व्यर्थ कल्पनाओं के, हिचकिचाहट के और संदेह के दीपक बुझा सके और अपने हृदय की अन्तर्तम गहराई में दिव्य ज्ञान और निश्चय की नवजात ज्योति प्रज्ज्वलित कर सके।

52. सत्य ही जान लो कि इन सब प्रतीकात्मक शब्दों और अत्यन्त गूढ़ संकेतों में, जो परमात्मा के पवित्र धर्म के प्रकटकर्ताओं से निकले हैं, का निहित प्रयोजन संसार के लोगों की परीक्षा लेना और सिद्ध करना है, ताकि उसके द्वारा विशुद्ध और प्रकाशित हृदयों की धरती को विनष्ट तथा बंजर मिट्टी से अलग किया जा सके। स्मरणातीत काल से परमात्मा का यही तरीका उसके प्राणियों के बीच रहा है और इसे पवित्र ग्रंथों के अभिलेख प्रमाणित करते हैं।

53. और इसी प्रकार, 'किब्ले'[31] के सम्बन्ध में प्रकटित आयत पर विचार करो, जब मुहम्मद, ईश्वरावतारों के सूर्य, ने बत़हा[32] से यसरिब[33] के लिये पलायन किया था, तो उन्होंने अपना मुखड़ा पवित्र नगर यरूशलम की ओर बनाए रखा और प्रार्थना करते रहे, उस समय तक जब यहूदी उनके विरूद्ध अशोभनीय शब्दों का उच्चारण करने लगे - ऐसे शब्द जिनका उल्लेख इन पृष्ठों में करने योग्य नहीं होगा। मुहम्मद ने इन शब्दों का डटकर प्रतिरोध किया। जब चिन्तन तथा विस्मय से आवृत, वह आकाश की ओर निहार रहे थे, उन्होंने जिब्राईल की सौजन्यतापूर्ण वाणी सुनी जिसने कहा: "हम तुझे ऊपर से देखते हैं, तेरा मुखड़ा आकाश की ओर है, किन्तु हम तुझे एक किब्ले की ओर उन्मुख करेंगे जो तुझे प्रसन्न करेगा।"[34] बाद में एक दिन जब ईशदूत अपने साथियों के साथ दोपहर की प्रार्थना कर रहे थे और इसके पहले निर्धारित दो 'रकात'[35] सम्पन्न किये जा चुके थे, तब जिब्राईल का स्वर पुनः सुनाई दिया: "तू पवित्र मस्जिद की ओर उन्मुख हो"[36,37] उसी प्रार्थना के बीच, सहसा मुहम्मद ने अपना चेहरा येरूशलम की ओर से हटाकर काबा की ओर घुमा लिया। इस पर एकाएक उनके साथियों को गहन अनिष्ट के भय ने जकड़ लिया।

उनकी आस्था डगमगा गई। इतना ज्यादा उनको भय हुआ कि उनमें से कई अपनी प्रार्थना बीच में छोड़कर अपना विश्वास खो बैठे। वस्तुतः परमात्मा ने यहाँ कोई उहापोह नहीं खड़ा किया था, बल्कि अपने सेवकों की परीक्षा ली थी और उन्हें सिद्ध किया था। अन्यथा, उस 'आदर्श सम्राट' ने आसानी से किब्ले को अपरिवर्तित और यरूशलम को ही उनके धर्मकाल तक नमन बिन्दु रहने दिया होता और इस प्रकार उस पवित्र नगर को प्रदान की गई स्वीकृति की विशिष्टता से उसे वंचित न किया होता।

54. जब से मूसा प्रकट किए गए, तब से दाऊद, ईसा और मूसा तथा मुहम्मद के धर्मप्रकाशनों के अन्तराल में प्रकट हुए अति उदात्त अवतारों में अन्य ईश्वरीय वाणी के संदेशवाहकों के रूप में अवतरित अनेक ईशदूतों में से किसी ने किब्ले का नियम कभी नहीं बदला। सृष्टि के स्वामी के इन संदेशवाहकों ने, किसी एक ने और सभी ने, अपने लोगों को एक ही दिशा की ओर उन्मुख होने का निर्देश दिया था। आदर्श सम्राट परमात्मा की नज़रों में पृथ्वी के समस्त स्थान एक और एक जैसे हैं, सिवाय उस स्थान के, जिसे अपने प्राकट्यों के दिवसों में, वह एक विशिष्ट प्रयोजन के लिए नियुक्त करता है। जैसा उसने कहा भी हैः "पूरब और पश्चिम परमात्मा के हैं: अतः जिस किसी दिशा में तुम लोग मुड़ते हो, वहीं परमात्मा का मुखड़ा है।"[38] इन तथ्यों के सत्य होते हुए भी, लोगों में इतना उद्वेग उत्पन्न करते हुए, ईशदूत के साथियों को प्रकम्पित करते हुए और उनके बीच बहुत बड़ी भ्रान्ति उत्पन्न करते हुए, किब्ले को क्यों बदल दिया जाना चाहिए था ? हाँ, सभी मनुष्यों के हृदयों में व्याकुलता पैदा करने वाली चीज़ें केवल इसलिए होती हैं कि प्रत्येक आत्मा को परमात्मा की कसौटी पर परखा जा सके, जिससे सत्य जाना जाये और उसे मिथ्या से पृथक किया जा सके। लोगों के बीच दरार होने के बाद उसने इस प्रकार प्रकट किया है, प्रायः सभी अवतारों के समय में जो मूसा के बाद प्रकट हुए। उदाहरण के लिए दाउद और ईसा और अनेक, अति उदात्त अवतारों के काल में जो मूसा तथा मुहम्मद के मध्य आये किसी ने नहीं बदला था। इन सभी संदेशवाहकों ने परमात्मा की ओर से लोगों को उसी ओर उन्मुख होने का आदेश दिया था: "हमने उसे नहीं नियुक्त किया है जिसे तुम क़िब्ला समझते हो, बल्कि उससे हम यह जान सकेंगे कि

कौन देवदूत का अनुसरण करता है और कौन विमुख हुआ है।''[39] ''शेर से भयभीत भागते गदहे।''[40]

55. यदि तुम इन वचनों पर थोड़ा भी विचार करते तो निश्चय ही अपने सम्मुख समझ के कपाट खुले पाते और अपनी आँखों के आगे समस्त ज्ञान तथा उसके रहस्यों को अनावृत होते देखते। ऐसी चीजें केवल इसीलिए होती हैं कि मानव की आत्मा विकसित हो और स्वार्थ तथा कामना के पिंजड़े की कैद से मुक्त हो जाये। अन्यथा, वह आदर्श सम्राट, अनन्त काल से, अपने सार में सभी प्राणियों की समझ से परे स्वतंत्र रहा है और सर्वदा अपनी निज की सत्ता से प्रत्येक आत्मा की स्तुति से परे अत्यन्त उच्च रहेगा। उसकी समृद्धि का मात्र एक झोंका सारी मानवजाति को सम्पन्नता के परिधान से सुसज्जित करने के लिए पर्याप्त होता है और उसके अनुग्रहमय कृपासागर से निकली एक बूंद भी समस्त प्राणियों पर शाश्वत जीवन की सुषमा उड़ेलने के लिए बहुत है। लेकिन चूँकि दिव्य प्रयोजन ने निर्दिष्ट किया है कि सत्य को झूठ से और धूप को छाया से अलग पहचाना जाये, अतः प्रत्येक काल में उसने अपने महिमा के साम्राज्य से मानवजाति पर परीक्षणों की बौछारें की हैं।

56. मनुष्य यदि प्राचीन काल के ईशदूतों के जीवन पर गम्भीरता से विचार करता तो वह तत्काल ही इन ईशदूतों के तौर-तरीकों को जान और समझ लेता, जो ऐसे कर्मों और शब्दों के आवरण को चीर डालता है जो उसकी निजी सांसारिक कामनाओं के विपरीत हों और इस प्रकार प्रत्येक बाधक आवरण को दिव्य ज्ञान की प्रज्वलित झाड़ी की अग्नि से भस्मसात कर दें तथा शांति और निश्चय के सिंहासन पर सुरक्षित रहें। उदाहरण के लिए, इमरान के पुत्र, एक उदात्त ईशदूत और एक दिव्यतः प्रकटित पुस्तक के प्रणेता[41] मूसा का विचार करो। अपने प्रारम्भिक दिनों में, अपने धर्मकाल की उद्घोषणा के पूर्व, एक दिन, बाजार से गुजरते समय उन्होंने दो आदमियों को लड़ते हुए देखा। उनमें से एक व्यक्ति ने अपने विरोधी के विरूद्ध मूसा से सहायता मांगी। इस पर मूसा बीच में आये और उन्होंने उसे मार डाला। पवित्र पुस्तकों का अभिलेख इसे प्रमाणित करता है। विस्तृत विवरण दिया जाये तो वर्णन अधिक बड़ा हो जायेगा और उपस्थित प्रसंग बाधित होगा। घटना की सूचना सारे शहर में फैली तो मूसा भयभीत हुए, जैसाकि पुस्तक का मूल पाठ साक्षी देता है। जब वह चेतावनी उनके कानों में आई: ''हे मूसा! सत्य ही, मुखिया तेरी हत्या के लिए परामर्श कर रहे हैं।''[42] तो वह नगर से बाहर गए और शोएब

की सेवा में मद्यन में प्रवास किया और वहाँ महिमा के साम्राज्य का दृश्य देखा - उस "वृक्ष से जिसका सम्बन्ध न तो पूरब से है और न पश्चिम से।"[43] वहाँ उन्होंने उस प्रज्वलित अग्नि से चैतन्य की आत्मा में हलचल उत्पन्न करने वाला स्वर सुना। यह स्वर उन्हें फिरऔन की आत्मा पर दिव्य मार्गदर्शन का प्रकाश प्रवाहित करने की आज्ञा दे रहा था, जिससे उनको स्वार्थ तथा कामना की घाटी की छाया से मुक्त करे, उन्हें इस योग्य बना सकें कि वे स्वर्गिक आनन्द की मदिरा प्राप्त करें और परित्याग की सलसबील के ज़रिए, दूरत्व के एकान्तवास से छुटकारा दिलाकर दिव्य उपस्थिति के शांतिमय नगर में उनको प्रवेश दिलायें। मूसा जब फिरऔन के पास गये और परमात्मा के आज्ञानुसार उसे दिव्य संदेश दिया तो फिरऔन ने अपमान करते हुए कहा:"क्या तू वही नहीं है जिसने हत्या की और नास्तिक बना?" फिरऔन ने मूसा से जो कुछ कहा उसका महिमा के प्रभु ने इस प्रकार वर्णन किया: "तूने यह क्या किया। तू कृतघ्नों में एक है।" उसने कहा, "मैंने वास्तव में यह किया है, मैं गलती करने वालों में से एक था और जब मैं तुमसे भयभीत हुआ तो डर कर भाग गया। लेकिन ईश्वर ने विवेक दिया और मुझे अपना दूत बनाया।"[44]

57. अब अपने हृदय में उस हलचल पर मनन करो जिसे परमात्मा उत्पन्न करता है। उन विचित्र तथा चतुर्दिक परीक्षणों का विचार करो जिनसे वह अपने सेवकों की परीक्षा लेता है। सोचो कि कैसे सहसा उसने अपने सेवकों के बीच से उसका चुनाव किया और दिव्य मार्गदर्शन का उच्च लक्ष्य उसे सौंपा जिसे मानव-हत्या के अपराधी के रूप में जाना गया था, जिसने स्वयं अपनी क्रूरता को स्वीकार किया और जो लगभग तीस सालों तक, संसार की नज़रों में, फिरऔन के घर में पाला-पोसा गया था। वह सर्वसमर्थ सम्राट परमात्मा क्या मूसा को हत्या करने से रोकने में समर्थ नहीं था, जिससे उस पर मानव हत्या आरोपित न की गई होती, जिसने लोगों के बीच घृणा और व्याकुलता पैदा की ?

58. इसी प्रकार, मरीयम की स्थिति और दशा पर विचार करो। उसके सुन्दर मुखमण्डल की व्याकुलता इतनी गहरी तथा इतनी गम्भीर थी, कि उसने जिसे जन्म दिया उस पर उसने फूट-फूट कर विलाप किया। पवित्र आयत का मूलपाठ इसकी साक्षी देता है जिसमें उल्लेख है कि ईसा को जन्म देने के बाद मरीयम ने

अपनी दशा पर बहुत शोक किया और चीत्कार कर बोली: ''काश, मैं इससे पहले मर गई होती और भूली-बिसरी चीज हो जाती, बिल्कुल गुमनाम।''[45] मैं परमात्मा की सौगंध खाकर कहता हूँ ! वह विलाप हृदय को खाता है और सम्पूर्ण अस्तित्व को कम्पाता है। आत्मा की ऐसी व्याकुलता, ऐसे निराशाजनक शत्रुओं के लगाये गये कलंक और नास्तिकों तथा दुष्टों के आक्षेपों की अपेक्षा अन्य किसी चीज से उत्पन्न न हुई होती। विचार करो, अपने चारों ओर के लोगों को मरीयम क्या उत्तर देती ? कैसे यह दावा करती कि एक बच्चा जिसका पिता अज्ञात है पवित्र चेतना से गर्भ में आया ? इसीलिए मेरी ने तो, उस आवरणयुक्त और अनश्वर मुखमण्डल के, अपने बच्चे को उठाया और अपने घर लौट आई। जैसे ही लोगों की नज़रें उस पर पड़ीं, उन्होंने आवाज उठायी: ''हे हारून की बहन! तेरा पिता दुष्ट आदमी नहीं था, न तेरी माँ अपवित्र थी।''[46]

59. और अब, इस बड़े भारी क्षोभ पर, इस शोकपूर्ण परीक्षण पर विचार करो। इन सब चीज़ों के होते हुए भी परमात्मा ने चेतना के उस सार को जिसे लोगों के बीच पितृविहीन जाना गया ईशदूत की भव्यता प्रदान की और जो आकाश में तथा धरती पर हैं उन सबके समक्ष उसे अपना प्रमाण बनाया।

60. देखो कि सृष्टि के सम्राट द्वारा आदेशित ईश्वरावतारों की रीतियाँ मनुष्यों के मार्गों तथा कामनाओं के कितनी विपरीत होती हैं। जैसे-जैसे तू दिव्य रहस्यों का सार समझता जाएगा, तू उस दिव्य सम्मोहक, उस परम प्रियतम ईश्वर का उद्देश्य समझता जायेगा। तू उस सर्वशक्तिमान सर्वोच्च के कर्मों तथा शब्दों का एक ही भाव से समादर करेगा, इस रीति से कि जो कुछ तू उसके कर्मों में देखेगा, वही तू उसके कथनों में पाएगा और जो कुछ तू उसके कथनों में पायेगा, उसी को तू उसके कर्मों में पहचानेगा। ऐसा है यह कि बाहर के ऐसे शब्द और कर्म दुष्टों के प्रति प्रतिहिंसा की आग है और अन्दर से सद्धर्मियों के प्रति दयालुता की जल लहरियाँ। यदि हृदय का नेत्र खुल जाता, तो वह अवश्य ही देख पाता कि ईश्वरेच्छा के आकाश से प्रकटित शब्द उन शब्दों के साथ एक और समान हैं जो दिव्य शक्ति के साम्राज्य से निकले हैं।

61. और अब, ध्यान दो, हे भ्रात! यदि ऐसी चीज़ें इस काल में प्रकट हों, ऐसी घटनायें इस समय घटित हों, तो लोग क्या करते ? वह जो मानवजाति का शिक्षक और

ईश्वरीय वाणी का प्रकाशक है उसकी सौगन्ध खाकर मैं कहता हूँ कि लोग तुरन्त और निःसंशय उसे नास्तिक घोषित करते और मृत्युदण्ड देते। उस आवाज को सुनने से वे कितने दूर होते जो घोषित करती है: देखो, पवित्र चेतना की श्वांस से एक ईसा प्रकट हुआ है और एक मूसा ने दिव्यतः नियोजित कार्य के लिए आह्वान किया है। दस लाख आवाजें भी उठतीं, तो कोई कान नहीं सुनता यदि हम कहते कि एक पितृहीन बच्चे को ईशदूत का कार्य सम्पादित करने का लक्ष्य प्रदान किया गया है, या कि एक हत्यारा प्रज्वलित झाड़ी की ज्वाला से "सत्यतः, सत्य मैं परमात्मा हूँ।" का संदेश लाया है।

62. यदि न्याय का नेत्र खुल जाये तो वह उसके प्रकाश में, जिसका उल्लेख किया जा चुका है, तत्परता से अनुभूति कर लेगा कि वह जो इन समस्त चीज़ों का कारण और परम प्रयोजन है, इस दिवस में प्रकट किया गया है। यद्यपि इस धर्मकाल में वैसी घटनायें घटित नहीं हुई हैं, फिर भी लोग ऐसी व्यर्थ कल्पनाओं से अभी तक जुड़े हैं जैसी दुष्टों द्वारा की जाती है। कितने गम्भीर आरोप उसके विरूद्ध लगाये गये। कितनी प्रबल प्रताड़ना उसे दी गई - ऐसे आरोप और उत्पीड़न जैसा मनुष्यों ने न कभी देखा और न कभी सुना है।

63. महाप्रभु! जब वाणी का प्रवाह इस अवस्था पर पहुँचा तो हमने निहारा। देखो! परमात्मा की मधुर सुरभि धर्मप्रकाशन के प्रभात से फैलाई जा रही थी और प्रातःसमीर उस शाश्वत के शीबा से बहकर आ रहा था। उसके सुसमाचारों ने नये सिरे से हृदय को आह्लादित कर दिया और आत्मा को अपरिमेय आनन्द प्रदान किया। सारी वस्तुओं को उसने नवीनता प्रदान की और उस अज्ञेय मित्र से अनगिनत और अकल्पनीय उपहार पाये। मानव प्रशंसा का परिधान उसके श्रेष्ठ आकार-प्रकार के अनुरूप होने की कदापि आशा नहीं की जा सकती और उसकी प्रभासित आकृति वाणी के परिधान के योग्य कभी नहीं हो सकती। शब्द के बिना ही वह आन्तरिक रहस्यों का अनावरण करता है और शब्दोच्चार के बगैर ही वह दिव्य कथनों के भेद प्रकट करता है। वह दूरत्व और वियोग की शाखा पर कूकती कोकिला को विलाप की शिक्षा देता है, प्रेम की रीतियों की कला से उनका निर्देशन करता है और उन्हें हृदय से समर्पण का भेद सिखलाता है। स्वर्गिक पुनर्मिलन के रिज़वान के फूलों के लिए वह उन्मत्त प्रेमी की भावदशायें प्रकट करता है और सच्चाई के आकर्षण को अनावृत करता है। प्रेम-उपवन में वह सत्य के रहस्य उड़ेलता है और प्रेमीजनों के वक्षों में अन्तर्तम उत्तमता के प्रतीक एकत्र

करता है। इस समय, उसकी कृपा का प्रवाह इतना विशाल है कि मलिन गुबरैले ने कस्तूरी की सुगन्ध तलाशी है और चमगादड़ ने सूर्य का प्रकाश। मृतकों को उसने जीवनश्वांस से संजीवित किया है और उनके नश्वर शरीरों को समाधि स्थलों से बाहर निकाला है। उसने अज्ञानियों को ज्ञान की पीठिका पर स्थापित किया है और अत्याचारियों को न्याय के उच्च सिंहासन पर बिठाया है।

64. ये चतुर्दिक अनुकम्पाएँ ब्रह्माण्ड के गर्भ में हैं और वे उस क्षण की प्रतीक्षा में हैं, जब उसकी अदृश्य देनों के प्रभाव इस संसार में प्रत्यक्ष होंगे, जब क्षीणकाय और अत्यन्त पिपासुजन अपने परमप्रिय का जीवंत ''कौसर'' उपलब्ध करेंगे और दूरत्व तथा विलोपन के अरण्यों में विलीन भूले-भटके जन जीवन-मण्डप में प्रवेश कर अपने हृदय की कामना के साथ पुनर्मिलन को प्राप्त होंगे। ये पवित्र बीज किसके हृदय की माटी में अंकुरित होंगे ? किसकी आत्मा के उपवन से अदृश्य यथार्थ के फूल प्रस्फुटित होंगे ? सत्य ही मैं कहता हूँ कि, प्रेम की झाड़ी की ज्वाला इतनी प्रचण्ड है, वह हृदय की सिनाई में जल रही है। वाणी के प्रवाहमान जल भी उसकी ज्वाला को नहीं बुझा सकते। महासागर समान महादैत्य भी इसकी तपती पिपासा को शान्त नहीं कर सकते और अमरणशील अग्नि का यह पुरातन पक्षी उस परमप्रिय की मुखाकृति की आभा के अतिरिक्त और कहीं निवास नहीं कर सकता। अतः हे भ्रात! अपने हृदय के अन्तर्तम में विवेक के तेल से चेतना का दीप जलाओ और ज्ञान के रक्षाकवच से उसकी रक्षा करो, जिससे नास्तिकों की फूंक उसकी लौ को बुझा न दे और उसकी चमक को धूमिल न कर दे। दिव्य ज्ञान और विवेक के सूर्य की प्रभा से हमने वाणी के गगन में इस प्रकार प्रकाशित किए हैं, कि तेरे हृदय को शांति मिल सके, कि तू उनमें से बन सके, जो निश्चय के पंखों से, उस सर्वदयामय अपने प्रभु के प्रेम के अम्बर की ओर उड़ गये हैं।

65. और अब उसके शब्दों के सम्बन्ध में: ''और तब आकाश में मानव के 'पुत्र' का चिह्न उदित होगा।'' इन शब्दों से तात्पर्य यह है कि जब दिव्य शिक्षाओं के सूर्य को ग्रहण लग गया हो, दिव्यतः स्थापित विधानों के तारे गिर जायेंगे और सच्चे ज्ञान का चन्द्रमा जो मानवजाति का शिक्षक है धुंधला पड़ गया हो, जब मार्गदर्शन और परमानन्द के मापदण्ड उलट गए हों और सत्य तथा सदाचार का प्रभात निशा में डूब गया हो, तब 'मानव पुत्र का चिह्न' आसमान में प्रकट होगा।

"आसमान" से तात्पर्य है गोचर आसमान, क्योंकि जब वह समय निकट आता है जिसमें न्याय के आकाश का प्रभात प्रकट किया जाएगा और दिव्य मार्गदर्शन की नौका महिमा के सागर पर चालित होगी तब एक नक्षत्र आकाश में उदित होगा जो अपने लोगों में उस सर्वमहान प्रकाश के अवतरण की घोषणा करेगा। इसी भाँति, अदृश्य आकाश में एक नक्षत्र प्रकट किया जाएगा जो, पृथ्वी के लोगों के समक्ष, उस सच्चे तथा उदात्त प्रभातोदय के सूचनावाहक की भाँति कार्य करेगा। दृश्य और अदृश्य आकाश के इन दोहरे चिह्नों से परमात्मा के प्रत्येक दूत के धर्मप्रकाशन को घोषित किया गया है, जैसाकि सामान्यतः विश्वास किया जाता है।

66. ईशदूतों में एक थे अब्राहम, परमेश्वर के मित्र! उनके प्रकट होने के पूर्व, निमरोद ने एक स्वप्न देखा था। इस पर उसने भविष्यवक्ताओं को बुलवाया, जिन्होंने उसे आकाश में एक विशेष नक्षत्र के उदित होने की सूचना दी। इस प्रकार, एक उद्घोषक प्रकट हुआ जिसने देश भर में अब्राहम की घोषणा की।

67. उनके बाद मूसा आये, जिन्होंने परमात्मा से वार्तालाप किया। उस समय के भविष्यवक्ताओं ने फिरऔन को इन शब्दों में सजग किया था: "एक नक्षत्र आकाश में उदित हो चुका है और देखो, वह एक बच्चे की गर्भ में स्थिति का पूर्वानुमान देता है जिसके हाथ में तुम्हारा और तुम्हारे लोगों का भाग्य है।" इस भाँति, एक मनीषी प्रकट हुआ, जो रात्रि के अंधकार में इस्राईल के लोगों के लिए, उनकी आत्माओं को सांत्वना और उनके हृदयों को आश्वासन देने वाला आनन्ददायक समाचार लाया। पवित्र ग्रंथों के अभिलेख इसे प्रमाणित करते हैं। यदि विस्तार से उल्लेख किया जाये तो यह पाती पुस्तक बन जाएगी। इसके अतिरिक्त, बीते दिनों की कहानियों का वर्णन करने की हमारी कोई इच्छा भी नहीं है। परमात्मा हमारा साक्षी है कि इस समय भी हम जिसका उल्लेख कर रहे हैं वह पूर्णतया तेरे प्रति अपने सुकोमल स्नेह के कारण है ताकि, संयोग से, पृथ्वी की निर्धन सम्पदा के सागर तटों को उपलब्ध कर सकें, अज्ञानी जन को दिव्य ज्ञान के महासागर की राह दिखाई जा सके और समझ के पिपासुजनों को दिव्य प्रज्ञा की सलसबील का अंश प्राप्त हो सके। अन्यथा, यह सेवक ऐसे अभिलेखों के उल्लेख को गम्भीर त्रुटि और शोचनीय सीमोल्लंघन मानता है।

68. इसी भाँति, जब ईसा के धर्मप्रकाशन का समय निकट आया तो, ईसा का नक्षत्र आकाश में प्रकट हो जाने की बात जानकर कुछ मेजाइयों ने उसकी तलाश की और उसका अनुसरण किया। यहाँ तक कि, उस नगर तक आ गये जो हिरोद के साम्राज्य की पीठिका थी। उसकी सर्वोच्चता का बहाव उन दिनों उस सम्पूर्ण देश में था।

69. इन मेजाइयों ने कहा: "कहाँ है वह जो यहूदियों का राजा बनकर उत्पन्न हुआ है ? क्योंकि हमने पूर्व में उसका नक्षत्र देखा है और उसकी आराधना करने हम आये हैं।"[47] खोज करने पर उन्होंने पाया कि जूडा देश के, बैतुल्लहम में, वह बच्चा जन्मा है। यह वह चिह्न था जो गोचर आकाश में प्रकट हुआ था। अदृश्य आकाश - दिव्य ज्ञान और विवेक का आकाश - के चिह्न के सम्बन्ध में, तो वह याह्या था, जकारिया का पुत्र जिसने लोगों को ईसा के प्राकट्य का सुसमाचार सुनाया। जैसाकि उसने भी प्रकट किया है, "परमात्मा तेरे प्रति याह्या की घोषणा करता है, जो ईश्वरीय वाणी की और एक महान तथा पवित्र व्यक्ति की साक्षी देगा।"[48] इस शब्द का तात्पर्य है ईसा जिनके आने की भविष्यवाणी याह्या ने की। इसके अतिरिक्त, दिव्य धर्मग्रन्थों में लिखा है: "बपतिस्मादाता जॉन जूडा के निर्जन में उपदेश कर रहे थे और कह रहे थे, तुम सब पश्चाताप करो: क्योंकि दिव्य-साम्राज्य निकट है।"[49] जॉन से तात्पर्य है याह्या।

70. इसी तरह, मुहम्मद का सौन्दर्य प्रकट होने के पूर्व गोचर आकाश के चिह्न प्रकट किये गये। अदृश्य आकाश के चिह्न के रूप में चार पुरूष प्रकट हुए जिन्होंने उत्तरोत्तर उस दिव्य प्रकाशस्रोत के उदय का आनन्दपूर्ण सुसमाचार लोगों को दिया। रूज़बेह, बाद में नाम सलमान, ने उनकी सेवा में रहने का सम्मान पाया। जब इनमें से एक का अंत निकट आता था, तो वह रूज़बेह को दूसरे के पास भेजता था। अन्त में चौथे ने, अपनी मृत्यु निकट जान कर रूज़बेह को इन शब्दों से सम्बोधित किया: "हे रूज़बेह! जब तू मेरे शरीर को लेकर उसे दफना दे, तो हिजाज जाना, क्योंकि वहाँ मुहम्मद का दिवानक्षत्र उदित होगा। तू सौभाग्यशाली है, क्योंकि तू उसके मुखड़े के दर्शन करेगा।"

71. और अब, इस अद्‌भुत तथा सर्वोदात्त धर्म के बारे में। तू सत्य जान कि अनेक ज्योतिषविदों ने गोचर आकाश में नक्षत्र निकलने की सूचना दी थी और धरती पर दो प्रकाशित नक्षत्र[50], अहमद और काज़िम रश्ती का प्राकट्य घोषित किया गया। इसी प्रकार, पृथ्वी पर अहमद और काजिम प्रकट हुए - वे देदीप्यमान प्रकाश - परमात्मा उनके विश्राम-स्थल को निर्मल करे।

72. हमने जो कुछ वर्णन किया है उस सबसे यह स्पष्ट और प्रकट होता है कि दिव्य सार को प्रतिबिम्बित करने वाले प्रत्येक दर्पण के प्रकटीकरण के पहले उनका अवतरण उद्घोषित करने वाले चिह्नों का दृश्य तथा अदृश्य आकाश में प्रकटित होना अवश्यम्भावी है। इन्हीं में ज्ञान के सूर्य की, विवेक के चन्द्रमा की समझ तथा वाणी के नक्षत्रों की पीठिका है। अदृश्य आकाश का चिह्न अवश्यमेव उस परिपूर्ण मनुष्य के स्वरूप में प्रकट होगा, जो प्रत्येक अवतार के प्रकट होने के पहले, मनुष्यों के मध्य ईश्वरीय एकता के प्रकाश दिव्य प्रकाशस्रोत के अवतरण के लिए मानव आत्माओं को शिक्षित तथा तैयार करता है।

73. और अब, उसके शब्दों के सम्बन्ध में: "और तब पृथ्वी की सारी जातियाँ संताप करेंगी और वे मनुष्य के पुत्र को शक्ति तथा अत्यंत भव्यता के साथ आकाश के बादलों से आते हुए देखेंगी।" ये शब्द सूचित करते हैं कि उन दिनों मनुष्य दिव्य सौन्दर्य के सूर्य की, ज्ञान के चन्द्रमा की और दिव्य विवेक के नक्षत्रों की हानि पर विलाप करेंगे। इस पर, वे उस प्रतिज्ञापित, सुशोभित सौन्दर्य के मुखड़े को निहारेंगे जो बादलों पर सवार होकर आकाश से उतरता होगा। इसका यह अर्थ है कि दिव्य सौन्दर्य ईश्वरेच्छा के आकाश से प्रकट होगा और मानव स्वरूप में प्रकट होगा। शब्द "आकाश" भव्यता तथा उच्चता को संकेतित करता है, क्योंकि वह पुरातन महिमा के दिवास्रोतों, पवित्रता के उन प्राकट्यों के प्रकटीकरण की पीठिका है। ये पुरातन सत्तायें अपनी माँ के गर्भ से पैदा होने के बावजूद, यथार्थ में ईश्वरेच्छा के आकाश से प्रकटित हुई हैं। भले ही वे इस पृथ्वी पर हों, किन्तु उनके सच्चे निवास-स्थान उच्चता के क्षेत्रों के महिमामण्डित विश्राम-गृह हैं। नश्वर प्राणियों के मध्य विचरण करते समय, वे दिव्य उपस्थिति के व्योम में उड़ान भरते हैं, पैरों के बिना वे चेतना के मार्ग पर चलते हैं और पंखों के बिना वे दिव्य एकता की उदात्त ऊँचाइयों में आरोहण करते हैं। प्रत्येक क्षण परम श्वांस के साथ ही, वे

अत्यधिक दूरी तय करते हैं और प्रतिक्षण वे दृश्य तथ अदृश्य के साम्राज्यों को पार करते हैं। उनके सिंहासनों पर लिखा है: ''ऐसा कुछ नहीं है जो उसको किसी अन्य वस्तु में व्यस्त होने से दूर रखे,'' और उनकी पीठिकाओं पर अंकित हुआ है: ''सत्यतः, उसके मार्ग प्रतिदिन भिन्न होते हैं।''[51] वे दिवसों के पुरातन के अनुभव के परे शक्ति के जरिए भेजे जाते हैं और उस सर्वसामर्थ्यशाली सम्राट परमेश्वर की उदात्त इच्छा द्वारा पाले-पोसे जाते हैं। ''आकाश के बादलों से आते हुए'' शब्दों का यही तात्पर्य है।

74. दिव्य प्रकाशस्रोतों के वचनों में ''आकाश'' शब्द अनेक और विविध संदर्भो के लिए प्रयुक्त हुआ है, जैसे ''आज्ञा का आकाश'', ''इच्छा का आकाश'', ''दिव्य प्रयोजन का आकाश'', ''दिव्य ज्ञान का आकाश'', ''निश्चय का आकाश'', ''वाणी का आकाश'', ''प्रकटीकरण का आकाश'', ''गोपनीयता का आकाश'' इत्यादि। प्रत्येक उदाहरण में उसने ''आकाश'' शब्द को एक विशेष अर्थ दिया है जिसका महत्व उनके सिवा और किसी को ज्ञात नहीं हैं, जिन्होंने दिव्य रहस्यों की ओर प्रारम्भिक पग बढ़ाया है, और अनश्वर जीवन के पात्र से पान किया है। उदाहरण के लिए वह कहता है: ''आकाश में तुम्हारे लिए आहार है, और उसमें वह है जिसका तुम्हें वचन दिया गया है।''[52] जबकि पृथ्वी ही आहार उत्पन्न करती है। इसी भाँति, कहा गया है: ''नाम आकाश से नीचे आते हैं,'' जबकि वे मनुष्यों के मुखों से बाहर आते हैं। तू यदि अपने हृदय का दर्पण दुर्भावना की धूल से स्वच्छ कर ले, तो तू प्रत्येक धर्मकाल में प्रकट की गई सर्वालिंगनकारी ईश्वरीय वाणी द्वारा प्रकटित एवं प्रतीकात्मक शब्दों का अर्थ समझ लेगा और दिव्य ज्ञान के रहस्यों को खोज लेगा। तथापि ऐसा नहीं है, कि जब तक तू परम अनासक्ति की ज्वाला से मनुष्यों के बीच प्रचलित निरर्थक ज्ञान के उन आवरणों को जला नहीं देता, तब तक तू सच्चे ज्ञान के देदीप्यमान प्रभात के दर्शन नहीं कर सकता।

75. सत्य ही यह जानो कि ज्ञान दो प्रकार का होता है: दिव्य तथा शैतानी। एक दिव्य प्रेरणा के निर्झर से निकलता है, दूसरा व्यर्थ और अस्पष्ट विचारों का प्रतिबिम्ब मात्र होता है। पहले का स्रोत स्वयं परमात्मा है और दूसरे का मनोबल, स्वार्थपूर्ण कामना की फुसफुसाहट। एक इस सिद्धांत से निर्देशित है: ''तुम परमात्मा से ड़रो,

परमात्मा तुम्हें शिक्षित करेगा।''[53] दूसरा सत्य की एक सम्पुष्टि मात्र: ''ज्ञान मनुष्य और उसके रचयिता के बीच सर्वाधिक दुःखद आवरण है।'' पहला, धैर्य, प्रबल कामना, सच्ची समझ और प्रेम का फल उत्पन्न करता है, जबकि दूसरा मात्र दर्प, व्यर्थाभिमान और छल-प्रपंच को ही जन्म देता है। पवित्रवाणी के उन स्वामियों के, जिन्होंने सच्चे ज्ञान के अर्थ की व्याख्या की है इस संसार में तमसावृत करने वाली इन कालिमापूर्ण शिक्षाओं की दुर्गंध को किसी विधि अनुभव नहीं किया जा सकता, ऐसी शिक्षाओं का वृक्ष अन्याय तथा विद्रोह के सिवा कोई परिणाम उत्पन्न नहीं कर सकता और घृणा तथा ईर्ष्या के अतिरिक्ति, कोई फल नहीं दे सकता। उसका फल घातक विष है, उसकी छाया भस्मकारी अग्नि है। कितना सुन्दर कहा गया है: ''अपने हृदय की कामना के परिधान से सुसज्जित रह और तू अन्य सारी लज्जा उतार फेंक, सांसारिक विद्वानों को निकल जाने का आदेश कर, चाहे कितना ही बड़ा उनका नाम हो।''

76. अतएव, हृदय को अवश्य ही मनुष्यों के कोरे कथनों से स्वच्छ, और प्रत्येक पार्थिव अनुराग से पवित्र किया जाये, ताकि वह दिव्य प्रेरणा के निगूढ़ अर्थों की खोज कर सके और दिव्य ज्ञान के रहस्यों का खजाना बन जाये। इसे इस प्रकार कहा गया है: ''वह जो हिम-धवल पथ पर चलता है और ''रक्ताभ स्तम्भ'' के पगचिह्नों पर चलता है वह तब तक अपना आवास नहीं प्राप्त कर सकता जब तक उसके हाथ उन सांसारिक वस्तुओं से रिक्त नहीं हो जाते जो मनुष्यों द्वारा लोभवश संभाले गये हैं। जो कोई भी इस 'पथ' पर चलता है उसके लिये यह परम आवश्यक है। जब तुम अपनी आँखों पर पड़े आवरण को उतार फेंकोगे तब इन शब्दों के सत्य को समझ सकोगे।

77. हम अपने विषय के उद्देश्य से परे हटे हैं। यद्यपि जो कुछ उल्लेख किया गया है वह केवल हमारे उद्देश्य की ही सम्पुष्टि करता है। परमेश्वर की सौगंध! संक्षेप में वर्णन की हमारी कितनी ही बड़ी इच्छा हो, किन्तु हम अनुभव करते हैं कि हम अपनी लेखनी को रोक नहीं सकते। हमने जो कुछ उल्लेख किया है उस सबके बावजूद, कितने ही असंख्य मोती हैं जो हमारे हृदय की सीपी से निकले नहीं हैं! आन्तरिक अर्थ की कितनी अप्सरायें हैं जो अभी तक दिव्य विवेक के अन्दर छिपी हुई हैं। कोई भी अभी तक उनके निकट नहीं पहुँचा है - ये अप्सरायें, ''जिन्हें किसी मनुष्य

और न ही किसी आत्मा ने पहले कभी स्पर्श किया है।''[54] जो कहा गया है और उनके होते हुए भी, प्रतीत होता है मानो हमारे उद्देश्य का एक शब्द भी नहीं बोला गया है और न ही एक भी चिह्न हमारे लक्ष्य के सम्बन्ध में प्रकाशित किया गया है। कब कोई निष्ठावान खोजी मिलेगा, जो तीर्थयात्री का आवरण धारण करेगा, जो हृदय की कामना का काबा देखेगा और बगैर कर्ण अथवा जिह्वा के दिव्य वाणी का रहस्योद्घाटन करेगा?

78. इन प्रभासित, इन परिणामपरक और स्पष्ट कथनों से, पूर्वोलिखित: पद ''आकाश'' का अर्थ इस तरह स्पष्ट और प्रत्यक्ष कर दिया गया है। अब उसके शब्दों के सम्बन्ध में, कि मनुष्य का पुत्र ''आकाश के बादलों से आयेगा।'' ''बादलों'' शब्द का अर्थ वे चीजें हैं जो मनुष्यों के तरीकों और इच्छाओं के विपरीत हैं। जैसा कि उसने पूर्व उद्धृत शब्द में प्रकट किया है: ''अक्सर जब कोई देवदूत तुम्हारी अपनी इच्छाओं के विरूद्ध उसे लेकर आया तो तुमने दम्भ में भरकर कुछ पर पाखंडी होने का आरोप लगाया और अन्य की हत्या कर दी।''[55] ये बादल एक अर्थ में नियमों का निरस्तीकरण और पहले की धर्म-व्यवस्थाओं को भंग करने, मनुष्यों के बीच प्रचलित अनुष्ठानों और रीति-रिवाजों का खंडन करने, निरक्षर निष्ठावानों को विद्वान विरोधियों से ऊपर उठाने का संकेत देते हैं। एक अन्य अर्थ में, वे खान-पान, निर्धनता तथा वैभव, यश और अपयश, निद्रा तथा जागृति और अन्य ऐसी चीज़ों को जो मानव मनों में संदेह उत्पन्न करती हैं उन्हें निकाल बाहर करती है, की मानव सीमाबद्धताओं वाले नश्वर मनुष्य की छवि में अनश्वर सौन्दर्य के प्राकट्य का अर्थ देते हैं। ऐसे सभी आवरणों को प्रतीक रूप में ''बादल'' कहा गया है।

79. ये ''बादल'' ही ज्ञान के आकाश तथा उन सबकी, जो पृथ्वी पर निवास करते हैं, समझ को छिन्न-भिन्न किये जाने का कारण बनते हैं। जैसाकि उसने प्रकट किया है: ''उस दिन आकाश बादलों द्वारा विदीर्ण कर दिया जायेगा।''[56] जैसे बादल मानव नेत्रों को सूर्य के दर्शन से रोक देते है, उसी प्रकार ये वस्तुये दिव्य दीप्ति-केन्द्रों से प्रकाश को पहचानने में मानवात्माओं को बाधा देती हैं। इसकी साक्षी वह देता है जो आस्थावानों के मुख से निकला है और जो पवित्र पुस्तक में प्रकट है: और

उन्होंने कहा है: "किस ढंग का देवदूत है यह ? वह खाना खाता है और सड़क पर चलता है। क्यों नहीं इसके साथ कोई फरिश्ता भेजा गया जो इसके साथ रहता और लोगों को धमकाता, हम विश्वास नहीं करेंगे।"[57] इसी भाँति, अन्य ईशदूत निर्धनता तथा कष्टों का, भूख का और इस संसार की बुराइयों और संयोगों का विषय रहे हैं। ये पवित्र विभूतियाँ ऐसी आवश्यकताओं और अभावों का विषय रहीं, परिणामतः लोग अविश्वासों तथा संदेहों के अरण्यों में भटक गये और व्याकुलता तथा व्यग्रता से पीड़ित हुए। उन्हें आश्चर्य हुआ कि परमात्मा ऐसे व्यक्ति को नीचे कैसे भेज सकता है, कैसे वह पृथ्वी के समस्त जनों तथा बान्धवों से बढ़कर अपनी श्रेष्ठता का बखान कर सकता है और स्वयं सारी सृष्टि का लक्ष्य होने का दावा कर सकता है। जैसाकि उसने कहा भी है: "अगर तू न होता, तो मैं उन सब की रचना न करता जो आकाश में तथा पृथ्वी पर हैं।" और इस पर भी ऐसी तुच्छ बातों का विषय बने? निःसंदेह रूप से तुम उन वेदनाओं, निर्धनताओं, दुर्व्यवहारों तथा अपमान से अवगत हुए होगे जो परमात्मा के प्रत्येक दूत तथा साथियों पर आ पड़ा है। तुमने अवश्य सुना होगा कि कैसे उनके अनुयायियों के सिरों को विभिन्न शहरों में बतौर उपहार भेजा गया; कैसे गम्भीर तरीके से उनके तथा जो उन्हें आदेश मिलता था उसके बीच अवरोध उत्पन्न किए गए। उनमें से प्रत्येक अपने धर्म के शत्रुओं के हाथों का शिकार बना, और जो आदेश उन्होंने दिया उसे भोगना पड़ा।

80. यह स्पष्ट है कि, प्रत्येक धर्मकाल में होने वाले परिवर्तन घने बादलों की संरचना करते हैं जो मानव समझ की दृष्टि से और दिव्य सार के दिवास्रोत से चमकने वाले दिव्य प्रकाशपुंजों के बीच अवरोध उत्पन्न करते हैं। विचार करो कि किस प्रकार पीढ़ी-दर-पीढ़ी मनुष्यों ने अपने पूर्वजों का अंधानुकरण किया और ऐसी विधियों तथा तौर-तरीकों के अनुसार वे प्रशिक्षित किए गये जिनकी स्थापना उनके धर्म के आदेशानुसार हुई। अतः इन मनुष्यों को यदि अचानक यह पता चले कि, एक पुरुष जो उनके बीच रहा है, जो प्रत्येक मानव सीमा के अन्तर्गत उनके समान रहा है, उनके धर्म द्वारा लागू किए गए प्रत्येक स्थापित सिद्धांत के उन्मूलन के लिए उठ खड़ा हुआ है - ऐसे सिद्धांत जिनके द्वारा वे सदियों तक अनुशासित रहे और जिसके प्रत्येक विरोधी तथा निषेधकर्ता को वे नास्तिक, दुराचारी तथा दुष्ट मानते आये हैं - तो निश्चित रूप से उनके सामने एक आवरण पड़ जायेगा और वे 'उसके' सत्य

को स्वीकारने में बाधित हो जायेंगे। ऐसी चीजें 'बादलों' की तरह होती हैं, जो उन लोगों की आँखों पर आवरण डाल देती हैं, जिनकी अन्तरात्मा ने 'सलसबील' का रसास्वादन नहीं किया है और ना ही ईश्वर के ज्ञान के 'कौसर' से रसपान किया है। इन परिस्थितियों से अवगत होने पर, ऐसे मनुष्य इतने अधिक आवरणयुक्त हो जाते हैं कि निशंक होकर वे ईश्वरावतार को नास्तिक घोषित करते हैं, और उसे मृत्युदण्ड तक देते हैं। पहले के सभी युगों में इन चीजों को घटित होते तुमने अवश्य सुना होगा और अब इन दिनों में उन्हें देख रहे हो।

81. अतः हमारे लिए यही योग्य है कि हम पूरा प्रयास करें, जिससे, परमात्मा की अदृश्य सहायता से, ये आवरण, ईश्वर द्वारा भेजी गई परीक्षाओं के ये बादल उसके ज्योतिर्मय मुखमण्डल के सौन्दर्य-दर्शन से हमें बाधित न कर सकें। अगर हम उसके सत्य का प्रमाण मांगें तो हम केवल एक से ही संतुष्ट हो जायें ताकि हम उसकी निकटता प्राप्त कर सकें जो अनन्त कृपा का निर्झर स्रोत है और जिसकी उपस्थिति में संसार की सारी सम्पदा निरर्थकता में समाहित हो जाती है, जिससे हम प्रतिदिन छिद्रान्वेषण करने से बच जायें और अपनी बातों पर ही अड़े न रहें।

82. कृपालु परमेश्वर! उस चेतावनी के होते हुए भी, जो भव्य प्रतीकात्मक भाषा तथा अत्यन्त श्रेष्ठ संकेतों में विगत दिवसों में उच्चरित हुई है और जिसका उद्देश्य संसार के लोगों को जगाना तथा उनको परमेश्वर की कृपा के लहराते महासागर से उनके अंश से वंचित होने से रोकना था, ऐसी चीजें घटित होती आई हैं जिनको पूर्व में ही प्रत्यक्ष देखा गया है। कुरआन में भी इन चीजों का उल्लेख किया गया है, जिसका दर्शन इन शब्दों में मिलता है: "इसके अतिरिक्त क्या आशा की जा सकती है कि परमात्मा बादलों के साये में अवतरित हो?"[58]

83. ईश्वरीय वचनों को दृढ़तापूर्वक थामे कुछ धर्मगुरूओं ने इस शब्द को उस अपेक्षित पुनर्जीवन का एक चिह्न माना है जो उनकी निरर्थक लालसा से उत्पन्न हुआ, इस तथ्य के बावजूद कि ऐसे ही संदर्भ अधिकांश दिव्य पुस्तकों में दिये गये हैं और आने वाले अवतार के चिह्नों से जुड़े सभी लेखांशों में अभिलिखित हैं।

84. इस प्रकार, वह कहता है: "उस दिन जब आकाश से प्रत्यक्ष रूप से धुआँ निकलेगा जो मानवजाति पर छा जाएगा, यह दुःखदायी यातना होगी।"[59] सर्वमहिमावान

ने इन चीजों की व्यवस्था दी है। ये दुष्टजनों की कामनाओं के विपरीत हैं। ये वह कसौटी और मानक होते हैं जिनसे वह अपने सेवकों को प्रमाणित करता है, ताकि दुष्टजनों में से सच्चे लोगों को पहचाना और नास्तिकजनों से निष्ठावानों को पृथक किया जा सके। प्रतीकात्मक शब्द "धुआँ" गम्भीर मतभेदों, मान्यता प्राप्त मानदण्डों के निरस्तीकरण तथा विनाश, और उनकी संकीर्ण मानसिकता वाले व्याख्याकारों के सम्पूर्ण नाश को सूचित करता है। उस धुँए से अधिक गहरा और शक्तिशाली कौन-सा धुआँ हो सकता है जिसने इस समय संसार के समस्त लोगों को ढँक लिया है, जो उनके लिए सन्तापदायी हो चुका है और जिससे वे अपने को मुक्त कर पाने में निराशापूर्वक असफल हैं, भले ही कितना अधिक वे प्रयास करें उनके भीतर प्रज्वलित स्वार्थ की यह अग्नि इतनी भयावह है कि प्रत्येक क्षण वे नई-नई यातनाओं से पीड़ित होते दिखाई देते हैं। जितना ही अधिक उन्हें बतलाया जाता है कि यह अद्‌भुत प्रभुधर्म, उस सर्वोच्च का प्रकटीकरण समस्त मानवजाति के लिये प्रकट किया गया है और यह प्रतिदिन महत्तर तथा बलवती होता जा रहा है, उनके हृदय की अग्नि-ज्वाला उतनी ही अधिक भयावह होती जाती है। जितनी ही अधिक वे अदम्य शक्ति, उत्कृष्ट परित्याग और परमात्मा के पवित्र सहचरों की अकम्पित स्थिरता देखते हैं, जो परमेश्वर की सहायता से, दिन-ब-दिन श्रेष्ठतर और अधिकाधिक शोभायुक्त होती जा रही है, उतनी ही अधिक व्याकुलता बढ़ती जाती है जो उनकी आत्माओं को विनष्ट करती है। ईश्वर का गुणगान हो, इन दिवसों में, उसकी शब्द-शक्ति ने मानवों पर ऐसा प्रभुत्व पाया है, कि वे कोई शब्द कहने का साहस नहीं करते हैं। यदि उनका सामना परमात्मा के किसी ऐसे सहचर से हो जाता है, जो यथाशक्ति स्वतंत्र तथा आनन्दभाव से, अपने प्रिय के निमित्त बलिदान स्वरूप दस सहस्त्र जीवन अर्पित कर देता, तो उनका भय इतना अधिक होता कि इसके बाद वे उस प्रिय में अपनी आस्था प्रकट करते, जबकि गुप्त रूप से वे उसके नाम को कलंकित और निन्दित ही करते। जैसाकि उसने प्रकट किया है: "और जब वे तुमसे मिलते हैं तो कहते हैं, 'हम विश्वास करते हैं, किन्तु जब वे अलग होते हैं तो रोष में आ कर अपनी उँगलियाँ चबाने लगते हैं। कहो: "अपने रोष में मरो;" परमात्मा तुम्हारे वक्षों के पोर-पोर तक को जानता है।"[60]

85. शीघ्र ही, तेरे नेत्र दिव्य शक्ति की क्षमताओं की ध्वजा को सभी क्षेत्रों में लहराते और उसकी विजयी सामर्थ्य तथा सर्वोच्चता के चिह्नों को प्रत्येक भू-भाग में प्रकट होते देखेंगे। अधिकांश धर्मोपदेशक इन शब्दों का अर्थ समझने में असफल रहे हैं, और पुनर्जीवन के दिवस का महत्व समझ नहीं पाये हैं। अतः उन्होंने मूर्खतापूर्वक अपनी कोरी तथा दोषपूर्ण अवधारणा के अनुसार इन शब्दों की व्याख्या की है। वह एकमेव सत्य परमेश्वर मेरा साक्षी है! प्रतीक रूप में लिखे इन दो शब्दों में निहित हमारी इच्छा को जानने के लिए तनिक ज्ञान की ही आवश्यकता है। इस प्रकार उस सर्वदयामय की कृपा से निश्चय के प्रभात का ज्ञान कराने की हमारी इच्छा है। बहा के लोक से आकाश का अमर पक्षी ऐसे सुमधुर स्वर तुम पर बिखेर रहा है कि ईश्वर की इच्छा से तुम दिव्यज्ञान और विवेक के मार्ग पर आगे बढ़ सको। इस प्रकार, उस सर्वदयामय की कृपा से, निश्चय के देदीप्यमान प्रभात का ज्ञान कराने की हमारी इच्छा है। दिव्य स्वर-माधुर्य के ये ऐसे गीत हैं जिन्हें बहा के सद्रिह पर गुनगुनाता आकाश का अमर पक्षी तुझ पर उड़ेलता है, जिससे, परमात्मा की अनुमति से, तू दिव्य ज्ञान तथा विवेक के पथ पर चल सके।

86. और अब, उसके शब्दों के सम्बन्ध में: "और वह अपने देवदूत भेजेगा।" देवदूतों से तात्पर्य है वे जो चेतना की शक्ति से प्रबलित होकर और ईश्वरीय प्रेम की अग्नि से समस्त मानवीय कामनाओं और सीमाओं को भस्मसात कर उदात्त देवदूतों और केरोबिन के गुणों के वस्त्र धारण कर चुके हैं। वह पावन पुरूष, सादिक[61] केरोबिन के अपने स्तुतिगान में कहते है: "हमारे सह-शियाओं का एक दल सिंहासन के पीछे खड़ा है।" "सिहांसन के पीछे" शब्दों की विविध और बहुअर्थी टीकाएँ हुई हैं। एक अर्थ में, संकेत दिया गया है कि सच्चे शियाओं का अस्तित्व ही नहीं है। एक लेखांश में कहा गया है: "सच्चा आस्थावान पारसमणि की भाँति है।" इसके बाद अपने श्रोताओं को सम्बोधित करते हुए उसने कहा है: "क्या तुमने कभी पारसमणि देखी है ?" विचार करो, किसी भी स्पष्ट वक्तव्य से अधिक प्रभावी यह प्रतीक भाषा किस प्रकार एक सच्चे आस्थावान की अस्तित्वहीनता को प्रमाणित करती है, भले वह वक्तव्य से कितना ही स्पष्ट क्यों न हो। ऐसा है सटिक का प्रमाण। और अब विचार करो, कितने अनुचित तथा अधिसंख्य हैं वे, जिन्होंने यद्यपि स्वयं विश्वास की सुरभि का आस्वादन नहीं किया है, किन्तु उनकी नास्तिक कहकर निन्दा की है जिनकी वाणी से "विश्वास" शब्द को मान्यता प्राप्त होती है।

87. और अब, चूँकि इन पवित्र प्राणियों ने स्वयं को प्रत्येक मानव की सीमा से मुक्त कर लिया है और आध्यात्मिक लोकों के उच्च गुणों से अपने को सम्पन्न कर लिया है और जो आशीर्वादितजनों के श्रेष्ठ लक्षणों से सुशोभित हैं, इसलिए उनको "देवदूतों" के स्थान से विभूषित किया गया है। ऐसा इन शब्दों का अर्थ है, जिनके प्रत्येक शब्द की व्याख्या मूलग्रन्थों, सर्वाधिक निर्णायक तर्कों, तथा सर्वोत्तम स्थापित साक्ष्यों की सहायता से की गई है।

88. जिस प्रकार ईसा के अनुयायियों ने इन शब्दों का निगूढ़ अर्थ कभी नहीं समझा, और वे चिह्न प्रकट नहीं हो सके जिनकी उन्होंने और उनके धर्म के नेताओं ने आशा की थी, इसलिये उन्होंने आज तक, पावनता के उन प्राकट्यों के सत्य को मानने से इन्कार किया है जो ईसा के दिनों में ही प्रकट किये जा चुके थे। इस प्रकार उन्होंने परमात्मा की पावन कृपा से और उसकी दिव्यवाणी से अपने को वंचित कर लिया है। पुनरूत्थान के इस दिवस में भी उनकी ऐसी दशा है। वे यह समझ पाने से चूक गये हैं कि यदि प्रत्येक युग के ईश्वरावतार के चिह्न दृश्य जगत में स्थापित पारम्परिक कथनों के मूल पाठ के अनुरूप प्रकट होते, तो सम्भवतः कोई अस्वीकार नहीं कर पाता या विमुख नहीं हो पाता और न आशीर्वादित जनों को सौभाग्यविहीन लोगों से, तथा उल्लंघनकारी को परमात्मा का भय रखने वालों से पृथक किया जा सकता। ईमानदारी से निर्णय करो: गॉस्पल में अभिलिखित भविष्यवाणियाँ यदि शाब्दिक रूप से पूरी होने वाली होतीं; मेरी-पुत्र ईसा यदि देवदूतों के साथ गोचर आकाश के बादलों से अवतरित होने को होते, तो कौन अविश्वास करने का साहस करता, कौन सत्य को अस्वीकार करने की हिम्मत रखता और अवहेलना का पात्र बनता ? नहीं, ऐसी व्याकुलता पृथ्वी के समस्त निवासियों को तुरन्त जकड़ लेती कि कोई आत्मा सत्य को स्वीकार या अस्वीकार करना तो दूर, एक शब्द बोलने का साहस नहीं कर पाती। इन सत्यों के मिथ्याबोध का ही कारण है कि अनेक ईसाई धर्मोपदेशकों ने मुहम्मद पर आपत्ति की है और ऐसे शब्दों में अपना विरोध मुखर किया है: "यदि सत्य ही तू प्रतिज्ञापित ईशदूत है, तो फिर क्यों वे देवदूत तेरे साथ नहीं है जिनकी भविष्यवाणी हमारी पवित्र पुस्तकों में है और जिनको अवश्यमेव उस प्रतिज्ञापित सौंदर्य के साथ, उसके धर्मप्रकाशन में उसकी सहायता करने और उसके लोगों को चेतावनी देने वालों के रूप में कार्य करने के लिए अवतरित होना आवश्यक था ?"

जैसाकि उस सर्वमहिमावान ने भी उनके कथन का उल्लेख किया है: "क्यों कोई देवदूत उसके पास नीचे नहीं भेजा गया है, जबकि एक चेतावनी देने वाला तो उसके साथ होता ?"[62]

89. प्रत्येक युग में ऐसी आपत्तियाँ और भेदभाव रहे हैं। लोग सदैव निरर्थक सम्भाषणों में व्यस्त रहे हैं, और व्यर्थ ही विरोध करते रहे हैं : "यह या वह चिह्न क्यों प्रकट नहीं हुआ है ?" ऐसी बुराइयाँ उनमें केवल इसलिए आईं कि जिस युग में वे रहे उसके धर्मोपदेशकों के मार्गों को अपनाये रहे और अनासक्ति के इन सारभूत स्वरूपों, इन पवित्र तथा दिव्य अस्तित्वों को स्वीकार अथवा अस्वीकार करने में उनकी अंधानुकृति की। स्वार्थपूर्ण कामनाओं में डूबे रहने और क्षणिक और अधम वस्तुओं से आसक्त रहने के कारण, इन नेताओं ने इन दिव्य प्रकाश के स्रोतों को अपने ज्ञान तथा बोध का विरोधी और अपने मार्गों तथा निर्णयों का शत्रु माना। उन्होंने ईश्वरीय वाणी की और "एकता के अक्षरों" के वचनों तथा पारम्परिक कथनों की शाब्दिक व्याख्या की और अपनी खुद की कम समझ के अनुसार उनका सविस्तार वर्णन किया, अतः उन्होंने अपने को और अपने सभी लोगों को परमेश्वर की कृपा तथा दयालुताओं की अनुग्रहमयी बौछारों से वंचित कर लिया। फिर भी वे इस सुप्रसिद्ध पारम्परिक कथन की साक्षी देते हैं : "सत्यतः हमारी वाणी गूढ़ है।" एक अन्य उदाहरण में कहा गया है: "हमारा धर्म अत्यन्त परीक्षणकारी, अत्यधिक व्यग्रतादायी है; स्वर्ग के किसी प्रियजन, या किसी प्रेरित ईशदूत, या जिसकी आस्था को परमात्मा ने जांचा है उसके अतिरिक्त अन्य कोई उसे धारण नहीं कर सकता।" धर्म के वे नेता यह स्वीकार करते हैं कि इन तीन विशिष्ट दशाओं में उन पर कोई लागू होने योग्य नहीं है। प्रथम दो दशायें प्रत्यक्ष ही उनकी पहुँच से परे हैं, तीसरी के सम्बन्ध में, यह स्पष्ट है कि किसी भी समय वे परमेश्वर द्वारा भेजे गये परीक्षण के मुकाबले प्रमाण नहीं रहे हैं और जब दिव्य कसौटी सामने आई तो उन्होंने अपने को तलछट के अतिरिक्त और कहीं भी नहीं पाया है।

90. महान ईश्वर! इस पारम्परिक कथन के सत्य को उनकी स्वीकृति के होते हुए भी, ये धर्मोपदेशक अभी तक संशयग्रस्त हैं और अपनी आस्था की आध्यात्म विद्या विषयक अस्पष्टताओं के सम्बन्ध में झगड़ते हैं। फिर भी ईश्वरीय विधान के मर्मों के ज्ञाता होने और उसकी पवित्र वाणी के सारभूत रहस्यों के व्याख्याता होने का

दावा करते हैं। बड़े विश्वास से वे बल देकर कहते हैं कि प्रत्याशित क़ाइम की सूचना देने वाले पारम्परिक कथन अभी तक परिपूर्ण नहीं हुए हैं, जबकि वे स्वयं इन पारम्परिक कथनों के अर्थ की सुरभि ग्रहण नहीं कर पाये हैं और अभी तक इस तथ्य से अनजान हैं कि पूर्व कथित सभी चिह्न आकर गुजर गये हैं, कि परमात्मा का पावन धर्म का मार्ग प्रकट हो गया है और वफादारों की मण्डली विद्युत जैसी तीव्रता से अभी तक उस मार्ग से जा रही है, जबकि ये मूर्ख धर्मोपदेशक पूर्वकथित चिह्नों को प्रत्यक्ष होते देखने की आशा लगाए बैठे हैं। "हे तुम मूर्खो! तुम सब भी उन्हीं की भाँति प्रतीक्षा करो जो तुमसे पहले से प्रतीक्षा कर रहे हैं।"

91. उनसे यदि उन चिह्नों के सम्बन्ध में पूछा जाये जो मुहम्मद के धर्मकाल के सूर्य के प्रकटीकरण तथा उदय की घोषणा के लिए आवश्यक हैं और जिनका हमने पहले उल्लेख किया है, जिनमें से कोई शाब्दिक रूप से पूर्ण नहीं हुआ है और उनसे यदि यह कहा जायेः "ईसाइयों और अन्य आस्थाओं के लोगों के दावों को कहाँ से तुमने अस्वीकार किया है और उन्हें नास्तिक माना है," तो क्या जवाब दिया जाये यह न जानते हुए, वे उत्तर देंगेः "ये पुस्तकें भ्रष्ट कर दी गई हैं और वे परमात्मा की नहीं हैं और न कभी रही हैं।" विचार करोः पदों के शब्द स्वयं ही इस सत्य का प्रमाण देते हैं कि वे परमात्मा के हैं। ऐसी एक आयत कुरआन में भी प्रकट की गई है, यदि तुम उसको समझने वालों में होते। मैं सत्य ही कहता हूँ, इस समूची अवधि में वे यह समझ पाने में पूरी तरह असफल हुए हैं कि मूल पाठ को भ्रष्ट करने का तात्पर्य क्या है।

92. हाँ, मुहम्मद के धर्मकाल के सूर्य को प्रतिबिम्बित करने वाले 'दर्पणों' के लेखों तथा कथनों में "उच्च प्राणियों द्वारा परिष्करण" तथा "घृणितजनों द्वारा परिवर्तन" का उल्लेख किया गया है। ऐसे लेखांश, विशिष्ट मामलों के संदर्भ में ही हैं! उनमें 'इब्न-ए-सूरिया' की कहानी है। जब ख़ैबर के लोगों ने मुहम्मदी धर्मप्रकाशन के प्रमुख केन्द्र से विवाहित पुरूष और विवाहित महिला के बीच हुए व्यभिचार की सजा के सम्बन्ध में पूछा, तो मुहम्मद ने उत्तर दिया और कहा: "परमात्मा का विधान पत्थरों से मार कर मृत्यु है।" इस पर उन्होंने विरोध करते हुए कहा: "तौरेत' में ऐसा कोई विधान प्रकट नहीं किया गया है।" मुहम्मद ने उत्तर देते हुए कहा: "तुम

अपने रब्बियों में किसे मान्यता प्राप्त अधिकारी और सत्य का निश्चित ज्ञान रखने वाला मानते हो?" वे इब्न-ए-सूरिया पर सहमत हुए। इस पर मुहम्मद ने उन्हें बुलाया और कहा: "जिस परमात्मा ने तुम्हारे लिए समुद्र को चीर डाला, तुम्हारे लिए खाने के सामान और तुम पर साया करने के लिए बादलों को उतारा, जिसने फिरऔन और उसके लोगों से तुम्हें छुटकारा दिया और तुम्हें सारे मानवों में उच्चता प्रदान की, उसकी शपथ देकर मैं तुझसे वह व्यवस्था बताने का आग्रह करता हूँ जो मूसा ने विवाहित पुरुष और विवाहित स्त्री के मध्य व्यभिचार के सम्बन्ध में दी है।" उन्होंने उत्तर दिया: "हे मुहम्मद! पत्थरों से मार कर मृत्यु का नियम है!" मुहम्मद ने मन्तव्य प्रकट किया: "फिर ऐसा क्यों है कि यह नियम रद्द है और यहूदियों के बीच व्यवहार में लाया जाना बन्द है ?" उन्होंने उत्तर में कहा: "जब बख्तनस्र ने यरूशलम को आग की लपटों में झोंका और यहूदियों को मार डाला, तब केवल थोड़े से लोग जीवित बचे। उस काल के धर्मोपदेशकों ने, यहूदियों की अत्यन्त सीमित संख्या और अमालिकों की बहुलता का विचार कर, आपस में परामर्श किया और इस परिणाम पर पहुँचे कि यदि उन्होंने तौरेत का विधान लागू किया तो बख्तनस्र के हाथ से बचे प्रत्येक उत्तरजीवी को पुस्तक के न्यायिक मतानुसार मार डाला जाना होगा। ऐसे विचारों के कारण, उन्होंने मृत्यु दण्ड को पूरी तरह से समाप्त कर दिया।" इसी बीच जेब्रीईल ने मुहम्मद के प्रकाशित हृदय को इन शब्दों से अभिप्रेरित किया: "वे ईश्वरीय वाणी के मूल पाठ में उलट-फेर करते हैं ?"[63]

93. जिनके विषय में उल्लेख किया गया है उनमें से यह एक उदाहरण है। सत्यतः मूलपाठ के उलट-फेर का तात्पर्य वह नहीं है जो इन मूर्ख और अधम आत्माओं ने अनुमान किया है। यहाँ तक कि कुछ लोगों की धारणा है कि यहूदी और ईसाई धर्मोपदेशकों ने पुस्तक से उन पदों को निकाल दिया है जो मुहम्मद के मुखमण्डल का गुणगान तथा महिमामण्डन करते हैं और उनके स्थान पर विपरीत शब्द सम्मिलित कर दिये हैं। कितने नितांत व्यर्थ और मिथ्या हैं वे शब्द ! क्या कोई मनुष्य, जो पवित्र पुस्तक में विश्वास करता है और उसे ईश्वर-प्रेरित मानता है, उसका अंग-भंग करेगा ? इसके अतिरिक्त, तौरेत को समस्त पृथ्वी पर विस्तार दिया गया था और वह मक्का तथा मदीना तक ही सीमित नहीं थी, जिससे वे

उसके मूलपाठ में उलट-फेर कर दें। नहीं, इसकी अपेक्षा, मूलपाठ की भ्रष्टता का तात्पर्य यह है जिसमें आज सारे मुस्लिम धर्मोपदेशक लगे हैं, वह है अपनी निरर्थक कल्पनाओं तथा व्यर्थ कामनाओं के अनुरूप परमात्मा की पवित्र पुस्तक का अर्थ-प्रकाशन। यहूदियों ने जिस प्रकार मुहम्मद के समय में, उनके प्राकट्य का सन्दर्भ देने वाले, तौरेत के उन पदों की व्याख्या अपनी ही कल्पना के अनुसार की और उसकी पवित्र वाणी से सन्तुष्ट नहीं हुए, अतः मूल पाठ को पलटने का आरोप उनके विरूद्ध लगाया गया। इसी प्रकार, यह स्पष्ट है कि, किस प्रकार इस दिवस में, कुरआन के लोगों ने परमात्मा की पवित्र पुस्तक के प्रत्याशित प्राकट्य के चिह्नों के सम्बन्धित मूलपाठ में उलट-फेर किया है और अपनी रूचि तथा कामनाओं के अनुसार उनका भावार्थ निकाला है।

94. और एक अन्य दृष्टांत में, वह कहता है: "उनके एक हिस्से ने ईश्वरीय वाणी को सुना, और तब, उसे समझ लेने के बाद, उसमें उलट-फेर कर दिया और जानते थे कि उन्होंने ऐसा किया" यह पद भी ईश्वरीय वाणी के अर्थ में बदलाव को प्रमाणित करती है उसके शब्द को मिटा देने पर नहीं इसके सत्य को प्रमाणित करते हैं वे जो मानसिक रूप से स्वस्थ हैं।

95. पुनः एक दूसरे दृष्टांत में वह कहता है: "विनाश हो उन लोगों का जो अपने हाथों से 'पुस्तक' की प्रतिलिपि स्वयं बनाते हैं और कहते हैं कि यह ईश्वर की ओर से है ताकि वे थोड़े पैसों में बेच सकें।"[64] यह पद यहूदी धर्म के उपदेशकों तथा नेताओं के सन्दर्भ में प्रकट किया गया था। ये धर्मोपदेशक, धनिकों को प्रसन्न करने के उद्देश्य से, सांसारिक सुविधाएँ प्राप्त करते थे और अपनी ईर्ष्या तथा मिथ्या विश्वास को हवा देते थे। मुहम्मद के दावों का खण्डन और ऐसे साक्ष्यों से जिनका उल्लेख अनुचित होगा, अपने तर्कों का समर्थन करते हुए, उन्होंने कई लेख लिखे और दावा यह किया कि ये तर्क तौरेत के मूलपाठ से लिए गए हैं।

96. यह बात आज सामने देखी जा सकती है। विचार करो कि इस अद्भुत प्रभुधर्म के विरूद्ध इस युग के मूर्ख धर्मोपदेशकों के लिखे निन्दा से भरे लेखों की संख्या कितनी अधिक है। कितनी अर्थहीन उनकी कल्पनाएँ हैं कि ये निन्दापूर्ण आक्षेप परमात्मा की पवित्र पुस्तक के पदों की अनुरूपता और समझदार मनुष्यों के कथनों की समानता दिखलाते हैं।

97. इन चीज़ों के वर्णन से हमारा प्रयोजन तुम्हें सावधान करना है कि यदि वे यह मान लेते कि वे पद जिनमें गॉस्पल के संदर्भित चिह्नों का उल्लेख है, उलट-फेर किये गये हैं, यदि वे उन्हें अस्वीकार करते और उनके बजाय दूसरे पदों तथा पारम्परिक कथनों को अपनाते तो तुम जान लेते कि उनके शब्द निरर्थक और झूठे और घोर निन्दक हैं। हाँ, हमने जिसका उल्लेख किया है उस अर्थ में मूलपाठ की "भ्रष्टता" विशेष दृष्टान्तों में वस्तुतः प्रभावी हुई है। इनमें से कुछ का हमने उल्लेख किया है कि प्रत्येक विवेकशील व्यक्ति को यह प्रत्यक्ष हो जाये कि थोड़े से अशिक्षित पवित्र 'पुरुषों' को मानवी ज्ञान का पूर्ण अधिकार दिया गया है, जिससे दुर्भावनाग्रसित विरोधी इस हठ से बाज आ सकें कि कोई एक पद मूल पाठ की भ्रष्टता सूचित करता है और यह बात धीरे-धीरे उकसाना बन्द करें कि 'हमने' ज्ञान के अभाव से ऐसी चीज़ों का उल्लेख किया है। इसके अतिरिक्त, मूलपाठ की भ्रष्टता सूचित करने वाले अधिकांश पद यहूदी लोगों के सन्दर्भ में प्रकट किये गए हैं, यदि तुम कुरआन के धर्मप्रकाशन के सूक्ष्म विषयों का अनुसंधान कर पाते।

98. हमने पृथ्वी के अनेक मूर्खजनों को यह कहते भी सुना है कि दिव्य गॉस्पल का वास्तविक मूलपाठ ईसाइयों के बीच विद्यमान नहीं है, कि वह आकाश में चला गया है। कितनी बड़ी भूल उन्होंने की है! यह तथ्य वह भूले हुए हैं कि ऐसा लक्षण एक कृपालु तथा प्रेमल विधाता के प्रति गम्भीर अन्याय है। जब एक बार ईसा के सौन्दर्य का दिवानक्षत्र उनके लोगों की दृष्टि से ओझल हो गया और चौथे आकाश में आरोहण कर गया था, तब परमात्मा उनकी पवित्र पुस्तक, उनके प्राणियों के बीच उनके सबसे बड़े साक्ष्य को, कैसे विलुप्त कर सकता था? ईसा का सूर्य अस्त होने से मुहम्मदी धर्मकाल के सूर्योदय तक उन लोगों के आश्रय को क्या रह जाता? कौन-सा विधान उनका सहारा और मार्गदर्शक होता? ऐसे लोग कैसे सर्वशक्तिमान प्रतिशोधी, उस परमेश्वर के प्रतिशोधपूर्ण कोप के शिकार बनेंगे ? कैसे वे उस दिव्य सम्राट के दण्ड के कोड़े से पीड़ित किये जायेंगे ? सबसे बढ़कर, कैसे उस सर्वानुग्रही की कृपा का प्रवाह रोका जा सकता था ? उसकी कोमल दयालुता का महासागर कैसे शांत किया जा सकता था ? हम उसके प्राणियों की उसके सम्बन्ध में कोरी कल्पना से दूर उसकी शरण में जाते हैं, वह इनकी समझ से परे परम उदात्त है।

99. प्रिय मित्र! अब जबकि परमात्मा के चिरस्थायी 'प्रभात' का प्रकाश उदित हो रहा है; जब उसके पवित्र शब्दों की चमक: ''परमात्मा आकाश और पृथ्वी का प्रकाश है''[65] की प्रभा समस्त मानवजाति पर प्रकाश प्रवाहित कर रही है; जब उसके मण्डप-वितान की अखंडता उसकी पवित्र वाणी: ''परमात्मा ने अपना प्रकाश परिपूर्ण करने की इच्छा की है''[66] द्वारा उद्घोषित की जा रही है और सर्वशक्ति का हाथ जो उसकी साक्षी दे रहा है: ''अपनी मुट्ठी में वह समस्त वस्तुओं का साम्राज्य धारण करता है'' तथा जिसे पृथ्वी की समस्त मावनजाति और बंधु-बान्धवों तक विस्तार दिया जा रहा है, तब हमें महाप्रयास की कमर कस लेनी चाहिये कि संयोग से परमात्मा की कृपा तथा अनुग्रह द्वारा, हम अलौकिक 'नगर' में प्रवेश पा सकें : ''सत्य ही हम परमात्मा के हैं, और उस उदात्त निवास स्थली में निवास कर सकते हैं: ''और उसी के पास हम वापस चले जाते हैं।'' परमात्मा की अनुमति से यह तुझ पर निर्भर है कि, सांसारिक वस्तुओं से अपने अन्तर्चक्षु निर्मल कर, जिससे तू दिव्य ज्ञान की असीमितता की अनुभूति कर सके और 'सत्य' को इतना स्पष्ट देख सके कि तुझे उसका यथार्थ प्रदर्शित करने के लिए किसी प्रमाण की और उसकी प्रामाणिकता के लिए साक्षी देने के लिए किसी साक्ष्य की आवश्यकता न पड़े।

100. हे स्नेहसिक्त अन्वेषी! तू यदि चेतना के पावन क्षेत्र में उड़ान भरे तो तू परमात्मा को प्रत्यक्ष और ऐसी विधि से समस्त वस्तुओं से ऊपर उदात्त पायेगा, कि तेरे नेत्र उसके अतिरिक्त अन्य किसी के दर्शन नहीं करेंगे। ''परमात्मा अकेला था, उसके सिवा अन्य कोई नहीं था।'' इतना उच्च है वह स्थान कि कोई साक्षी नहीं दे सकता, न कोई साक्ष्य उसके सत्य के प्रति न्याय कर सकता है। तू यदि सत्य के पावन प्रदेश की खोज करे तो तू देखेगा कि समस्त वस्तुएं केवल उसकी पहचान के प्रकाश से जानी जाती है, कि वह सदैव, अपने ही जरिए जाना जाने योग्य रहा है और सदैव रहेगा। और यदि तू प्रमाण चाहता है, तो उससे संतोष कर जिसे उसने स्वयं प्रकट किया है: ''उनके लिए क्या यह पर्याप्त नहीं है कि हमने तेरे लिए ग्रन्थ प्रकट किया है ?'' यही वह प्रमाण है जिसे स्वयं उसने आदेश दिया है, इससे बड़ा और कोई प्रमाण नहीं है, न कभी होगाः ''यह प्रमाण उसकी वाणी है, वह स्वयं है उसके सत्य का साक्ष्य।''

101. और अब, हम ''बयान'' के लोगों से, सभी विद्वानों, संतों, धर्मोपदेशकों और उनके बीच साक्षीजनों से विनती करते हैं कि वे अपनी-अपनी पुस्तक में प्रकटित कामनाओं तथा चेतावनियों को न भूलें। हर हाल में वे अपनी दृष्टि अपने धर्म के सार पर स्थिर करें, कहीं ऐसा न हो कि जब वह, जो सत्य का सारतत्व है, समस्त वस्तुओं का अन्तर्तम यथार्थ, समस्त प्रकाश का स्रोत प्रकट किया जाये तो वे पुस्तक के कुछ लेखांशों का आश्रय लें और उसके ऊपर वे आपत्तियाँ करें जो कुरआन की धर्मव्यवस्था काल में की गई थीं। क्यों, सत्य ही, वह, दिव्य सामर्थ्य का सम्राट, अपने विलक्षण शब्दों के एक अक्षर से सम्पूर्ण ''बयान'' और उसके लोगों की जीवन श्वांस दमित करने में समर्थ है और एक अक्षर से उनको एक नया तथा सर्वदा स्थाई जीवन प्रदान करने में और उनकी व्यर्थ तथा स्वार्थपूर्ण कामनाओं की कब्रों में से उन्हें बाहर तथा दुरतगति से निकालने में समर्थ है। ध्यान दो, और सचेत रहो, और याद रखो कि समस्त वस्तुओं की अपनी पूर्णता उसके विश्वास में, उसके दिवस की प्राप्ति में और उसकी दिव्य उपस्थिति की अनुभूति में है। ''अपने को पूर्व की ओर या पश्चिम की ओर उन्मुख करने में कोई पावनता नहीं है, बल्कि पवित्र वह है जो परमेश्वर और अंतिम दिवस में विश्वास करता है।''[67] हे बयान के लोगों, उस सत्य की ओर ध्यान दो जिसके प्रति हमने तुम्हें सलाह दी है ताकि शायद तुम परमात्मा के दिवस में सम्पूर्ण मानवजाति पर आच्छादित प्रभु कृपा की छाया तले शरण की तलाश कर सको।

भाग - 2

वस्तुतः वह जो सत्य का दिवानक्षत्र और सर्वोच्च सत्ता का प्रकटकर्ता है, सदासर्वदा उन सभी पर जो आकाश में तथा पृथ्वी पर हैं, निर्विवाद प्रभुत्व धारण करता है, यद्यपि; कोई व्यक्ति पृथ्वी पर उसकी आज्ञा मानने वाला न पाया जाये; वह सत्य ही समस्त पार्थिव साम्राज्य से स्वतंत्र है, यद्यपि वह पूर्णतः निस्सहाय हो। इस प्रकार हम तेरे निमित्त प्रभुधर्म के रहस्य प्रकट करते हैं और दिव्य विवेक की मणिमुक्तायें तुझे प्रदान करते हैं, कि संयोग से तू परित्याग के परों से उन ऊँचाइयों की ओर उड़ सके जो मानव-नेत्रों के लिए एक पर्दे से छिपी हुई हैं।

102. इन शब्दों का निहित महत्व और सारभूत प्रयोजन विशुद्ध हृदय और निर्मल चेतना युक्त जनों के समक्ष यह प्रकट करना है कि जो सत्य के प्रकाशस्त्रोत और दिव्य एकता को प्रतिबिम्बित करने वाले दर्पण हैं, वे किसी भी काल और युग में पुरातन महिमा के अपने अदृश्य निवासों से इस पृथ्वी पर, मानवात्माओं को शिक्षित तथा समस्त सृष्ट वस्तुओं को कृपावंत करने के लिए, अवतरित किए गए हैं, सत्यतः सर्ववशकारी शक्ति से सम्पन्न और अजेय परमोच्चता से विभूषित होते हैं। क्योंकि ये अप्रकट मणिमुक्तायें तथा अदृश्य निधियाँ इन पवित्र शब्दों का यथार्थ अपने में प्रकट तथा प्रमाणित करती हैं: ''वस्तुतः परमात्मा जो चाहता है वह करता है और जैसी उसकी इच्छा होती है वैसा वह विधान करता है।''

103. प्रत्येक विवेकशील तथा प्रकाशित हृदय के लिये यह स्पष्ट है कि वह अज्ञेय सार, वह दिव्य अस्तित्व, मानव के प्रत्येक लक्षण, जैसे दैहिक अस्तित्व, उत्थान तथा पतन, आगमन तथा प्रत्यागमन से परे अत्यन्त उदात्त है। उसकी महिमा से यह बहुत दूर है कि मानव जिह्वा उसका यथोचित गुणगान कर सके, या मानव हृदय उसके अथाह रहस्य को समझ ले। वह अपने सार की पुरातन अनंतता में छिपा है और सदा-सर्वदा स्थायी रूप से मनुष्यों की दृष्टि से अपने यथार्थ में छिपा रहेगा। ''कोई आँख उसे देख नहीं सकती, लेकिन वह सब को देख सकता है, वह सूक्ष्म, सर्वद्रष्टा है।''[68] ईश्वर से सीधा संसर्ग उसे उसके प्राणियों के साथ जोड़ नहीं सकता। समस्त संयोग तथा वियोग, सामीप्य तथा दूरत्व से परे वह उच्च है। कोई चिह्न

उसकी उपस्थिति या उसकी अनुपस्थिति को संकेतित नहीं करता, क्योंकि उसके आदेश के एक शब्द से वह सब, जो आकाश में तथा पृथ्वी पर है अस्तित्व में आये हैं, जो स्वयं आदि इच्छा है, सब कुछ परम शून्य से सत्ता के साम्राज्य में, दृश्य जगत में आये हैं।

104. कृपालु परमेश्वर! ईश्वर के शब्द और शब्दों से हुए सृजन के बीच किसी विद्यमान सम्बन्ध या सम्भावित सम्बन्ध का अनुमान भी कैसे किया जा सकता है ? ये शब्द ''परमात्मा तुम्हें स्वयं से सावधान रखेगा''[69] अचूक रूप से हमारे तर्क के यथार्थ की गवाही देते है, और ये शब्द: ''परमात्मा अकेला था, उसके अतिरिक्त अन्य कोई नहीं था।'' उसके सत्य के निश्चित प्रमाण हैं। परमात्मा के सभी ईशदूत और उनके प्रियजन, सभी धर्मोपदेशक, महात्मा तथा प्रत्येक पीढ़ी के बुद्धिमान जन, एक मत से समस्त सत्य के उस परम सार को समझने में अपनी असमर्थता को जानते हैं और जो समस्त वस्तुओं का अन्तरतम यथार्थ है उसे समझ पाने की अपनी अक्षमता को स्वीकारते हैं।

105. इस प्रकार ईश्वर के ज्ञान के कपाट समस्त प्राणियों के लिए बंद रखे गये हैं। असीम कृपालुता के उस स्रोत के कथन: ''उसकी कृपा समस्त वस्तुओं से बढ़-चढ़कर है; मेरी कृपा ने उन सभी को आवृत कर लिया है'' मानव काया के श्रेष्ठ स्वरूप में, पवित्रता की उन देदीप्यमान मणिमुक्ताओं को प्रकट किया है; इसलिये कि वे उस अपरिवर्तनीय सत्ता के रहस्य संसार के समक्ष उजागर कर सकें, उसके अविनाशी सार की उत्कृष्टताओं का वर्णन कर सकें। ये पवित्र दर्पण, ये प्राचीन भव्यता के दिवास्रोत, एक और सभी, पृथ्वी पर उसके व्याख्याता हैं जो ब्रह्माण्ड की केन्द्रीय सत्ता, उसका सार तथा उसका अन्तिम प्रयोजन है। ईश्वर से उनका ज्ञान तथा शक्ति अग्रसर होती है, ईश्वर से ही वे सर्वोच्चता प्राप्त करते हैं। उनके मुखमण्डल का सौन्दर्य ईश्वर की छवि का प्रतिबिम्ब मात्र है और उनका प्राकट्य ईश्वर की अनन्त भव्यता का प्रतीक है। वे दिव्य ज्ञान की निधियाँ और अलौकिक विवेक के भण्डार हैं। उनसे एक कृपा प्रवाहमान होती है जो कभी मंद नहीं होती है और उनके द्वारा जो प्रकाश प्रकट होता है वह कभी मंद नहीं पड़ सकता। जैसाकि उसने कहा भी है: ''तेरे और उनके मध्य कुछ भी अन्तर नहीं है, सिवा इसके कि वे तेरे सेवक है और

तुझसे रचित है।'' पारम्परिक कथन ''मैं हूँ वह, स्वयं, और वह मैं हूँ स्वयं'' का यही अर्थ है।

106. हमारे विषय से सम्बन्धित अनेक पारम्परिक कथन तथा वचन हैं, संक्षिप्तता के निमित्त हमने उन्हें उद्धृत नहीं किया है। यद्धपि, जो कुछ आकाश में है और जो कुछ पृथ्वी पर है वह उसके अन्दर परमात्मा के गुणों तथा नामों के प्रकटीकरण का प्रत्यक्ष प्रमाण है, क्योंकि प्रत्येक परमाणु में उस सर्वमहान प्रकाश के प्रकटीकरण का प्रमाण देने वाले चिह्न अन्तर्निहित हैं। मेरा विचार है कि उस प्रकटीकरण की शक्ति न होती तो कोई प्राणी कभी अस्तित्व धारण नहीं कर सकता था। कितने दीप्तिमान हैं ज्ञान के प्रकाशपुंज जो एक परमाणु में चमकते हैं, कितने विस्तारित हैं विवेक के वे महासागर जो एक बूंद के अन्दर लहराते हैं। प्रत्येक दृष्टि के मनुष्य के लिए यह सच है कि समस्त सृजित वस्तुओं में मात्र उन्हें ही इन उपहारों के परिधान से सुसज्जित किया गया है और ऐसी विशिष्ट भव्यता के लिए चुना गया है। परमात्मा के समस्त गुण तथा नाम उसमें सम्भावित रूप से प्रकट हैं इससे बढ़कर अन्य कोई प्राणी नहीं जान पाया है। ये सभी नाम-गुण उससे सम्बन्धित हैं। जैसाकि उसने कहा भी है: ''मनुष्य मेरा रहस्य है और मैं उसका रहस्य हूँ।'' समस्त दिव्य पुस्तकों तथा पवित्र धर्मग्रंथों में इस अत्यन्त उत्कृष्ट तथा उच्च विषय को व्यक्त करते हुये अनेक प्रकार के शब्द बार-बार प्रकट किये गये हैं। जैसाकि उसने भी प्रकट किया है: ''हम निश्चय ही उनको संसार में तथा उनके अन्दर अपने चिह्न दिखलाएँगे।''[70] फिर वह कहता है: ''और अपने आप में भी, तब क्या तुम परमात्मा के चिह्नों के दर्शन नहीं करते हो?''[71] और पुनः वह प्रकट करता है: ''और तुम उनकी भांति मत बनो जो परमात्मा को भूल जाते हैं और इसीलिए परमात्मा ने उनके अपने स्वत्व को भुलवा दिया है।''[72] इस सम्बन्ध में, उसने, जो शाश्वत सम्राट है - परमात्मा करे उन सबकी आत्मायें उस पर न्यौछावर हो जायें जो रहस्मय मण्डपवितान में निवास करते हैं। कहा गया है: ''जिसने अपने आपको जान लिया है उसने परमात्मा को जान लिया है।''

107. मैं परमेश्वर की सौगन्ध लेकर कहता हूँ, हे आदरणीय तथा सम्मानित मित्र! तू यदि इन शब्दों पर अपने हृदय में मनन करे, तो निश्चय ही तू अपनी आँखों के सम्मुख दिव्य विवेक तथा असीम ज्ञान के कपाट खुले पाएगा।

108. जो कुछ भी कहा जा चुका है उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि समस्त वस्तुएं, अपने अन्तर्तम यथार्थ में, अपने अन्दर परमात्मा के नामों तथा गुणों का प्रकटीकरण प्रमाणित करती हैं। अपनी-अपनी क्षमता के अधीन प्रत्येक ईश्वरीय ज्ञान का संकेत देती हैं तथा उन्हें व्यक्त करती हैं। इतना शक्तिशाली तथा सार्वभौम है यह प्रकटीकरण कि उसने समस्त दृश्य तथा अदृश्य वस्तुओं को आवृत कर लिया है। इसीलिए इसने प्रकट किया है: "तेरे अतिरिक्त क्या अन्य किसी में प्रकटीकरण की वह शक्ति है जो तेरे पास नहीं है, कि उसने तुझे प्रकट कर दिया होता ? प्रकाशविहीन है वह नेत्र जो तुझे देख नहीं पाता।" इसी प्रकार, उस शाश्वत सम्राट ने कहा है: "मैंने कोई वस्तु नहीं देखी है, सिवाय इसके कि मैंने उसमें परमेश्वर को देखा, उसके आगे परमेश्वर या उसके पीछे परमेश्वर।" कुमैल के पारम्परिक कथन में भी लिखा है: "देखो अनंतता के प्रभात से एक प्रकाश चमकता हुआ निकला है और अहा! उसकी वाणी समस्त मनुष्यों के अन्तर्तम यथार्थ में प्रवेश कर गई हैं।" समस्त सृष्ट वस्तुओं में सर्वश्रेष्ठ और सर्वाधिक परिपूर्ण, मनुष्य इस प्रकटीकरण की तीव्रता में उन सबसे बढ-चढ़कर है और उसकी महिमा की पूर्ण अभिव्यक्ति है। सभी मनुष्यों में, सर्वाधिक परिपूर्ण, सर्वाधिक विशिष्ट तथा सर्वाधिक उत्तम है 'सत्य-सूर्य' का प्राकट्य। बल्कि, इन अवतारों के अतिरिक्त और सब उसकी इच्छा से जीवित रहते हैं और गतिशील होकर उसकी कृपा से अपना अस्तित्व ग्रहण करते हैं। "अगर तू न होता तो मैं आसमानों की रचना न करता।" बल्कि, उनकी पावन उपस्थिति में सभी शून्यता में विलीन हो जाते और भुला दिये जाते। मानव-जिह्वा पूरी तरह उसका स्तुतिगान कदापि नहीं कर सकती और मानववाणी कदापि उसका रहस्योद्घाटन नहीं कर सकती। पावनता के मण्डपवितान, ये 'आदि दर्पण' जो कभी न खत्म होने वाली भव्यता का प्रकाश प्रतिबिम्बित करते हैं, मात्र उसकी अभिव्यक्तियाँ हैं जो अदृश्यों में अदृश्य है। दिव्य सद्गुण की इन मणियों के प्रकटीकरण के जरिए, परमात्मा के सारे नाम तथा गुण, जैसे ज्ञान तथा शक्ति, सर्वोच्चता तथा प्रभुत्व, दयालुता तथा विवेक, महिमा, अनुग्रह तथा अनुकम्पा प्रकट किए जाते हैं।

109. ईश्वर के ये गुण न तो कुछ अवतारों को विशेष रूप से दिये गये हैं और न ही किसी अवतार को इनसे वंचित किया गया हैं। परमात्मा के सभी अवतार उसके कृपापात्र

हैं, उसके पवित्र और प्रिय संदेशवाहक, बिना अपवाद के उसके नामों के संवाहक, और उसके गुणों के प्रतिबिम्ब हैं। वे केवल अपने प्रकटीकरण की गहनता में और अपने प्रकाश की तुलनात्मक क्षमता में भिन्न हैं। जैसाकि उसने भी प्रकट किया है: "कुछ देवदूतों को हमने दूसरों से श्रेष्ठ बनाया है।"[73] अतः, यह प्रकट और स्पष्ट है कि इन ईशदूतों और परमात्मा के प्रियजनों में उसके असीम नामों तथा उदात्त गुणों का प्रकाश प्रतिबिम्बित हुआ है, यद्यपि इनमें से कुछ गुण इन प्रकाशित काया से बाह्यरूप से प्रकट होकर मानव नेत्रों के सम्मुख आ सकते हैं या नहीं भी आ सकते हैं। परमात्मा का कोई गुण बाह्य रूप से अनासक्ति के इन सारस्वरूपों द्वारा प्रकटित नहीं हुआ तो इसका किसी प्रकार से यह अर्थ नहीं है कि उनमें जो परमात्मा के गुणों के दिवास्रोत और उसके पवित्र नामों की निधियाँ वास्तव में वह थी ही नहीं। अतः, इन प्रकाशित आत्माओं को, इन सौन्दर्य के मुखमण्डलों को, एक-एक कर प्रत्येक को, परमात्मा के सभी गुणों जैसे ज्ञान और शक्ति, प्रभुसत्ता और स्वामित्व और ऐसे ही अन्य गुणों से सम्पन्न किया गया है, भले ही बाहर से देखे जाने पर वे सम्पूर्ण पार्थिव वैभव से वंचित हों। प्रत्येक निर्णयकारी नेत्र के समक्ष यह स्पष्ट तथा प्रकट है, इसे न तो प्रमाण की अपेक्षा है और न ही साक्ष्य की।

110. हाँ, क्योंकि संसार के लोग दिव्यज्ञान के देदीप्यमान तथा स्फटिक निर्मल स्रोतों से परमात्मा के पवित्र शब्दों में अन्तर्निहित अर्थ ढूंढ पाने में विफल रहे हैं, वे निरर्थक इच्छा तथा पथभ्रष्टता की घाटी में अत्यन्त पिपासु रह गए हैं। वे निर्मल तथा प्यास को बुझाने वाले जल से दूर भटक गये हैं, और उस कड़वे लवण के चतुर्दिक घूम रहे हैं जो तेजी से गलता है। उनके सम्बन्ध में, अनंतता के कपोत ने कहा है: "अगर वे धार्मिकता की राह देखते हैं तो उसे अपनी राह के रूप में नहीं अपनाते; किन्तु अगर वे भ्रांति की राह देखते हैं तो उसे अपनी राह समझ कर अपना लेते हैं। यह इसलिये है कि वे हमारे चिह्नों को झूठा समझते हैं और उनके प्रति उदासीन रहे हैं।"[74]

111. इसे प्रमाणित करता है वह जिसे इस अद्‌भुत तथा उदात्त धर्म व्यवस्था में प्रत्यक्ष देखा गया है। करोड़ों पवित्र शब्द सामथ्र्य तथा अनुकम्पा के आकाश से अवतरित किए गए हैं फिर भी कोई उनकी ओर उन्मुख नहीं हुआ है, न ही उन मानव-शब्दों से जुड़े रहने से रुका है जो इन पवित्र शब्द के एक अक्षर को भी नहीं समझता,

जिन्होंने उन्हें बोला है। इसी कारण लोगों ने निर्विवाद सत्य को संदेह की दृष्टि से देखा और स्वयं को दिव्य ज्ञान के रिज़वान तथा अलौकिक विवेक के शाश्वत चारागाहों से वंचित कर लिया है।

112. और अब, इस प्रश्न के सम्बन्ध में फिर से हमारा तर्क है: ऐसा क्यों है कि पारम्परिक कथनों के मूलपाठ में प्रमाणित, तथा मुहम्मदी धर्मकाल के उज्ज्वल नक्षत्रों द्वारा परम्परा से चले आ रहे 'काइम' की सर्वोच्चता किंचितमात्र भी प्रकट नहीं की गई है ? बल्कि, विपरीत हुआ है। क्या उनके शिष्य तथा साथी लोगों से पीड़ित नहीं हुए ? क्या वे आज तक अपने शत्रुओं के भयावह विरोध के शिकार नहीं है ? क्या आज वे हीन दुर्बल नश्वरों का जीवन नहीं जी रहे हैं ? हाँ, 'कायम' को प्रदान की गई सम्प्रभुता और धर्मग्रन्थों में उसका वर्णन एक वास्तविकता है, जिसके सत्य में किसी को संदेह नहीं हो सकता। फिर भी, यह सम्प्रभुता वह सम्प्रभुता नहीं हैं, जिसकी मानव मस्तिष्क ने झूठी कल्पना कर ली है ? इसके अतिरिक्त, प्रत्येक प्राचीन ईशदूत ने, अपने युग के लोगों के प्रति आगामी धर्मप्रकाशन के अवतरण की घोषणा करते समय, बिना हेर-फेर के तथा विशेष रूप से उस सम्प्रभुता का संदर्भ दिया है जिसके अनुसार प्रतिज्ञापित अवतार अवश्य ही आयेगा। अतीत के धर्मग्रंथों के अभिलेखों से यह प्रमाणित है। यह सम्प्रभुता समग्र रूप से 'काइम' को नहीं दी गई है, बल्कि सम्प्रभुता तथा परमात्मा के अन्य समस्त नामों तथा गुणों के वर्णन का दायित्व उसके पहले तथा बाद के समस्त ईश्वरावतारों का रहा है और सदैव रहेगा क्योंकि ये अवतार, जैसाकि पहले कहा गया है, उस अदृश्य परमात्मा के गुणों के साकाररूप और दिव्य रहस्यों के प्रकाशक हैं।

113. इसके अलावा, सम्प्रभुता से तात्पर्य है सबको आवृत करने वाली वह सर्वव्यापी शक्ति जो अन्तर्निहित रूप से 'क़ाइम' द्वारा प्रयोग में लाई जाती है, चाहे वह संसार के समक्ष पार्थिव सम्प्रभुता की महिमा में प्रकट हुये हों या नहीं। यह स्वयं 'क़ाइम' की इच्छा तथा प्रसन्नता पर पूर्णतः निर्भर है। तुम तत्काल जान लोगे कि सम्प्रभुता, सम्पदा, जीवन, मृत्यु, निर्वाण तथा पुनरूत्थान, जैसे शब्द, जिनका प्राचीन धर्मग्रंथों में वर्णन हुआ है, वह ऐसे नहीं हैं जिसकी धारणा तथा व्यर्थ

कल्पना इस पीढ़ी ने की है। नहीं, सम्प्रभुता से तात्पर्य है वह प्रभुसत्ता जो प्रत्येक धर्मकाल में स्थापित होती है और जिसका प्रयोग उस विभूति द्वारा किया जाता है जो उस युग का अवतार होता है, दिवानक्षत्र होता हैं। वह प्रभुसत्ता आध्यात्मिक प्रभुत्व है जिसका वह सम्पूर्ण रूप से उन सभी पर उपयोग करता है जो आकाश तथा पृथ्वी पर हैं और जो उचित समय आने पर अपने को संसार के समक्ष उसकी क्षमता तथा आध्यात्मिक ग्रहणशीलता के सीधे अनुपात में प्रकट करता है, जैसे परमात्मा के संदेशवाहक मुहम्मद की प्रभुसत्ता जो अब भी लोगों के बीच प्रकट तथा प्रत्यक्ष है। तुम्हें भलीभाँति विदित होगा कि उनके धर्मकाल के प्रारम्भिक दिनों में उनके धर्म पर क्या बीती। उन नास्तिकों तथा दोषियों ने, उस युग के धर्मोपदेशक तथा उनके साथियों के हाथों उस आध्यात्मिक सार, उस अत्यन्त विशुद्ध तथा पवित्र प्राणी पर कैसी शोकपूर्ण आपदायें ढायीं गईं। कितने अधिक थे वे काँटे तथा पत्थर जो उसकी राह में बिछाये गये। यह स्पष्ट है कि अधम पीढ़ी ने, अपनी दुष्टतापूर्ण तथा शैतानी भावना के वशीभूत हो, एक स्थायी आनन्द की उपलब्धि के साधनस्वरूप, उस अनश्वर सत्ता को कष्ट दिया, क्योंकि उस युग के मान्यता प्राप्त धर्मोपदेशक, जैसे अबदुल्लाह-ए-उबेय, संयासी अबू-आमिर, काब-इब्न-ए-अशरफ और नज़्र-इब्न-ए-हारिस, सभी ने उनको पाखण्डी घोषित किया और उनको विक्षिप्त कहकर कलंकित किया। ऐसे तीखे आरोप उन पर लगाये जिनका वर्णन करने में ईश्वर ने कलम की स्याही को भी थाम लिया, हमारी कलम को चलने से रोक दिया गया और पृष्ठों ने भी इसका भार वहन करने से मना कर दिया। इन दुर्भावनापूर्ण दोषारोपणों ने आम जनता को विरोध में उठ खड़े होने और उन्हें यातना पहुँचाने के लिये उकसाया और कितनी भयावह होगी वह यातना जब उस युग के धर्माधिकारी ही सबसे बड़े भड़काने वाले और उकसाने वाले बन बैठे हों और अपने अनुयायियों के बीच से उसे निकाल दें और अधर्मी घोषित कर दें। क्या इस 'सेवक' पर भी वही नहीं बीता जिसे सबने देखा ?

114. इसी कारण मुहम्मद चीत्कार कर उठे थे: "किसी ईशदूत ने इतना कष्ट नहीं उठाया है जितना मैंने।" और क़ुरआन में उनके विरोध में की गई निन्दाओं तथा तिरस्कारों का उल्लेख है। साथ ही, उन कष्टों का भी, जो उन्होंने उठाये। तुम उसका प्रमाण दो, जिसके संयोग से तुम उससे अवगत हो सको जो उनके धर्मप्रकाशन पर बीता। इतनी करूणामय थी उनकी दशा, कि एक समय तो सभी ने उनके तथा उनके

साथियों के साथ मेलजोल रखना बन्द कर दिया। जिस किसी ने उनका साथ दिया, वह उनके शत्रुओं की निर्दयी क्रूरता का शिकार हुआ।

115. इस सम्बन्ध में हम उस पुस्तक की केवल एक आयत उद्धृत करेंगे। तू यदि विवेकपूर्ण नेत्र से उसे देखेगा, तो तू अपने जीवन के बाकी सारे दिन उस पीड़ित तथा सताये हुए ईश्वर के संदेशवाहक मुहम्मद की वेदना पर शोक तथा विलाप करेगा। वह आयत ऐसे समय पर प्रकट की गयी थी जब मुहम्मद लोगों के विरोध तथा अपनी अनवरत यातना के भार तले दुःखी हो निरूत्साहित से हो गये थे। उनकी पीड़ा के बीच सद्रतुल-मुन्तहा से पुकारती जिब्राईल की आवाज यह कहती सुनाई दी: "यदि उनका विरोध तेरे लिए पीड़ादायी हो, तो तू कर सके तो धरती में एक सुरंग या आसमान में एक सीढ़ी खोज निकाल।"[75] इस वाणी का गूढ़ार्थ है कि उनकी पीड़ाओं का कोई अन्त नहीं था, वे अपने हाथ उससे तब तक न हटायें जब तक कि वह धरती की गहराई के नीचे न छिप जायें, या आसमान की ओर अपनी उड़ान न भर लें।

116. विचार करो, आज कितना बड़ा परिवर्तन आया है। देखो! कितने सारे राजा-महाराजा उसके नाम के समक्ष घुटने टेकते हैं। कितने ही राष्ट्रों तथा साम्राज्यों ने उसकी छत्रछाया की शरण चाही है। वे उसके धर्म के प्रति भक्तिभाव रखते हैं और इसमें गर्व अनुभव करते हैं। प्रवचन-मंच के शीर्ष से आज प्रशंसा के शब्द गूँजते हैं जो परम दीनभाव से उसके आशीर्वादित नाम को महिमामण्डित करते हैं, और मीनारों की ऊँचाइयों से गूँजता आह्वान उनके लोगों के समूहों को उसकी उपासना के लिए बुलाता है। पृथ्वी के वे शासक जिन्होंने उसका धर्म अंगीकार नहीं किया और अविश्वास का परिधान नहीं उतारा, वे भी स्नेहिल सौजन्यता के साथ उस दिवानक्षत्र की महानता तथा अभिभूतकारी महिमा को स्वीकारते तथा मानते हैं। ऐसी उसकी पार्थिव प्रभुसत्ता है जिसके प्रमाण तो तू सब ओर देखता है। प्रत्येक ईश्वरावतार के जीवनकाल में अथवा उनके अपने दिव्य-आवास में आरोहण के बाद भी उसकी यह प्रभुता अवश्य ही प्रकटित और स्थापित होनी चाहिए। आज तू जो कुछ प्रत्यक्ष देख रहा है वह इसी सत्य की सम्पुष्टि मात्र है, तथापि वह आध्यात्मिक सम्प्रभुता, जो प्राथमिक रूप से वांछित है, अनन्त से अनन्त तक उनमें निवास करती है और उसकी परिक्रमा करती है, क्षणमात्र के लिए भी उनको कभी

त्याग नहीं सकती। उसके प्रभुत्व ने, जो कुछ धरती और आकाश में है, सबको परिव्याप्त कर लिया है।

117. सत्य के दिवानक्षत्र मुहम्मद द्वारा प्रदर्शित सम्प्रभुता का एक साक्ष्य निम्नांकित है: "क्या तूने नहीं सुना कि कैसे मात्र एक शब्द से उन्होंने अंधकार से प्रकाश को, अधर्मियों से धार्मिकों को और नास्तिकों से आस्थावानों को पृथक कर दिया ? निर्णय के दिवस से सम्बन्धित समस्त चिह्न तथा संकेत जिन्हें तूने सुना है जैसे मृतकों का उठ खड़ा होना, न्याय का दिवस, अंतिम निर्णय का दिन तथा अन्य उसी आयत के प्रकटीकरण के जरिए लाये गये हैं। ये प्रकटित शब्द सद्धर्मीजनों के लिए वरदान हैं जिन्होंने उनको सुनकर कहा था, "हे परमात्मन, हमारे स्वामिन! हमने सुना और आज्ञापालन किया है।" अधर्मियों के लिए वे अभिशाप थे जिन्होंने उन्हें सुनकर कहा था, "हमने सुना तथा विद्रोह किया है।" परमात्मा के कृपाण की भाँति तीक्ष्ण उन शब्दों ने नास्तिकों से आस्थावानों को पृथक कर दिया, और पुत्र से पिता को विलग कर दिया। तूने अपनी आँखों से देखा है कि उनमें अपनी आस्था रखने वालों तथा उनको नकारने वालों के बीच कैसे परस्पर युद्ध हुए हैं और उन्होंने एक-दूसरे की सम्पत्ति को हड़पने की कोशिशें की हैं। कितने ही पिता अपने पुत्रों से विमुख हो गये, कितने ही प्रेमियों ने अपनी प्रियतमाओं को त्याग दिया। परमेश्वर का यह अद्भुत कृपाण इतनी निर्दयता से तीक्ष्ण था कि उसने प्रत्येक रिश्ते को विदीर्ण कर डाला। दूसरी ओर, उनके शब्द की एक करने वाली शक्ति पर विचार करो। देखो, जिनके बीच स्वार्थ के शैतान ने वर्षों दुर्भावना तथा घृणा के बीज बोये थे वे इस अद्भुत तथा उत्कृष्ट धर्मप्रकाशन के प्रति अपनी भक्ति के जरिए ऐसे घुलमिल गए मानों वे एक ही कोख से उत्पन्न हुए हों। ऐसी होती है ईश्वरीय शब्द की बंधनकारी शक्ति, जो उनके दिलों को आबद्ध करती है; जिन्होंने उसके अतिरिक्त अन्य सभी कुछ का परित्याग कर दिया है, जिन्होंने उसके चिह्नों में विश्वास किया है और महिमा के हाथ से परमात्मा की पावन अनुकम्पा के कौसर का रसपान किया है और इसके अतिरिक्त, कितने अधिसंख्य हैं विविध विश्वासों के, संघर्षरत पंथों के तथा विरूद्ध स्वभावों के वे लोग, जो दिव्य बासन्तीकाल की पुनर्जीवनदायी सुरभि के जरिए परमात्मा के रिज़वान से श्वांस लेकर, दिव्य एकता के नव परिधान से अलंकृत हुए तथा हैं तथा जिन्होंने उसकी एकमेवता के प्याले से भरपूर पान किया है।

118. यह महत्व है सुप्रसिद्ध शब्दों का: "भेड़िया तथा मेमना एक साथ खायेंगे।"[76] उन लोगों की अज्ञानता तथा मूर्खता को देखो, जो प्राचीनकालीन राष्ट्रों की भाँति, अभी भी वह समय देखने की आशा कर रहे हैं जब जंगली जानवर एक चारागाह में साथ-साथ खायेंगे। ऐसी है उनकी निम्न दशा। ऐसा मालूम होता है कि उनके अधरों ने कभी भी समझ के प्याले का स्पर्श नहीं किया है और न ही उनके पग न्याय पथ पर चले हैं। इसके अतिरिक्त, ऐसी चीज घटित भी होती तो वह संसार के किस लाभ की होती? उन लोगों के सम्बन्ध में उसने कितना उचित कहा है: "हृदय हैं उनके, जिससे वे समझते नहीं और नेत्र हैं उनके, जिनसे वे देखते नहीं।"[77]

119. इस बात पर विचार करो कि किस प्रकार इस एक पद के साथ, जो ईश्वर की इच्छा के आकाश से उतरा है, यह संसार और जो कुछ भी इसमें है, उसका लेखा-जोखा उसके समक्ष प्रस्तुत किया गया। जिस किसी ने उसका सत्य स्वीकारा और उसकी ओर उन्मुख हुआ, उसके शुभकर्म उसके दुराचारों से अधिक महत्वपूर्ण बन गये, और उसके सारे पाप बिसरा दिये गये तथा क्षमा कर दिये गये। इसी से उसके सम्बन्ध में इन शब्दों का सत्य प्रकट किया जाता है: "न्याय में वह अचूक है।" इसी प्रकार ईश्वर अधर्म को सद्धर्म में बदलता है, यदि तू दिव्य ज्ञान की खोज करता तथा उसके विवेक के रहस्यों की थाह लेता। इस भाँति, जिसने प्रेम के प्याले का रसपान किया है, उसने शाश्वत कृपा के महासागर से, सदा स्थायी दयालुता के बादलों से अपना भाग ग्रहण कर लिया और दिव्य तथा सदास्थायी जीवन, विश्वास के जीवन में प्रवेश कर गया। किन्तु जो उस प्याले से विमुख हो गया उसे शाश्वत मृत्यु का दण्ड दिया गया। धर्मग्रंथों में जिसे "जीवन" और "मृत्यु" कहा गया है, इन शब्दों से विश्वास जीवन तथा अविश्वास मृत्यु है। जनसामान्य ने इन शब्दों का अर्थ ग्रहण कर पाने में असफल होकर अवतारी विभूति को अस्वीकार कर दिया और उससे घृणा की, उसके दिव्य मार्गदर्शन के प्रकाश से स्वयं को वंचित किया तथा उस अनश्वर सौन्दर्य के उदाहरण का अनुसरण करने से मना कर दिया।

120. कुरआन के धर्मप्रकाशन का प्रकाश जब मुहम्मद के पवित्र हृदय में प्रज्वलित हुआ, तब उन्होंने अंतिम दिवस का निर्णय, पुनरूत्थान का निर्णय, जीवन और मृत्यु का

निर्णय लोगों को दिया। इस पर विद्रोह के झण्डे फहरा दिये गये और उपहास के द्वार खोल दिये गये। परमात्मा की उस चेतना ने अधर्मियों द्वारा कहे गये शब्दों का इस प्रकार उल्लेख किया है: "और यदि तू कहे, 'मृत्यु के पश्चात निश्चय ही तुम सब पुनःजीवित किए जाओगे, "तो अनीश्रवादी निश्चित रूप से कहेंगे, "यह प्रकटतः जादू-टोना के अतिरिक्त कुछ नहीं है।"[78] पुनः वह कहता है: "यदि तुझे कभी अचम्भा होता हो, तो निश्चय ही उनका कथन अचम्भित करने वाला है, "क्या! जब हम धूल बन चुके हों, तो हमें एक नये सृजन में ढाला जायेगा ?"[79] इसी प्रकार, एक अन्य लेखांश में, वह रोषपूर्वक कहता है: "क्या हम प्रथम सृजन से थक कर चूर हैं ? फिर भी वे एक नूतन सृष्टि के सम्बन्ध में सन्देहग्रस्त हैं।"[80]

121. कुरआन के टीकाकारों ने और उन्होंने जो उसके शाब्दिक अर्थ पर चलते हैं, ईश्वरीय शब्दों के आंतरिक अर्थ को समझने और उनका सारभूत प्रयोजन ग्रहण करने में कामयाबी नहीं पाई है। अतः उन्होंने यह दर्शाने की राह पकड़ी कि व्याकरण के नियमों के अनुसार, जब शब्द "एज़ा" (अर्थात 'यदि' या 'जब') भूतकाल से पहले आता है, तो वह स्थायी रूप से भविष्यत् का अर्थ देता है। बाद में, पुस्तक के उन शब्दों की व्याख्या करने के प्रयास में वे अत्यन्त उद्विग्न हुए जिनमें वह शब्द वास्तव में आया ही नहीं। जैसाकि उसने भी प्रकट किया है: "और तुरही फूँक दी गई, - देखो! यह धमकी भरा दिवस है और प्रत्येक आत्मा एक लेखा-जोखा प्रस्तुत करने के लिए आहूत है - उसके साथ एक प्रोत्साहक और एक साक्षी है।"[81] इस तथा ऐसे ही अन्य पदों की व्याख्या में कुछ स्थलों पर उन्होंने तर्क दिया है कि 'एज़ा' शब्द अन्तर्भूत है। अन्य उद्धरणों में उन्होंने इस बात से संतोष कर लिया है कि जब निर्णय दिवस अपरिहार्य है तो उनका उल्लेख भविष्य की घटना के रूप में नहीं, बल्कि भूतकाल के रूप में किया गया है। कितनी व्यर्थ है सत्य की उनकी समझ! कितनी घातक है उनकी दृष्टिहीनता! वे तुरही के उद्घोष को ही पहचानने से मुकरते हैं जो इस मूलपाठ में बड़ी स्पष्टता से मुहम्मद के प्रकटीकरण के जरिए गूँजा था। वे उसमें श्वांस लेती पुनःजीवनदायनी ईश्वरीय चेतना से अपने को वंचित करते हैं और प्रेरक उससे, जो उसका एक सेवक मात्र है, तुरही को सुनने की मूर्खतापूर्ण आशा करते हैं! निर्णय के दिवस के देवदूत स्वयं प्रेरक और उसके तुल्य को क्या मुहम्मद की ही वाणी से निर्दिष्ट नहीं किया गया ? कहो! क्या जो तुम्हारे

भले के लिए है उसे क्या तुम उसके बदले में दे दोगे जो बुरा है? तुमने बदले में मिथ्यारूप से जो कुछ लिया है वह अधम है! निश्चय ही तुम ऐसे लोग हो, जो शोचनीय हानि में हो।

122. नहीं, ''तुरही'' से तात्पर्य है मुहम्मद के धर्मप्रकाशन की तुरही का आह्वान, जो दुनिया के दिलों में गूँजा और ''पुनरूत्थान'' से तात्पर्य है प्रभुधर्म के उद्घोष के लिए उनका स्वयं उठ खड़े होना। उन्होंने दोषीजनों तथा पथभ्रष्टों को उठाकर अपनी कायारूपी कब्रों से शीघ्र बाहर आने की आज्ञा दी, आस्था के सुन्दर परिधान से उन्हें सुसज्जित किया तथा एक नवीन और अद्भुत जीवन श्वांस से उन्हें सचेतन किया। इसलिए जिस समय उस दिव्य सौन्दर्य मुहम्मद ने प्रतीकात्मक शब्दों ''पुनरूत्थान'', ''निर्णय'', ''स्वर्ग'' और ''नरक'' में निहित एक रहस्य को उजागर करने का इरादा किया तो प्रेरणा-स्वर जिब्राईल को कहते सुना गया: ''शीघ्र ही वे तुझे अपनी सहमति देंगे और पूछेंगे, ''यह कब घटित होगा ?'' ''संयोग से वह समीप है।''[82] केवल इसी आयत में अन्तर्निहित अर्थ संसार के लोगों के लिए पर्याप्त होंगे, यदि वे अपने हृदयों में उसका मनन करें।

123. कृपालु ईश्वर! ईश्वरीय मार्ग से वे लोग कितनी दूर भटक गये हैं! यद्यपि, पुनरूत्थान दिवस का परिचय मुहम्मद के धर्मप्रकाशन के जरिए मिला, यद्यपि उनके प्रकाश तथा प्रतीकों ने पृथ्वी को और जो कुछ इसमें है उसे आवृत कर लिया था, फिर भी उन लोगों ने उनका उपहास किया, उन्होंने प्रतिमाओं के प्रति अपने को समर्पित किया जिनकी उस युग के धर्मोपदेशकों ने, अपनी व्यर्थ तथा निरर्थक कल्पना में, धारणा की थी और दिव्य कृपा तथा दिव्य दयालुता की बौछारों के प्रकाश से स्वयं को वंचित कर लिया था। हाँ, अधम महामूर्ख पावनता की सुरभि कभी नहीं ले सकता और अंधकार का चमगादड़ सूर्य के तेज का सामना कदापि नहीं कर सकता।

124. प्रत्येक ईश्वरावतार के दिवसों में ऐसी चीजें होती रहीं हैं। यहाँ तक कि ईसामसीह ने भी कहा था: ''तुम अवश्य ही पुनःजन्म लोगे।''[83] आगे वह कहते हैं: ''किसी मनुष्य का जन्म जब तक जल से तथा उस चैतन्य से न हो, वह परमात्मा के साम्राज्य में प्रवेश नहीं कर सकता।''[84] इन शब्दों का निहितार्थ यह है कि प्रत्येक

काल में जो कोई भी उस चैतन्य से जन्म लेता है और पावनता के प्राकट्य की श्वांस से सचेतन किया जाता है, वह वस्तुतः उनमें से है जिन्हें ''जीवन'' तथा ''पुनरूत्थान'' की सिद्धि हुई है और जिन्होंने परमात्मा के प्रेम के ''आकाश'' में प्रवेश पा लिया है और जो कोई उनमें नहीं है, वह मृत्यु तथा अपवचन से, अविश्वास की अग्नि से और परमात्मा के कोप से दण्डित होता है। सभी धर्मग्रंथों में, पुस्तकों तथा इतिहास में, मृत्यु की, अग्नि की, दृष्टिहीनता की, समझ तथा श्रवण के अभाव की सजा उनके विरूद्ध घोषित की गई है, जिनके होठों ने सच्चे ज्ञान के तेजोमय प्याले का आस्वादन नहीं किया है तथा जिनके हृदय अपने काल की पवित्र चेतना की कृपा से वंचित रह गये हैं। जैसाकि पहले ही लेखबद्ध किया गया है: ''ऐसे हैं हृदय उनके कि वे समझते नहीं हैं।''[85]

125. गॉस्पल के एक अन्य लेखांश में लिखा है: ''और ऐसा हुआ कि एक दिन ईसा के एक शिष्य के पिता की मृत्यु हो गई। ईसामसीह को अपने पिता की मृत्यु की सूचना देकर शिष्य ने जाकर उसे दफनाने की आज्ञा मांगी। इस पर अनासक्ति के उस सार, मसीह ने उत्तर दिया और कहा: ''मरे हुए को अपना मृतक दफनाने दो।''[86]

126. इसी भाँति, कूफे के दो व्यक्ति आस्थावानों के सेनापति अली के पास आये। एक के पास एक मकान था और वह उसे बेचना चाहता था, दूसरा उसका खरीदार था। वे इस बात पर सहमत हुए कि ये लेन-देन और इकरारनामे का लिखा जाना अली की जानकारी में हो। ईश्वरीय नियम के उस व्याख्याता ने, लिखने वाले को सम्बोधित कर कहा, तू लिखः ''एक मृतप्राय मनुष्य ने दूसरे मृतप्राय मनुष्य से एक मकान खरीदा। वह मकान चार सरहदों से घिरा है। एक का फैलाव मकबरे की ओर है, दूसरे का कब्र की गुफा तक, तीसरे का सिरात तक और चौथे का स्वर्ग या नरक तक।'' विचार करो, ये दो आत्माएं यदि अली के तुरही-आह्वान से सचेत हुई होतीं, यदि उनके प्रेम की शक्ति से वे भूल की कब्र से उठ गई होतीं, तो निश्चय ही उनके विरूद्ध मृत्यु का निर्णय घोषित नहीं किया जाता।

127. प्रत्येक युग तथा काल में परमात्मा के दिव्य दूतों तथा उनके प्रियजनों का प्रयोजन ''जीवन'', ''पुनरूत्थान'' तथा ''निर्णय'' शब्दों के आध्यात्मिक महत्व की पुष्टि के

अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं रहा है। यदि कोई अली के इस कथन पर अपने हृदय में क्षणमात्र भी विचार करे तो वह निश्चय ही ''मकबरा'', ''कब्र'', ''सिरात'', ''स्वर्ग'' और ''नरक'' शब्दों में दिये सभी रहस्यों को ढूंढ़ लेगा। किन्तु ओह! कितना विचित्र और दुःखद है! देखो, सभी लोग स्वार्थ की कब्र में कैद हैं और सांसारिक कामना की अधोतम गहराइयों में दफन पड़े हैं। यदि तू दिव्य ज्ञान के स्फटिक निर्मल जल की मात्र एक बूँद ग्रहण कर पाता, तो तू तुरंत यह अनुभूति कर लेता कि सच्चा जीवन मांस-मज्जा का जीवन नहीं, अपितु आत्मा का जीवन है। क्योंकि हाड़-मांस का जीवन मनुष्यों तथा पशुओं दोनों में समान है, जबकि आत्मा का जीवन केवल पवित्र हृदयी जनों के ही अधिकार में है जिन्होंने आस्था के महासागर से रसपान किया है और निश्चय के फल चखे हैं। यह जीवन किसी मृत्यु को नही जानता और यह अस्तित्व अमरत्व से सुशोभित होता है। जैसाकि कहा गया है: ''जो सच्चा आस्थावान है वह इहलोक तथा परलोक दोनों में जीता है।'' यदि ''जीवन'' से तात्पर्य इस पार्थिव जीवन से होता, तो यह स्पष्ट है कि मृत्यु अवश्यमेव इसे दबोच लेगी।

128. इसी प्रकार, समस्त धर्मग्रंथों के अभिलेख इस अत्युच्च सत्य और इस परमोदात्त शब्द की साक्षी देते हैं। इसके अतिरिक्त ''शहीदों के युवराज''[87] हम्ज़ा और अबू-जहल के सम्बन्ध में प्रकटित कुरआन की यह आयत हमारे कथन के सत्य का जगमगाता साक्ष्य और निश्चित प्रमाण है: ''ऐसा व्यक्ति जो पहले मृत था उसे हमने जीवित किया और उसे प्रकाश दिया कि वह प्रकाश लिये लोगों के बीच चलता-फिरता रहे। क्या वह उस व्यक्ति की तरह हो सकता है जो अंधकार में है और उससे बाहर नहीं निकल सकता ?''[88] यह आयत आदि इच्छा के आकाश से ऐसे समय अवतरित हुई जब हम्ज़ा विश्वास के पवित्र लबादे से पहले ही सुसज्जित हो गये थे और अबू-जहल में विरोध तथा अविश्वास की वृद्धि हो चुकी थी। सर्वसामर्थ्य के जलोद्गम और शाश्वत पावनता के स्रोत से, निर्णय आया, जिसने हम्ज़ा को सदास्थाई जीवन प्रदान किया और अबू-जहल को शाश्वत मृत्यु का दण्ड दिया। यही वह संकेत था जिसने अधार्मिकों के हृदय में अविश्वास की धधकती ज्वाला सुलगा दी और उसके सत्य को खुलकर नकारने के लिए उन्हें उकसाया। उन्होंने जोर-शोर से हो-हल्ला मचाया: ''हम्ज़ा कब मरे, वह कब जीवित हुए ? किस क्षण उनको ऐसा जीवन प्रदान किया गया ?'' चूँकि उन्होंने इन श्रेष्ठ कथनों

का महत्व नहीं समझा और न प्रभुधर्म के मान्यता प्राप्त व्याख्याताओं से ज्ञान की तलाश की, जबकि वे उनको दिव्य ज्ञान के कौसर की एक बूंद प्रदान कर सकते थे, इसलिए उपद्रव की ऐसी ज्वालाएँ मनुष्यों के बीच प्रज्वलित की गईं।

129. आज तो तू प्रत्यक्ष देख रहा है कि दिव्य ज्ञान के सूर्य की देदीप्यमान भव्यता के बावजूद सभी उच्च या निम्न व्यक्ति किस प्रकार अंधकार के अधिराज उस अधम से लिप्त हो गए हैं। वे निरन्तर, अपने धर्म की गूढ़ता के उद्घाटन में सहायता के लिए उनका चित्ताकर्षण कर रहे हैं और वे अपने ज्ञान की कमी के कारण ऐसे उत्तर देते हैं जो उनकी प्रशस्ति तथा सौभाग्य को हानि ना पहुंचा सके। यह स्पष्ट है कि महामूर्खों की भाँति ही दुष्ट और दीन इन आत्माओं ने अनन्तता के कस्तूरीयुक्त पवन का कोई अंश नहीं पाया और न उन्होंने दिव्य आनन्द के रिज़वान में प्रवेश ही किया है। अतः वे पावनता की अविनाशी सुरभि दूसरों को कैसे दे सकते हैं ? ऐसा है उनका मार्ग और सर्वदा ऐसा ही रहेगा। ईश्वरीय शब्द का ज्ञान केवल वही उपलब्ध करेंगे जो उसकी ओर उन्मुख हुए हैं और जिन्होंने निम्न गुणों के प्रदर्शन की भर्त्सना की है। इस विधि परमात्मा ने अपने धर्मप्रकाशन के दिवस के विधान की पुनर्पुष्टि की है और शक्ति की लेखनी से भव्यता के आवरण के नीचे छिपी गूढ़ पाती पर उसे अंकित किया है। तू यदि इन शब्दों पर ध्यान देता तो तू उनके अंतर्निहित अर्थ पर अपने हृदय में मनन करता, तू उन समस्त अव्यक्त समस्याओं का महत्व दृढ़ता से जान लेता जो, इस दिवस में, मनुष्यों तथा निर्णय-दिवस के ज्ञान के बीच अवरोध बन गई है। तब तेरे पास तुझे उद्विग्न करने वाले कोई प्रश्न नहीं होंगे। हम प्रसन्नतापूर्वक आशा करेंगे कि, परमात्मा ने चाहा तो, दिव्य दयालुता के महासागर के तटों से तू वंचित और पिपासु नहीं लौटेगा और न अपनी हार्दिक कामना के अविनाशी शरणालय से निराश्रित वापस आयेगा। तब तेरी खोज तथा प्रयासों की उपलब्धि देखी जानी है।

130. फिर से कहें तो, इन सत्यों को प्रस्तुत करने का हमारा उद्देश्य उसकी सर्वोच्चता को दर्शाना है जो सम्राटों का सम्राट है। उसके एक शब्दोच्चारण के जरिए अत्यंत व्यापक प्रभाव, और विस्मयकारी महिमा प्रकट की गई है। सच कहोः यह सर्वोच्चता श्रेष्ठ है या पृथ्वी के इन सम्राटों का साम्राज्य जिनको अपनी प्रजा के लिए अपनी चिन्ता और निर्धनों की सहायता के बावजूद, मात्र एक बाहरी तथा क्षणभंगुर राजभक्ति का ही आश्वासन प्राप्त है, जबकि मानव हृदयों में वे न तो स्नेह की प्रेरणा जगाते हैं और न सम्मान ही। उस सर्वोच्च प्रभुसत्ता ने क्या एक शब्द की

शक्ति से समस्त संसार को अधीनस्थ, सचेतन और पुनर्जीवित नहीं किया है? अधम धूल क्या उससे बराबरी कर सकती है जो सम्राटों का सम्राट है ? नहीं, सम्पूर्ण तुलनाएँ उसकी सर्वोच्चता के सिंहासन की प्राप्ति हेतु कम हैं। मनुष्य यदि विचार करे, तो निश्चय ही उसे बोध होगा कि उसकी देहरी के सेवक ही समस्त सृष्ट वस्तुओं पर शासन करते हैं। पहले भी इसके प्रमाण पाये गए हैं और भविष्य में भी यह प्रमाणित किया जायेगा।

131. आध्यात्मिक सम्प्रभुता का यह मात्र एक अर्थ है जिसे लोगों की क्षमता तथा ग्रहणशीलता के अनुरूप हमने व्यक्त किया है, क्योंकि सभी प्राणियों का संचालक, वह महिमावंत मुखमण्डल, ऐसी शक्तियों का स्रोत है जिन्हें न तो यह अत्याचार-पीड़ित प्रकट कर सकता है, और न ये अयोग्य लोग समझ सकते हैं। अपनी सर्वोच्चता में वह मनुष्यों की प्रशंसा से अत्यन्त उदात्त है और जिससे वे उसका सम्बन्ध जोड़ते हैं उससे परे वह महिमावंत है।

132. और अब, अपने हृदय में इस पर मनन करो: यदि आधिपत्य का तात्पर्य पार्थिव आधिपत्य और सांसारिक स्वामित्व से होता, अगर इसका अर्थ धरती के सभी लोगों की परतंत्रता और दिखावे की राजभक्ति से होता जिसमें प्रभु के प्रियतम प्रशंसित होते और शांति से रहते और प्रभु के शत्रु अवमानित और प्रताड़ित होते तो ऐसा आधिपत्य ईश्वर का नहीं, जो समस्त साम्राज्यों का अधिपति है जिसकी सम्प्रभुता और शक्ति का प्रमाण सभी वस्तुयें देती हैं। क्या तू नहीं देखता है कि सामान्य जनसमुदाय किस प्रकार उसके शत्रुओं के वर्चस्व के अन्तर्गत है ? क्या वे सब उसकी सद्कृपा के मार्ग से विमुख नहीं हैं ? क्या उन्होंने वही नहीं किया है जिसकी उसने मनाही की है ? और जिसकी उसने आज्ञा दी है उसे अधूरा छोड़ दिया है बल्कि उसका परित्याग तथा विरोध किया है। क्या उसके मित्र सदैव उसके शत्रुओं के अत्याचारों के शिकार नहीं रहे हैं ? ये सारी चीजें मध्यान्ह कालीन सूर्य के तेज से भी अधिक स्पष्ट और प्रखर हैं।

133. अतः जान लो, हे प्रश्न करने वाले अन्वेषी, कि ईश्वर तथा उसके प्रियजनों की दृष्टि में पार्थिव सम्प्रभुता का कोई मूल्य नहीं है और न कभी होगा। इसके अतिरिक्त, यदि प्रभुत्व तथा स्वामित्व की, पार्थिव सर्वश्रेष्ठता तथा सांसारिक शक्ति की

अर्थपरक व्याख्या की जाये, तो तेरे लिए इन शब्दों का अर्थप्रकाशन कितना असम्भव होगाः ''और सत्यतः हमारा दल विजयी होगा।''[89] ''ईश्वरीय प्रकाश को वे सानन्द क्यों बुझा देते: किन्तु परमात्मा ने अपना प्रकाश पूर्ण करने की इच्छा की है, भले ही अधर्मीजन उससे घृणा करें।''[90] ''समस्त वस्तुओं से ऊपर, वह प्रबल है।'' इसी प्रकार, अधिकांश कुरआन इस सत्य को प्रमाणित करती है।

134. इन मूर्ख तथा घृणित आत्माओं का निरर्थक मनोरथ यदि सच होने को होता, तो इन सब पवित्र कथनों तथा दिव्य संकेतों को अस्वीकार करना ही उनके पास एक विकल्प होता, क्योंकि अली के पुत्र, हुसैन से बढ़कर उत्तम और ईश्वर का निकटवर्ती कोई योद्धा पृथ्वी पर नहीं मिल सकता, ऐसे अद्वितीय तथा अतुलनीय थे वह। ''संसार में उनकी बराबरी या प्रतिद्वन्द्विता करने वाला कोई नहीं था।'' फिर भी, तूने अवश्य सुना होगा कि उन पर क्या बीती। ''अत्याचारी जनों के शीश पर परमात्मा का कोप हो।''[91]

135. ''और सत्यतः हमारा दल विजयी होगा'' शब्द की यदि शाब्दिक व्याख्या की जाये, जो स्पष्ट है कि वह किसी प्रकार से परमात्मा के प्रियजनों तथा उसके दल पर घटित होने योग्य नहीं होगी क्योंकि हुसैन ने, जिनका शौर्य सूर्य की भाँति प्रकट हुआ, परास्त और परवश होकर, 'ताफ़' की भूमि कर्बला में अन्ततः शहादत का प्याला पिया। इसी प्रकार पवित्र शब्द ''ईश्वरीय प्रकाश को वे सानन्द फूंक मार कर बुझा देते, किन्तु परमात्मा ने अपना प्रकाश पूर्ण करने की इच्छा की है, भले ही अधर्मीजन घृणा करें।'' शाब्दिक व्याख्या की जाये तो वह कभी सत्य के अनुकूल नहीं होगी। क्योंकि प्रत्येक युग में ईश्वरीय प्रकाश, बाहर से देखने पर, पृथ्वी के लोगों द्वारा बुझाया गया है और ईश्वरीय दीप उनके द्वारा बुझाये गये हैं। फिर इन दीपों के सर्वोच्च प्रभुत्व की कैसे व्याख्या की जाएगी ? कौन-सी चीज ''अपना प्रकाश पूर्ण करने'' की, ईश्वर की इच्छा को पूर्ण करने का संकेत देगी ? जैसाकि पहले भी देखा गया है, अधर्मियों का शत्रुभाव इतना प्रबल था कि, इन दिव्य प्रकाशस्त्रोतों में से किसी ने कोई शरणस्थल नहीं पाया, अथवा प्रशान्ति के प्याले का रसास्वादन नहीं किया। सत्ता के इन सारस्वरूपों पर छोटे-से-छोटे आदमी ने वह आघात किया जिनमें वह समर्थ हो सका। लोगों ने इन पीड़ाओं को देखा और

मापा है। अतः ऐसे लोग परमात्मा के इन शब्दों को, सर्वदा स्थायी महिमा के इन शब्दों को, समझने और उनकी व्याख्या करने में समर्थ कैसे हो सकते हैं ?

136. किन्तु इन शब्दों का अर्थ वह नहीं है जिसकी उन्होंने कल्पना की है। नहीं, ''प्रभुत्व'', ''शक्ति'' और ''प्राधिकार'' शब्द एक अलग ही स्थान तथा अभिप्राय रखते हैं। उदाहरण के लिए 'हुसैन के रक्त की उन बूँदों की व्यापक शक्ति पर विचार करो जो धरती पर गिरी थी। उस रक्त की पावनता और शक्ति के जरिए, उस धूल ने भी मनुष्यों के शरीरों तथा आत्माओं पर कैसी प्रभुता और प्रभाव डाला। इतना कि, जिसने अपनी बीमारियों से मुक्ति चाही, वह उस पवित्र भूमि की धूल छू कर निरोग हो गया और जिसने अपनी सम्पत्ति की रक्षा चाही पूर्ण विश्वास तथा समझ के साथ थोड़ी सी वह पावन माटी अपने घर में लाकर रखी, उसने अपनी सारी सम्पत्तियाँ सुरक्षित कर लीं। ये उसकी शक्ति के बाह्य प्राकट्य हैं। यदि हम उसके छिपे हुए गुणों का वर्णन करें तो वे निश्चित रूप से कहेंगे: ''सत्य ही उसने धूल को सम्राटों का सम्राट मान लिया है और परमात्मा के धर्म को त्याग दिया है।''

137. इसके अलावा, उन शर्मनाक हालात के बारे में सोचो जो हुसैन की शहादत के समय पैदा हो गये थे। उनके अकेलेपन के बारे में सोचो कि किस प्रकार प्रत्यक्षतः कोई भी उनकी सहायता के लिये आगे नहीं आया और उनको दफनाने वाला कोई साथी नहीं मिला, लेकिन आज के दिन कितने सारे लोग हैं जो धरती के सुदूरतम कोनों से आकर उनकी बलिदान-स्थली के दर्शन के लिए तीर्थयात्रा का वस्त्र धारण करते हैं, जिससे वहाँ उनकी समाधि की देहरी पर अपना माथा टेक सकें। ऐसी है परमात्मा की प्रभुता और शक्ति! ऐसा है उसके प्रभुत्व तथा महिमा का गौरव।

138. यह मत सोचो कि ये चीजें हुसैन के बलिदान के बाद घटित हुई हैं, इस तमाम यश का उनके लिए कोई लाभ नहीं रहा है, क्योंकि यह पावनात्मा अमर है, परमात्मा का जीवन जीती है और दिव्य पुनर्मिलन के सद्रिह पर दिव्य भव्यता के शरणस्थलों में निवास करती है। सत्ता के ये सार बलिदान के दमकते उदाहरण हैं। उस परमप्रिय के पथ में उन्होंने अपने जीवन, अपने सत्व, अपनी चेतना, अपना सब कुछ समर्पित किया है और करते रहेंगे। कितना ही उदात्त, अन्य कोई स्थान, उन्हें

उससे अधिक नहीं भा सकता, क्योंकि अपने प्रिय की सद्कृपा के अतिरिक्त प्रेमीजनों की अन्य कोई कामना नहीं होती और उससे पुनर्मिलन के सिवाय अन्य कोई लक्ष्य नहीं होता।

139. अगर 'हम' तुम्हें हुसैन की शहादत के रहस्य की एक झलक दिखलाना चाहें और उसके फल तुम्हारे समक्ष प्रकट करना चाहें तो ये पन्ने कम पड़ जायेंगे और इसके अर्थ कभी ख़त्म नहीं हो पायेंगे। हमारी आशा है कि, अगर ईश्वर ने चाहा तो दया की बयार बहेगी और दिव्य बसंतकाल अस्तित्व के वृक्ष को एक नये जीवन के वस्त्र से सुसज्जित करेगा, ताकि हम दिव्य विवेक के रहस्यों को जान पायें और 'उसकी' दूरदर्शिता के सहारे सभी वस्तुओं के ज्ञान से स्वतंत्र कर दिये जायें। अभी तक हमने मुट्ठी भर लोगों के सिवाय और किसी को नहीं देखा, जो सभी सम्पदाओं से वंचित थे, जो इस स्थान को प्राप्त कर सके हैं। भविष्य को यह रहस्योद्घाटन करने दो कि ईश्वर का न्याय क्या आदेश देगा और उसके आदेश का मण्डपवितान क्या प्रकट करेगा। इस प्रकार हम तुम्हें ईश्वर के धर्म के आश्चर्य बतलाते हैं और तुम्हारी श्रवणेन्द्रियों के लिये सुमधुर स्वर-लहरी की तान छेड़ते हैं, ताकि शायद तुम सच्चे ज्ञान की स्थिति को प्राप्त कर सको और उसके फल का रसास्वादन कर पाओ। अतः, तुम इस वास्तविकता को जानो कि दिव्य प्रभुत्व की ये 'विभूतियां' उनका निवास धूल में ही क्यों न हो फिर भी वे, उच्चाकाश की महिमा के आसन पर निवास करती हैं। यद्यपि वे सभी भौतिक सम्पदाओं से विहीन हों, लेकिन अनन्त समृद्धि के बीच उड़ान भरते रहे। जब वे शत्रु के चंगुल में फंसे तब भी दिव्य साम्राज्य और शक्ति की दाहिनी भुजा पर विराजमान रहे। उनके अपमान के अंधियारे के बीच भी कभी न बुझने वाली महिमा का प्रकाश उन पर जगमगाता रहा और उनकी असहाय अवस्था में भी अजेय सम्प्रभुता के संकेतों की वर्षा होती रही।

140. इसी तरह मेरी के पुत्र ईसा, जिस समय वे एक दिन विराजमान पावन चैतन्य का मधुर गान कर रहे थे, तब उन्होंने ये शब्द कहे: "हे लोगो, मेरा आहार मैदान की घास है जिससे मैं अपनी भूख शान्त करता हूँ। धूल मेरा बिस्तर है, रात की चांदनी मेरा दीपक है और मेरे अपने पैर मेरा वाहन हैं। देखो, धरती पर मुझसे अधिक धनवान कौन है ?" ईश्वर की शक्ति की सौगंध! सहस्त्रों सम्पदायें इस अकिंचनता की परिक्रमा करती हैं और गरिमा के लाखों साम्राज्य ऐसे अनादर की कामना

करते हैं। तू यदि इन शब्दों में अन्तर्निहित महासागर की एक बूंद भी प्राप्त कर ले, तो निश्चय ही तू संसार और उसके सर्वस्व का परित्याग कर देगा और उस अमर पक्षी की भाँति कभी न बुझने वाली अग्नि की लपटों में अपने को भस्मसात कर देगा।

141. इसी भाँति कहा जाता है कि किसी दिन, सादिक के एक साथी ने उनके आगे अपनी दरिद्रता की शिकायत की। इस पर उस अनश्वर सौन्दर्य सादिक ने उत्तर दिया: "सत्य ही तू धनवान है और तूने अमिट सम्पदा का घूँट पिया है।" उस देदीप्यमान मुखमण्डल द्वारा उच्चरित शब्दों से दरिद्रता की मारी उस आत्मा को बड़ी व्याकुलता हुई और बोली: "कहाँ हैं मेरी नियामतें, मैं तो एक-एक पैसे को मोहताज हूँ ?" इस पर सादिक ने कहा, "क्या हमारा प्रेम तेरे पास नहीं है ?" उसने उत्तर दिया: "हाँ, वह मेरे पास है, हे ईशदूत की संतान!" और सादिक ने यह कहते हुए उससे पूछा: "तू एक हजार दीनारों से इस प्रेम का विनिमय कर ले ?" उसने उत्तर दिया: "नहीं, मैं कदापि उसका विनिमय नहीं करूंगी, चाहे संसार और जो कुछ उसमें है वह सब मुझे दे दिया जाये।" तब सादिक ने कहा: "जिसके पास ऐसा खजाना है उसे निर्धन कैसे कहा जा सकता है ?"

142. यह निर्धनता और यह धनाढ्यता, यह तिरस्कार और गौरव, यह प्रभुता, शक्ति इत्यादि, जिन पर इन व्यर्थ तथा मूर्ख आत्माओं के नेत्र और हृदय जमे हैं - यह सारी वस्तुएँ उस सभामण्डप में नितान्त शून्यता में विलीन हो जाती हैं। जैसाकि उसने कहा है: "हे मनुष्यों! तुम ईश्वर के मोहताज हो, ईश्वर सर्वाधिक सम्पन्न, सर्वस्तुत्य है।"[92] अतः "सम्पदाओं" से तात्पर्य परमात्मा के अतिरिक्त अन्य सब पर अनिर्भरता और "निर्धनता" से, उन वस्तुओं का अभाव है जो परमात्मा की है।

143. इसी प्रकार से, तू उस दिन का स्मरण कर, जब यहूदी, जिन्होंने मरीयम-पुत्र ईसा को घेर लिया था, उन पर मसीह और ईश-दूत होने के अपने दावे की अपराध-स्वीकृति के लिए दबाव डाल रहे थे, ताकि वे उनको अधर्मी घोषित कर मृत्युदण्ड दे सकें। वह जो दिव्य धर्मप्रकाशन का दिवानक्षत्र था, उसको वे पिलाटे और कैफास के पास ले गये जो उस युग के अग्रणी धर्मगुरू थे। सभी प्रमुख धर्मयाजक उस महल में एकत्र हुए, लोगों की भारी भीड़ उनके कष्ट देखने, उन्हें अपमानित

तथा आहत करने के लिए जमा हो गई थी। यद्यपि उन्होंने बारम्बार उनसे सवाल किये, इस आशा से कि वह अपना दावा कबूल कर लें, फिर भी ईसा शान्त रहे और नहीं बोले। अंत में, ईश्वर का एक अभिशापित उठा और ईसा के निकट आकर, सौगन्ध देकर उनसे पूछा: "क्या तूने दैवीय मसीहा होने का दावा नहीं किया ? क्या तूने नहीं कहा, मैं सम्राटों का सम्राट हूँ, मेरा शब्द परमात्मा का शब्द है और मैं विश्राम दिवस का भंजक हूँ ?" तब ईसा ने अपना शीश उठाया और कहा, "क्या तू मानव-पुत्र को शक्ति तथा सामर्थ्य के दायें बाजू में बैठा नहीं देखता ?" ये थे उनके शब्द और फिर भी, विचार करो कि कैसे बाहर से दिखायी देते हुए वह सारी शक्ति से रहित थे सिवा उस अनन्त शक्ति के जो परमात्मा की थी और जिसने सभी कुछ अपने आपमें समाहित कर लिया था जो कुछ आकाश में तथा पृथ्वी पर है। इन शब्दों को बोलने के बाद उन पर जो कुछ बीता उसका वर्णन मैं कैसे कर सकता हूँ? उनके प्रति उन लोगों के अत्यन्त नीचतापूर्ण व्यवहार का वर्णन कैसे करूँ ? अन्त में उन्होंने उनकी आशीर्वादित काया पर ऐसे दुःख उड़ेल दिये कि चौथे आकाश की ओर उन्होंने आरोहण किया।

144. संत लूका के अनुसार गॉस्पल में यह उल्लेख है, कि एक दिन ईसा एक यहूदी के पास से गुजरे जो पक्षाघात का रोगी था और एक बिस्तर पर लेटा हुआ था। यहूदी ने जब उनको आते देखा तो उन्हें पहचान लिया और सहायता के लिए चिल्लाया। ईसा ने उससे कहाः "अपनी शैय्या से उठ, तेरे पाप क्षमा किये जाते हैं।" निकट खड़े कुछ यहूदियों ने यह कहते हुए विरोध किया: "सिवा एक ईश्वर के, पापों को कौन क्षमा कर सकता है ?" ईसा ने उत्तर देते हुए उनसे कहा: "पक्षाघात के रोगी को क्या यह कहना कि अपनी शैय्या से उठ और चल, आसान है, अथवा यह कहना कि तेरे पाप क्षमा किये जाते हैं ताकि तू जान सके कि मनुष्य के पुत्र को पृथ्वी पर पापों को क्षमा करने की शक्ति प्राप्त है।"[93] यह वास्तविक सर्वोच्चता है और परमात्मा के प्रियजनों की ऐसी शक्ति है। इन सारी चीजों का जिनका हमने बार-बार उल्लेख किया है और उन विस्तारों का जिन्हें विविध स्रोतों से हमने उद्धृत किया है, इसका प्रयोजन तुझे परमात्मा के प्रियजनों के वचनों के संकेतों को ग्रहण करने के योग्य बनाने के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं है, ताकि ऐसा न हो कि इनमें से कुछ वचन तेरे कदमों को भटका दें और तुझे निराश कर दें।

145. इस प्रकार हम अटल पगों से निश्चय के पथ पर चलें कि संयोग से परमात्मा की सद्कृपा के चारागाहों से प्रवाहमान प्रातःसमीर हम पर दिव्य स्वीकृति की मधुर रसानुभूति प्रवाहित कर दे, हम नश्वर प्राणियों को, शाश्वत प्रभूति का साम्राज्य प्राप्त करा दे। तब तू पारम्परिक कथनों तथा धर्मग्रंथों में बतायी गई सर्वोच्चता तथा ऐसी ही चीजों का दिव्य अर्थ समझेगा। इसके अतिरिक्त, यह तुझे पहले ही स्पष्ट तथा ज्ञात है कि यहूदी तथा ईसाई जिन चीजों से जुड़े हैं, जो झूठे आक्षेप उन्होंने मुहम्मद के सौन्दर्य पर लगाये हैं, उन्हीं का इस दिवस में कुरआन के लोगों ने समर्थन किया है और "बयान के बिन्दु" की सार्वजनिक भर्त्सना में वे दिखाई दिये हैं - परमात्मा करे उन सबकी आत्मायें जो दिव्य धर्मप्रकाशनों के साम्राज्य में निवास करती हैं उन पर न्यौछावर हों। उनकी मूर्खता तो देखो: वे प्राचीन काल के यहूदियों द्वारा कहे गये उन्हीं शब्दों का उच्चारण करते हैं और उसे जानते तक नहीं हैं। उनके सम्बन्ध में उसके शब्द कितने उत्तम तथा सत्य हैं: "उन्हें अपने मिथ्या आक्षेपों से अपने को बहलाने के लिए छोड़ दो।"[94] "तुम्हारी कसम हे मुहम्मद! वे अपने व्यर्थ मनोरथों के उन्माद में जकड़ते जाते है।"[95]

146. जब अगोचर, शाश्वत, दिव्य सार ने मुहम्मद के दिवानक्षत्र को ज्ञान के क्षितिज पर उदित किया, तब यहूदी धर्मोपदेशकों द्वारा उन पर लगाए गए झूठे आरोपों में था कि मूसा के बाद ईश्वर की ओर से कोई ईशदूत नहीं भेजा जायेगा। हाँ, एक आत्मा का धर्मग्रंथों में उल्लेख किया गया है जिसे अवश्य ही प्रकट किया जायेगा जो मूसा के धर्म की प्रगति तथा लोगों के हितों का उन्नयन करेगी जिससे मूसवी धर्मकाल का विधान समस्त पृथ्वी को परिव्याप्त कर लेगा। शाश्वत गरिमा के सम्राट ने अपने ग्रंथ में दूरत्व तथा भूल की घाटी में भटकने वालों द्वारा कहे गये शब्दों के प्रति यह उल्लेख किया है: "ईश्वर का हाथ," यहूदी कहते हैं, "बंधा है।" बंध जाये उनके अपने हाथ! और जो कुछ उन्होंने कहा, उसके लिए वे अभिशापित हुए। नहीं, उसके दोनों हाथ खुले हुए हैं।"[96] "परमात्मा का हाथ उनके हाथों से ऊपर है।"[97]

147. कुरआन के टीकाकारों ने यद्यपि विविध रूपों से इस आयत के प्रकटीकरण की परिस्थितियों का वर्णन किया है, फिर भी तुझे उनका प्रयोजन समझने का प्रयास करना चाहिए। वह कहता है: कितना झूठ है यह, जिसकी यहूदियों ने कल्पना की

है! कैसे उसका हाथ, जो सत्य का सम्राट है, जिसने मूसा के मुखमण्डल का प्राकट्य कराया और उनको ईशदूत का पद दिया, को हथकड़ी और बेड़ी से बांधा जा सकता है ? उसे इतना शक्तिहीन कैसे जाना जा सकता है कि मूसा के पश्चात ही एक अन्य संदेशवाहक को खड़ा करे ? उनके कथन की निरर्थकता देखो जो ज्ञान और विवेक की राह से कितनी दूर भटका हुआ है ? निरीक्षण करो कि कैसे इस काल में भी, ये सारे लोग ऐसी मूर्खतापूर्ण सारहीनता में उलझे हैं। एक हज़ार वर्षों से अधिक समय से वे उस आयत का पाठ करते और यहूदियों के विरूद्ध अज्ञानपूर्वक अपनी भर्त्सना का उद्घोष करते आ रहे हैं, पूर्णतः अनभिज्ञ हैं कि वे स्वयं, प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रूप से, यहूदी लोगों की भावनाओं तथा विश्वासों को ही स्वर दे रहे हैं। निश्चित ही तू उनके निरर्थक विवाद से अवगत है कि समस्त धर्मप्रकाशन समाप्त हो गये हैं, कि दिव्य दयालुता के कपाट बन्द हो चुके हैं, कि शाश्वत पावनता के दिवास्रोतों से अब कोई सूर्योदय नहीं होगा, कि सर्वदा स्थायी अनुकम्पा का महासागर सदैव के लिए सूख गया है और यह कि प्राचीन भव्यता के मण्डप से ईश्वर के संदेशवाहकों का प्रकट होना बंद हो गया है। इन तुच्छ विचार वाले घृणित लोगों के विवेक का इतना ही दायरा है। इन लोगों ने कल्पना कर ली है कि परमात्मा की सबको समाहित करने वाली कृपा तथा अतुलनीय दयालुता का प्रवाह, जिसके अवरूद्ध होने की धारणा किसी के मन में नहीं समा सकती, रूक गया है। प्रत्येक दिशा से उठकर उन्होंने अत्याचार के लिये कमर कस ली और अपने व्यर्थ मनोरथ के निरर्थक जल से ईश्वर की प्रज्वलित झाडी की अग्नि को बुझाने का भरसक प्रयास किया, यह भूलकर कि शक्ति मण्डल अपने सामर्थ्यशाली दुर्ग में परमेश्वर के दीप की रक्षा करेगा। जिस घोर निराशा में यह लोग जा गिरे हैं वह निश्चय ही उनके लिए नियत थी, क्योंकि वे प्रभुधर्म के सत्व तथा रहस्य को और सारभूत की पहचान से वंचित रहे हैं। क्योंकि मनुष्यों को प्रदत्त सर्वोच्च कृपा "परमात्मा की उपस्थिति की प्राप्ति" और उसके अभिज्ञान की कृपा है, जिसका सभी लोगों को वचन दिया गया है। उस सर्वअनुग्रहमय, दिवसों के पुरातन द्वारा मनुष्यों के लिए संरक्षित यह सर्वोच्च श्रेणी की कृपा तथा उसके प्राणियों पर उसकी सर्वसम्पूर्ण अनुकम्पा की पूर्णता है। इन लोगों में किसी ने भी इस कृपा तथा अनुग्रह का अंशलाभ नहीं प्राप्त किया है, न ही वे इस सर्वोदात्त विशिष्टता से सम्मानित ही हुए हैं। कितने अधिक हैं वे प्रकटित शब्द जो स्पष्ट तथा इस महासत्य

तथा उदात्त प्रकरण की साक्षी देते हैं, और इतने पर भी उन्होंने उसे अस्वीकृत किया है और कामना के पीछे उसके अर्थ का अनर्थ किया है। जैसाकि उसने प्रकट किया है: "जिन लोगों ने ईश्वर की आयतों का और उससे मिलने का इंकार किया है, वे मेरी दयालुता से निराश हो चुके हैं, और उनके लिए दारुण दण्ड है।"[98] वह यह भी कहता है, "उनका यह विचार है कि वे अपने प्रभु की उपस्थिति प्राप्त करेंगे और उसके पास वापस पहुँचेंगे।"[99] एक अन्य उद्धरण में भी वह कहता है: "बहुधा, ईश्वरेच्छा से, एक लघु दल ने एक विशाल दल को पराजित किया है।"[100] एक अन्य स्थान पर वह प्रकट करता है: "जिसे अपने प्रभु की उपस्थिति की प्राप्ति की आशा है वह सदाचारपूर्ण कार्य करे।"[101] और यह भी कहता है वह: "समस्त कार्यों का नियंत्रण करता है।" वह अपने चिह्न स्पष्ट करता है, जिससे तुम सब अपने प्रभु की उपस्थिति प्राप्त करने में दृढ़ विश्वास रखो।"[102]

148. इन लोगों ने इन सारे पदों का परित्याग किया है, जो अचूक रूप से "दिव्य उपस्थिति की प्राप्ति" को यथार्थ रूप से प्रमाणित करते हैं। पवित्र धर्मग्रंथों में इससे अधिक किसी विषय पर बल नहीं दिया गया है। इसके बावजूद उन्होंने इस अत्यंत उच्च और उदात्त पद, इस परम, भव्य स्थान से अपने को वंचित कर लिया है। कुछ संतुष्ट हो गये हैं कि "दिव्य उपस्थिति की प्राप्ति" का अर्थ पुनरूत्थान दिवस में परमात्मा का "धर्मप्रकाशन" है। यदि वे इस पर जोर देते हैं कि ईश्वर का "धर्मप्रवर्त्तन" एक "सार्वभौमिक धर्मप्रकटीकरण" को संकेतित करता है, तो यह स्पष्ट तथा प्रत्यक्ष है कि ऐसा प्रकटीकरण सभी वस्तुओं में पहले से विद्यमान है। इसका सत्य हमने पहले ही स्थापित कर दिया है, क्योंकि हमने दर्शाया है कि सभी वस्तुएं उस आदर्श सम्राट के वैभवों को प्राप्त करने वाले हैं और समस्त ऐश्वर्य के स्रोत, उस सूर्य के प्रकटीकरण के चिह्न, अस्तित्ववानों के दर्पणों में अस्तित्ववान तथा प्रकट हैं। नहीं बल्कि, यदि मनुष्य दिव्य और आध्यात्मिक निर्णय के नेत्र से ध्यान देकर देखता है, तो वह तुरन्त अनुभूति कर लेगा कि कुछ भी, उस आदर्श सम्राट, परमेश्वर के ऐश्वर्य के प्रकटीकरण से रहित होकर अस्तित्व में रह ही नहीं सकता। विचार करो कि कैसे समस्त सृजित वस्तुयें अपने अर्न्ततम प्रकाश को स्पष्टतः प्रकाशित करती हैं। देखो कि कैसे सभी वस्तुओं के अन्दर परमेश्वर के

रिज़वान के कपाट खुले हुए हैं, ताकि अन्वेषी ज्ञान तथा विवेक के नगरों तक पहुँच सकें और बोध तथा शक्ति के उद्यान में प्रवेश कर सकें। प्रत्येक उद्यान में वे अन्तर्निहित अर्थ की रहस्मय वधू को देखेंगे, जो भव्य कृपा तथा सम्पूर्ण अलंकारों से सुसज्जित वाणी के प्रकोष्ठ में बैठी है। कुरआन की अधिकांश आयतें इस आध्यात्मिक प्रकरण का संकेत और साक्षी देती हैं। ये शब्द, ''किंचित भी ऐसा कुछ नहीं है जो उसकी स्तुति न करता हो''[103] इसका बोलता साक्ष्य है और ''हमने सारी चीजों को लिखित रूप में संरक्षित किया है''[104] जो इसका एक निष्ठावान साक्षी है। अब, यदि ''परमात्मा की उपस्थिति की प्राप्ति'' का अर्थ ऐसे प्रकटीकरण का ज्ञान प्राप्त किया जाना है, तो यह सुस्पष्ट है कि सभी मनुष्यों ने उस अद्वितीय सम्राट के अपरिवर्तनीय मुखमण्डल की उपस्थिति पहले ही प्राप्त कर ली है। फिर ऐसा प्रकटीकरण पुनरूत्थान दिवस से प्रतिबन्धित क्यों ?

149. और यदि वे यह मानते कि ''दिव्य उपस्थिति'' से तात्पर्य ''परमात्मा का कोई विशिष्ट धर्मप्रकाशन'' है जिसे कुछ सूफियों ने ''परम पावन उद्गार'' की संज्ञा दी है, यदि वह स्वयं महासार हो, तो यह प्रत्यक्ष है कि शाश्वत रूप से वह दिव्य ज्ञानी रहा है। इस अर्थ में, इस अनुमान के सत्य को मानने पर ''दिव्य उपस्थिति की प्राप्ति'' स्पष्टतः किसी के लिए सम्भव नहीं है क्योंकि यह प्रकटीकरण का अन्तरतम सार है जिसे कोई मनुष्य पा नहीं सकता। ''मार्ग अवरूद्ध है और समस्त खोज अस्वीकृत।'' स्वर्ग के प्रियजनों के मानस, कितना ही ऊँचा वे उड़ें, इस स्थान को कभी पा नहीं सकते, फिर धुंधले तथा सीमित मनों की समझ कितनी कम है।

150. यदि वे यह कहें कि ''दिव्य उपस्थिति'' का तात्पर्य ''परमात्मा का गौण धर्मप्रकाशन'' है जिसकी व्याख्या परम पावन उद्गार के रूप में की गई है, तो यह मान्यरूप से सृष्टि जगत के लिए, अर्थात, ईश्वर के आदि एवं अनन्त प्राकट्य के क्षेत्र में व्यवहार के योग्य है। ऐसा प्रकटीकरण उसके ईशदूतों तथा प्रियजनों तक सीमित है, क्योंकि उनसे अधिक सामर्थ्यवान कोई सत्ता जगत में अस्तित्व धारण करने नहीं आयी है। सभी इस सत्य को पहचानते हैं और उसकी साक्षी देते है। परमात्मा के ये ईशदूत तथा चुने हुये लोग परमात्मा के सभी अपरिवर्तनशील गुणों और नामों के ग्रहणकर्ता एवं प्रकाशक होते हैं। वे ऐसे दर्पण हैं जो सच्चाई तथा

निष्ठा से ईश्वर के प्रकाश को प्रतिबिम्बित करते हैं। जो कुछ उन पर लागू होने योग्य है वह वास्तव में परमात्मा पर लागू होने योग्य होता है, जो दृश्य और अदृश्य दोनो है। जो समस्त वस्तुओं का मूल है, उसका ज्ञान तथा उसकी प्राप्ति सत्य-सूर्य से निस्सरित होने वाली इन प्रकाशपुंज-सत्ताओं से ज्ञान तथा उनकी प्राप्ति से स्वयं ''परमात्मा की उपस्थिति की प्राप्ति'' होती है। उनके ज्ञान से ईश्वरीय ज्ञान प्रकट होता है और उनके मुखमण्डल के प्रकाश से परमेश्वर के मुखमण्डल की गरिमा प्रकट होती है। अनासक्ति के इन सार-स्वरूपों के अनेक लक्षणों के माध्यम से, जो आदि और अंत हैं, के दर्शन सुगम तथा दुर्लभ दोनों हैं, यह स्पष्ट किया जाता है कि सत्य का सूर्य और वह ''आदि और अंत'', दृश्य तथा अदृश्य है।''[105] इसी प्रकार ईश्वर के अन्य नाम उच्च तथा उदात्त गुण से सम्पन्न हैं। जिसने किसी धर्मकाल में इन भव्य, इन देदीप्यमान और सर्वाधिक उत्कृष्ट प्रकाशस्रोतों को पहचाना है और इनकी उपस्थिति प्राप्त की है, सत्य ही उसने स्वयं ''परमात्मा की उपस्थिति'' प्राप्त कर ली है और शाश्वत तथा अमर जीवन के नगर में प्रवेश किया है। ऐसी उपस्थिति की सिद्धि पुनरूज्जीवन दिवस में ही सम्भव होती है, जो अपने सर्वालिंगनकारी धर्मप्रकाशन के माध्यम से स्वयं परमात्मा की उच्चता का दिवस होता है।

151. ''पुनरूज्जीवन दिवस'' का अर्थ यह है, जिसके बारे में सभी धर्मग्रंथों में कहा गया है, और सभी लोगों के लिए जिसकी घोषणा की गई है। विचार करो, क्या आज से अधिक मूल्यवान, अधिक शक्तिशाली और अधिक गरिमापूर्ण दिन की धारणा की जा सकती है जिसमें मनुष्य स्वेच्छा से उसकी कृपा को त्याग दे, और उसकी अनुकम्पाओं से स्वयं को वंचित कर ले जो बासन्ती फुहार की भाँति दयालुता के आकाश से सारी मानवजाति पर बरस रही हैं ? इस प्रकार, सुनिश्चित रूप से यह दर्शाने के बाद कि उस दिवस से महत्तर कोई दिवस नहीं है और इस धर्मप्रकाशन से अधिक भव्य कोई धर्मप्रकाशन नहीं है और यह सब वृहद तथा भ्रमातीत प्रमाण प्रस्तुत करने के बाद कि जिस पर कोई विवेकवान मस्तिष्क सवाल नहीं उठा सकता और कोई विद्वान पुरूष जिसकी उपेक्षा नहीं कर सकता, कैसे मनुष्य, संशयग्रस्त तथा कल्पनाशील लोगों की निरर्थक संतुष्टि के जरिए, ऐसी अनुग्रहमयी कृपालुता से अपने को वंचित कर सकता है ? क्या उन्होंने यह सुप्रसिद्ध

पारम्परिक कथन नहीं सुना है: "जब काइम आता है तो वह दिन पुनरूज्जीवन दिवस होता है ?" इस प्रकार, दिव्य मार्गदर्शन के उन कभी न बुझाए जा सकने वाले प्रकाशपुंज इमामों ने एक आयत की व्याख्या में कहा है: "इसके अलावा भला और क्या हो सकता है कि बादलों से घिरा ईश्वर उनके पास आयेगा।"[106] ऐसा चिह्न जिसे उन्होंने असंदिग्ध रूप से पुनरूज्जीवन दिवस का एक लक्षण माना है जो काइम तथा उसके प्राकट्य के सम्बन्ध में है।

152. अतः, हे मेरे भ्रात, "पुनरूज्जीवन" का अर्थ ग्रहण करने का प्रयत्न करो और इन अस्वीकृत लोगों के निरर्थक कथनों से अपने कान निर्मल कर लो। तू यदि सम्पूर्ण अनासक्ति की ओर बढ़े तो तू प्रमाणित कर पायेगा कि इस युग से अधिक शक्तिशाली और कोई युग नहीं है और इस पुनरूज्जीवन से अधिक विस्मयकारी किसी पुनरूज्जीवन का अनुमान नहीं किया जा सकता। इस युग में सम्पन्न एक पुण्य कार्य उन सभी धर्मपरायण कार्यों के समान है जिनका मनुष्यों ने लाखों शताब्दियों से आचरण किया है - नहीं, हम ऐसी तुलना के लिए परमात्मा से क्षमा मांगते हैं। क्योंकि सत्यतः ऐसे किसी कर्म के योग्य जो पुरस्कार है, वह मनुष्यों के अनुमान के परे तथा उच्च है, क्योंकि ये अविवेकी तथा अधम आत्माएँ "पुनरूज्जीवन" तथा "दिव्य उपस्थिति की प्राप्ति" का वास्तविक अर्थ समझने में विफल हुई हैं, अतः, वे उसकी कृपा से पूरी तरह वंचित रह गई हैं। यद्यपि समस्त ज्ञान का सम्पूर्ण तथा मूलभूत प्रयोजन और उसका कष्ट तथा श्रम, इसी स्थान की प्राप्ति और पहचान है, फिर भी वे सब अपने वस्तुगत अध्ययन के अनुसरण में निमग्न हैं। वे पुर्सत की हर घड़ी को भी नकार देते हैं और पूर्णतः उसे अस्वीकार करते हैं जो समस्त ज्ञान का सार और उनकी खोज का एकमात्र लक्ष्य है। मेरा विचार है, कि उनके होठों ने दिव्य ज्ञान की प्याली का कभी स्पर्श नहीं किया है, और न ही उनको दिव्य कृपा की बौछारों की एक बूँद प्राप्त हुई प्रतीत होती है।

153. विचार करो, कि परमात्मा के प्रकटीकरण के दिवस में जो "दिव्य उपस्थिति" की कृपा उपलब्ध करने और उसके प्राकट्य को पहचानने में असफल होता है, उसे यथार्थतः विद्वान कैसे कहा जा सकता है, भले ही उसने ज्ञान को प्राप्त करने में कल्पों बिता दिए हों, और मनुष्यों की समस्त सीमित तथा वस्तुगत विद्या प्राप्त कर ली हो? निश्चय ही यह स्पष्ट है कि वह सच्चे ज्ञान का अधिकारी किसी भी तरह

नहीं माना जा सकता। जबकि, सभी मनुष्यों में सर्वाधिक अज्ञानी, यदि इस परम विशिष्टता से सम्मानित हो तो वह सचमुच उन दिव्य विद्वज्जनों में गिना जाएगा जिनका ज्ञान परमात्मा का है, क्योंकि ऐसे मनुष्य ने ज्ञान की परिपूर्णता पायी है और विद्या के शिखर पर पहुँचा है।

154. यह स्थान भी धर्मप्रकाशन के दिवस का एक चिह्न है जैसाकि कहा गया है: "तुम्हारे बीच जो गिरे हुए है उनको वह ऊँचा उठाएगा और जो ऊँचे हैं उन्हें गिरायेगा।" और इसी प्रकार, उसने कुरआन में प्रकट किया है: "और हम उनके प्रति कृपा प्रदर्शन की कामना करते हैं जो भूमि में निकृष्ट किए गए थे और उन्हें मनुष्यों के बीच आध्यात्मिक नेतृत्वकर्ता और अपना उत्तराधिकारी बनाने की कामना करते है।"[107] इस दिवस में यह प्रत्यक्ष देखा गया है कि कितने ही धर्मगुरु, सत्य की अस्वीकृति के कारण, अज्ञान की अतल गहराइयों में समा गये और उनके नाम यशस्वीजनों तथा विद्वानों की नामपट्टिका से मिटा दिये गए और कितने ही अज्ञानीजनों ने प्रभुधर्म की अपनी स्वीकृति के कारण उच्चता के स्तर तक उठकर ज्ञान के उच्च शिखर की सिद्धि प्राप्त की है और उनके नाम शक्ति की लेखनी से दिव्य ज्ञान की पाती पर उत्कीर्ण किए गये हैं। अतः "जो वह चाहता है उसे परमात्मा रद्द या सम्पुष्ट करेगा: क्योंकि उसके साथ धर्म प्रकटीकरण का स्रोत है।"[108] इसीलिए कहा गया है: "जब प्रमाण स्थापित हो चुका हो तब साक्ष्यों की खोज करना एक अशोभनीय कार्य है और जब समस्त ज्ञान का लक्ष्य प्राप्त हो गया हो तब ज्ञान के अर्जन की ओर अग्रसर होना सचमुच निन्दनीय है।" कहो, हे पृथ्वी के लोगो ! देखो इस अग्नि-ज्वाला सदृश्य युवक को जो उस चैतन्य की असीम गहनता के आर-पार तुम्हारे प्रति यह समाचार उद्घोषित करते हुए कि: "देखो, ईश्वर का दीप चमक रहा है," और अपने उस धर्म की ओर ध्यान देने हेतु तुम्हारा आह्वान करते हुए गतिमान है, जो पुरातन भव्यता के आवरणों में छिपा होकर भी इराक की भूमि में शाश्वत पावनता के दिवास्रोत के ऊपर चमक रहा है।

155. हे मेरे मित्र, यदि तेरे मन का पंछी कुरआन के प्रकटीकरण के आसमानों को खोजे व इसमें अनावृत दिव्य ज्ञान के क्षेत्र का चिन्तन करे, तो तू निश्चय ही अपने सम्मुख ज्ञान के अनेक द्वार खुले पाएगा। तू निश्चय ही पहचान लेगा कि जिन समस्त चीजों ने इस दिवस में शाश्वत कृपा के सागर तटों को प्राप्त करने में आज के लोगों को

बाधा पहुँचाई है, मुहम्मद के धर्मकाल में उन्हीं वस्तुओं ने उस युग के लोगों को उस दिव्य प्रकाशस्रोत को पहचानने और उसके सत्य को प्रमाणित करने से रोका था। तू "प्रत्यागमन" तथा "प्रकटीकरण" के रहस्यों को भी समझेगा और निश्चय तथा आश्वस्ति के अत्युन्नत कक्षों में सुरक्षित रहेगा।

156. एक दिन ऐसा हुआ कि उस अद्वितीय सौन्दर्य के कुछ विरोधी, जो परमेश्वर के अविनाशी शरणस्थल से दूर भटक गए थे, उन्होंने मुहम्मद के प्रति घृणापूर्वक ये शब्द बोले: "सत्य ही परमात्मा हमारे साथ एक संविदा में प्रविष्ट हुआ है कि हम तब तक किसी देवदूत का विश्वास न करें जब तक वह हमें एक बलि न प्रस्तुत करे जिसका भक्षण आसमान की अग्नि करेगी!"[109] इस आयत का तात्पर्य यह है कि परमात्मा ने उनके साथ संविदा की है कि वे तब तक किसी संदेशवाहक में विश्वास न करें जब तक वह हाबील और क़ाबील का चमत्कार न करे, अर्थात जब तक वह एक बलि न प्रस्तुत करे और आसमान की अग्नि उसका भक्षण न करे, जैसा कि उन्होंने हाबील की कथा में यह वर्णन सुना था, जो धर्मग्रंथों में लिखी है। इसके उत्तर में मुहम्मद ने कहा: "मेरे पूर्ववर्ती देवदूत पहले ही तुम्हारे पास निश्चित प्रमाणों के साथ और उसके साथ जिसके बारे में तुम कहते हो, आये हैं। क्या इस हेतु तुमने उनकी हत्या की ? मुझे बताओ, यदि तुम सत्यनिष्ठ पुरुष हो।"[110] और अब उचित निर्णय करो: "मुहम्मद के दिनों में रहने वाले लोगों का अस्तित्व हजारों साल पहले, आदम या अन्य ईशदूतों के युग में कैसे रहा हैं ? सत्यता के उस सार मुहम्मद को अपने दिवस के लोगों पर हाबील या अन्य ईशदूतों की हत्या का आरोप क्यों लगाना चाहिए था ? मुहम्मद को मूर्ख या पाखण्डी मानने के - ईश्वर न करे - यह मानने के अतिरिक्त तेरे पास कोई विकल्प नहीं है कि वे दुष्ट लोग वैसे ही लोग थे जिन्होंने प्रत्येक युग में ईशदूतों तथा परमात्मा के संदेशवाहकों का विरोध किया और उन पर मिथ्या आरोप लगाये, यहाँ तक कि उन्होंने उन सभी को अन्ततः शहादत के लिए विवश किया।

157. अपने हृदय में इस पर मनन् करो, जिससे दिव्य ज्ञान के मधुर झकोरे दयालुता के हरित मैदानों से आकर तुझ पर प्रिय की वाणी की सुवास प्रवाहित कर सके और तेरी आत्मा विवेक के रिज़वान में प्रवेश प्राप्त करा सके। युग-युग में पथभ्रष्ट जन इन महान तथा अर्थगर्भित कथनों के गहन आश्य की थाह नहीं ले पाये हैं और

ईशदूतों से पूछे गए अपने प्रश्नों के उत्तर के असंगत होने की कल्पना की है, अतः उन्होंने ज्ञान और विवेक के उन सारभूत स्वरूपों के माथे अज्ञान और मूर्खता मढ़ दी है।

158. इसी प्रकार मुहम्मद एक अन्य आयत में उस युग के लोगों के विरूद्ध अपना विरोध प्रकट करते हैं। वह कहते हैं: ''यद्यपि पहले उन्होंने उन पर विजय पाने के लिए प्रार्थना की थी जिन्होंने विश्वास नहीं किया था किन्तु जब उनके समक्ष वह आया जिसका ज्ञान उनको था तब भी उन्होंने उसमें अविश्वास किया। उन अधर्मियों पर परमात्मा का अभिशाप हो।''[111] विचार करो कि कैसे ये शब्द भी वही अर्थ लिए हैं कि मुहम्मद के दिनों में रहने वाले लोग वही लोग थे जो प्राचीन काल से ईशदूतों के दिनों में प्रभुधर्म के उन्नयन के उद्देश्य से संघर्षरत और युद्धरत थे और जिन्होंने ईश्वरीय धर्म का शिक्षण किया था। फिर भी, ईसामसीह और मूसा के काल में रहने वाली पीढ़ियाँ वस्तुतः वही लोग कैसे मानी जायेंगी ? इसके अतिरिक्त, जिनको वे पहले जान चुके थे वे थे मूसा - पेण्टाट्यूक के प्रकटकर्ता और ईसा-गॉस्पल के प्रकटकर्ता। इस पर भी, मुहम्मद ने यह क्यों कहा: ''वह जिसके बारे में उन्हें ज्ञान था उनके समक्ष आया - वह ईसा हो या मूसा - उन्होंने उनमें अविश्वास किया?'' क्या मुहम्मद को बाह्य रूप से एक भिन्न प्रतीत होने वाले नाम से नहीं पुकारा गया ? क्या वह एक भिन्न नगर से प्रकट नहीं हुए ? क्या उन्होंने एक भिन्न भाषा नहीं बोली और एक भिन्न विधान प्रकट नहीं किया ? तब इस आयत का सत्य और इसका अर्थ कैसे स्पष्ट किया जा सकता है?

159. ''प्रत्यागमन'' का अर्थ समझने का प्रयास करो जिसे क़ुरआन में बड़ी स्पष्टता के साथ प्रकट किया गया है और जिसे किसी ने अभी तक नहीं समझा है। तू क्या कहता है ? तू यदि कहे कि मुहम्मद प्राचीनकाल के ईशदूतों के ''प्रत्यागमन'' थे जैसाकि इस आयत में प्रत्यक्ष है, तो उनके साथी भी उसी प्रकार अवश्य ही साथियों का ''प्रत्यागमन'' होंगे, जैसा कि पूर्ववर्ती लोगों की वापसी उपरोक्त आयतों के मूलपाठ से स्पष्टतः प्रमाणित होती है और तू यदि इससे इन्कार करता है, तो निश्चय ही तूने क़ुरआन के सत्य को, मनुष्यों के प्रति परमात्मा के सुनिश्चित प्रमाण को अस्वीकृत किया है। इसी प्रकार, ''प्रत्यागमन'', ''प्रकटीकरण'' तथा ''पुनरूज्जीवन'' का महत्व ग्रहण करने का महाप्रयास करो, जैसाकि दिव्य सार के

प्राकट्यों के दिवसों में प्रत्यक्ष होता है, जिससे तू स्वयं अपने ही नेत्रों से पावन तथा प्रकाशित कायाओं में पवित्रात्माओं का "प्रत्यागमन" देख सके और अज्ञान की धूल को दूर कर सके और दिव्य ज्ञान स्रोत से प्रवाहमान दयालुता के जलों से कालिमापूर्ण स्वत्व को स्वच्छ कर सके और संयोग से तू, परमात्मा की शक्ति तथा दिव्य मार्गदर्शन के प्रकाश के द्वारा, दोष की तमसावृत रात्रि से सदास्थायी गौरव के प्रभात को पृथक कर सके।

160. इसके अलावा तुझे यह स्पष्ट है कि परमात्मा के विश्वास के संवाहक एक नए धर्म के प्रवक्ताओं तथा एक नए संदेश के संवाहकों के रूप में पृथ्वी के लोगों के समक्ष प्रकट किए गए हैं। चूंकि दिव्य सिहांसन के ये सभी कपोत ईश्वरेच्छा के आकाश से प्रकट किए जाते हैं और वे सब उसके अप्रतिरोध्य धर्म की उद्घोषणा के लिए उठ खड़े होते हैं, अतः वे एक आत्मा और समान विभूति माने जाते हैं, क्योंकि वे सब ईश्वरीय प्रेम की एक ही प्याली से रसपान करते हैं और सब एकत्व के एक ही वृक्ष के फल के भागीदार होते हैं। इन ईश्वरावतारों में प्रत्येक का दोहरा स्थान होता है। एक है शुद्ध निराकार और सारभूत एकता का पद। इस लिहाज़ से, यदि तू उन सबको एक ही नाम से पुकारे और उनको समान गुण से युक्त कहे, तो तू सत्य से भटका नहीं है। जैसाकि उसने प्रकट किया है: "हम उसके किसी संदेशवाहक में कोई अंतर नहीं करते हैं!"[112] क्योंकि वे अकेले और सभी ईश्वरीय एकता को स्वीकार करने के लिए पृथ्वी के लोगों का आह्वान करते हैं और उनके समक्ष एक असीम कृपा तथा अनुकम्पा के कौसर की घोषणा करते हैं। वे सब ईश्वर के संदेशवाहक के परिधान से सुसज्जित, भव्यता के आवरण से सम्मानित होते हैं। कुरआन के बिन्दु, मुहम्मद ने इस प्रकार प्रकट किया: "मैं समस्त ईशदूत हूँ।" इसी प्रकार वह कहते है: "मैं प्रथम आदम, नूह, मूसा और ईसा हूँ।" इसी प्रकार के कथन अली ने दिये। इसी प्रकार के कथन जो एकत्व के उन व्याख्याताओं की सारभूत एकता को संकेतित करते हैं, परमात्मा की अनश्वर वाणी के संवाहकों से और दिव्य ज्ञान-रत्नों के कोषों से निकले हैं तथा धर्मग्रंथों में लिपिबद्ध हुए हैं। ये मुखमण्डल दिव्य आदेश के प्राप्तकर्ता हैं और उसके प्रकटीकरण के दिवास्रोत हैं। यह धर्मप्रकाशन संख्या की आवश्यकताओं तथा अनेकत्व के आवरणों से ऊपर उदात्त है। इसी प्रकार वह कहता है: "हमारा धर्म एक ही है।"[113] चूंकि धर्म एक है, अतः उसके व्याख्याता भी अवश्यमेव रूप से एक और एक ही होने चाहिए। इसी भाँति,

इस्लाम के इमामों ने, निश्चय के उन दीपों ने कहा है: "मुहम्मद हमारे प्रथम, मुहम्मद हमारे अन्तिम, मुहम्मद हमारे सर्वस्व है।"

161. तेरे समक्ष यह स्पष्ट है कि सभी अवतार प्रभुधर्म के मंदिर हैं जो विभिन्न वस्त्रालंकारों में आये हैं। यदि तू अपने विवेक-चक्षु से देखे तो तुझे वे सभी एक ही मण्डप-वितान तले एक ही आकाश में विचरण करते, एक ही आसन पर विराजमान, एक ही वाणी कहते हुये तथा एक ही धर्म का उद्घोष करते हुये दिखाई देंगे। प्रभु के अनंत वैभव के संवाहक तथा उसके अनंत सार-रत्न इन अवतारों की एकरूपता ऐसी ही है। इसलिये पावनता के इन अवतारों में से एक अगर यह कह कर उद्घोष करता है: "मैं सभी अवतारों की वापसी हूँ" तो उसका यह कथन सत्य है। इसी प्रकार प्रत्येक आने वाले अवतार ने पहले के अवतारों की वापसी सुनिश्चित की है, जिसका सत्य दृढ़ रूप से स्थापित है। क्योंकि ईश्वर के दिवस में दूतों की वापसी, जैसाकि आयतों तथा पारम्परिक कथनों से प्रमाणित है, निर्णयात्मक रूप से प्रदर्शित की गई है, अतः उनके प्रियजनों की वापसी भी निश्चित रूप से सिद्ध है। यह वापसी इतनी प्रत्यक्ष है कि उसे किसी साक्ष्य या प्रमाण की अपेक्षा नहीं है। उदाहरण के लिए, विचार करो ईशदूतों में एक थे नूह। जब उन्हें ईशदूत के परिधान से सुसज्जित किया गया और परमेश्वर की चेतना द्वारा उठने तथा उसके धर्म की उद्घोषणा करने के लिए प्रेरित किया गया, तब जिसने भी उनमें विश्वास किया और उनका धर्म स्वीकार किया, वह नवजीवन की महिमा से गौरवान्वित हुआ। उसके सम्बन्ध में सत्य ही कहा जा सकता है कि उनका पुनर्जन्म हुआ और उसे पुनर्जीवित किया गया, क्योंकि परमात्मा में विश्वास और उसके प्राकट्य की अपनी स्वीकृति से पूर्व उसने सांसारिक वस्तुओं से अपना अनुराग जोड़ा था, जैसे पार्थिव वस्तुओं के प्रति, पत्नी, बच्चों, भोजन, पेय इत्यादि के प्रति आसक्ति, इतनी अधिक कि दिन के समय और रात्रिकाल में उसका एकमात्र कार्य धन-दौलत एकत्र करना और अपने लिए आमोद-प्रमोद तथा आनन्द के साधन एकत्रित करना रहा था। इन चीजों के अतिरिक्त, आस्था के पुनर्जीवनदायी जल के अपने अंशग्रहण के पूर्व वह अपने पूर्वजों की परम्पराओं से इस तरह आबद्ध और उनके रीति-रिवाजों तथा नियमों के पालन के प्रति ऐसी आतुरता से समर्पित रहा था कि वह अपने लोगों के बीच प्रचलित अंधविश्वासपूर्ण तरीकों के एक अक्षर का उल्लघंन करने की अपेक्षा मर जाना अधिक पसन्द करता

था। जैसाकि लोगों ने चीख-चीख कर कहा भी है: ''सत्य ही हमने अपने पूर्वजों को एक आस्था से जुड़ा पाया और सत्य ही उसके पगचिह्नों का हम अनुपालन करते है।''[114]

162. इन्ही लोगों ने, तमाम सीमाओं में आबद्ध होकर भी और ऐसे अनुपालनों के अवरोधों के बावजूद, जैसे ही आस्था के अनश्वर घूंट निश्चय की प्याली से उस सर्वमहिमावान के प्राकट्य के हाथों रसपान किया, उनका कुछ ऐसा कायाकल्प हुआ कि उसके निमित्त उन्होंने अपने आत्मीयजनों, अपनी सम्पत्तियों, अपने जीवन, अपनी आस्था और ईश्वर के अतिरिक्त अपना सबकुछ त्याग दिया। परमात्मा के प्रति उनकी लगन इतनी प्रबल, मनमोहक आनन्द के उनके हर्षोन्माद इतने उच्च थे कि संसार और जो कुछ इसमें है वह सब उनके नेत्रों के सम्मुख शून्य में विलीन हो गया। इन लोगों ने क्या ''पुनर्जन्म'' और ''प्रत्यागमन'' के रहस्यों का उदाहरण नहीं दिया ? क्या यह प्रत्यक्ष नहीं देखा गया कि इन्हीं लोगों ने, परमात्मा की नवीन तथा अद्‌भुत कृपा से अलंकृत होने के पूर्व, अनगिनत उपायों के जरिए विनाश से अपने जीवन की सुरक्षा सुनिश्चित करने की तलाश नहीं की थी ? एक कांटा भी क्या उनको आतंकित नहीं कर देता था और एक लोमड़ी को देखते ही वे भाग खड़े नहीं होते थे ? किन्तु एक बार परमात्मा की सर्वोच्च विशिष्टता से सम्मानित होने के पश्चात और उसकी अनुग्रहमयी कृपा से संरक्षित होने के उपरान्त, यदि उनको अवसर मिलता तो वे उसके मार्ग में दस सहस्त्र जीवन स्वेच्छा से अर्पित कर देते। नहीं, उनकी आशीर्वादित आत्मायें अपनी काया के पिंजरे के प्रति घृणाभाव लेकर मुक्ति के लिए छटपटाती हैं। उस दल का एक अकेला योद्धा एक समूह का सामना और उससे युद्ध करता और फिर, उनके जीवन के रूपान्तरण के बगैर, वे ऐसे कर्म प्रकट करने में समर्थ कैसे हो सकते थे जो मनुष्यों की मान्यताओं के विपरीत और उनकी सांसारिक कामनाओं से असगंत है ?

163. यह स्पष्ट है कि इस गूढ़ कायाकल्प से कम कुछ भी सत्ता जगत में प्रकट किया जाने वाला ऐसा आचरण और चेतना उत्पन्न नहीं कर सकता, जो उनकी पूर्ववर्ती आदतों तथा तौर-तरीकों से इतना बेमेल है। उनकी अस्थिरता शांति में, उनका

संशय निश्चय में, उनकी कायरता साहस में बदल गई। दिव्य-अमृत की ऐसी ही शक्ति है, जो पलक झपकते मानवात्माओं का कायाकल्प कर देती है।

164. उदाहरण के लिए ताँबे का विचार करो। यदि वह ठोस रूप में आने के पहले अपनी ही खान में सुरक्षित रहे, तो वह सत्तर वर्षों के पश्चात स्वर्ण की दशा प्राप्त कर लेगा। तथापि कुछ लोग मानते हैं कि ताँबा स्वयं सोना है जो ठोस रूप में आकर रूग्ण स्थिति में होता है और इसीलिए अपने मूल रूप में नहीं होता है।

165. जैसा भी हो, वास्तविक दिव्य-अमृत ताँबे को पल भर में स्वर्ण की स्थिति प्राप्त करा दे और सत्तर वर्ष के सोपान क्षण मात्र में पार हो जायें। क्या इस स्वर्ण को ताँबा कहा जाएगा ? क्या यह दावा किया जा सकेगा कि उसने स्वर्ण की दशा प्राप्त नहीं की है, जब कि उसकी परख के लिए और ताँबे से उसे पृथक करने के लिए कसौटी निकट ही है ?

166. इसी भाँति, ये आत्माएँ, दिव्य अमृत की शक्ति से, पल भर में, धूल के संसार को पार कर पवित्रता के साम्राज्य में अग्रसर होती हैं और एक पग में सीमाबद्धता की भूमि से पार जाकर स्थानविहीनता की प्रभुता को पहुँचती है। तुझे इस दिव्य-अमृत को प्राप्त करने के लिए अपनी परम शक्ति लगाना योग्य है, जो एक चंचल श्वांस में, अज्ञान के पश्चिम को ज्ञान के पूर्व में पहुँचा देता है, रात्रि के तमस् को प्रभात की आभा से जगमगा देता है, संदेह के मरूस्थल में भटकते हुए को दिव्य उपस्थिति के जलस्रोत और निश्चय के निर्झर की ओर मार्गदर्शन करता है और नश्वर आत्माओं को अमरत्व के रिज़वान में स्वीकृति का सम्मान प्रदान करता है। अब, यदि इस सोने को ताँबा माना जाये तो, ये लोग वही माने जायेंगे जैसे वे आस्थावान होने के पहले थे।

167. हे भ्रात, देखो कि ''पुनर्जन्म'' के, ''प्रत्यागमन'' के और ''पुनरूज्जीवन'' के आन्तरिक रहस्य, इन सर्वपर्याप्त, इन अनुत्तरणीय और निश्चित कथनों के जरिए, किस प्रकार तेरे नेत्रों के समक्ष खोल और सुलझा दिये गये हैं। परमात्मा करे कि उसकी कृपामयी तथा अदृश्य सहायता से तू अपनी आत्मा तथा शरीर को जीर्ण-शीर्ण वस्त्र से रहित करे और स्वयं को इस नूतन तथा अविनाशी वस्त्र के आभरण से अलंकृत करे।

168. अतः, प्रत्येक पूर्ववर्ती धर्मकाल में जो लोग ईश्वरीय धर्म को अपनाने में शेष मानवजाति से आगे निकल गए, जिन्होंने दिव्य सौन्दर्य के हाथों ज्ञान के स्फटिक जल का रसपान किया और आस्था तथा निश्चय के उच्चतम शिखरों को प्राप्त हुए, उनके नाम, यथार्थ में, कर्मों में, शब्दों में और स्थान में उनका "प्रत्यागमन" माना जा सकता है जिन्होंने किसी पूर्व धर्मकाल में ऐसी ही विशेषताएँ प्राप्त की थीं। क्योंकि पूर्व धर्मकाल के लोगों ने जो कुछ प्रकट किया है वही इस बाद की पीढ़ी के लोगों द्वारा प्रदर्शित किया गया है। गुलाब के फूल का विचार करो: वह पूर्व में खिले या पश्चिम में, यह गुलाब ही होता है। क्योंकि इस सम्बन्ध में गुलाब के बाहरी आकार और प्रकार नहीं, बल्कि उसकी सुगंध और सुवास का महत्व है जिसे वह प्रदान करता है।

169. इसीलिए तू सारे पार्थिव सीमाबंधनों से अपनी दृष्टि शुद्ध कर ले, जिससे तू उन सबको एक नाम के संवाहकों, एक धर्म के व्याख्याताओं, एक स्वत्व के प्राकट्यों और एक सत्य के प्रकाशकों के रूप में देख सके और जिससे, तू इन कथनों के अनुसार ईश्वर के शब्दों के गूढ़ "प्रत्यागमन" को समझ सके। मुहम्मदी धर्म-काल के सहचरों के आचरण पर थोड़ा विचार करो। विचार करो कि, मुहम्मद की पुनर्जीवनदायी श्वांस के जरिए, वे किस प्रकार निस्सार पार्थिव वस्तुओं की अशुद्धियों से निर्मल हुए, स्वार्थपूर्ण कामनाओं से मुक्त हुए और उसके अतिरिक्त अन्य सब कुछ से अनासक्त हुए। देखो कैसे वे उसकी पावन उपस्थिति - स्वयं ईश्वर की उपस्थिति की प्राप्ति में पृथ्वी के सम्पूर्ण जन समुदायों से अग्रणी हुए, कैसे उन्होंने संसार का और उस सबका जो उसमें है, का परित्याग कर दिया और सर्वशोभायमान के उस प्राकट्य के चरणों पर अबाध रूप से और प्रफुल्ल मन से अपने जीवन उत्सर्ग कर दिए। और अब, बयान के बिन्दु[115] के साथियों द्वारा प्रदर्शित उसी निश्चय, उसी स्थायित्व तथा विराग के "प्रत्यागमन" को देखो। तूने प्रत्यक्ष देखा है कि किस प्रकार इन साथियों ने, स्वामियों के स्वामी की कृपा के चमत्कारों से, भव्यता की अगम ऊँचाइयों पर उत्कृष्ट त्याग की पताकाएँ फहराई हैं। ये प्रकाश मात्र एक स्रोत से आगे बढ़े हैं और ये फल एक वृक्ष के फल हैं। उनके बीच तू न तो अन्तर कर सकता है और न भिन्नता स्थापित कर सकता है। यह सब ईश्वर की कृपा से होता है। वह जिसको चाहता है अपनी कृपा प्रदान करता है। हे

परमेश्वर, ऐसी कृपा कर जिससे हम निषेध की भूमि से बचें और स्वीकृति के महासागर की ओर बढ़ें, ताकि सभी परस्पर संघर्षरत तत्वों के निर्मल नेत्र से, एकता और वैविध्य के, विभिन्नता और एकत्व के, बन्धन और अनासक्ति के लोकों का बोध कर सकें और ईश्वर के शब्द के अंतरार्थ के उच्चतम तथा अन्तरतम अभयस्थल की ओर अपनी उड़ान भर सकें।

170. अतः, इन वक्तव्यों से यह स्पष्ट हो गया है कि यदि कोई आत्मा ''अनन्त अन्त'' में प्रकट की जाये और वह उस धर्म को उद्घोषित तथा स्थापित करने के लिए उठे जिसे ''अनादि आदि'' में किसी अन्य आत्मा ने उद्घोषित तथा स्थापित किया था, तो जो अंतिम है उसके और जो प्रथम था उसके बारे में यह सचमुच कहा जा सकता है कि वे एक और वही हैं, क्योंकि दोनों ही एक और उसी धर्म के व्याख्याता हैं। इसी कारण, बयान के बिन्दु ने - उसके अतिरिक्त अन्य सबका जीवन उस पर न्यौछावर हो जाये - ईश्वरावतारों की तुलना सूर्य से की है जो, यद्यपि वह वहाँ से उदित होता है, जिसका कोई आरम्भ नहीं है, जिसका कोई अंत नहीं है, तथापि वह वही सूर्य होता है। अब, यदि तू कहे कि सूर्य पहले वाला सूर्य है तो सत्य कहता है और यदि तू कहता है कि यह सूर्य उसी सूर्य का ''प्रत्यागमन'' है तो भी तू सत्य कहता है। इस प्रकार के कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि ''अन्तिम'' का ''प्रथम'' के लिए व्यवहार किया जा सकता है और ''प्रथम'' का ''अन्तिम'' के लिए क्योंकि ''प्रथम'' और ''अन्तिम'' दोनों एक और उसी धर्म की घोषणा करते हैं।

171. ज्ञान और निश्चय की मदिरा का पान किए लोगों में कितने ही लोगों ने इस सुस्पष्ट विषय का अर्थ न ग्रहण कर ''अन्तिम पैगम्बर'' शब्दों से अपनी समझ धूमिल कर ली है, और उनकी (मुहम्मद) बहुविध अनुकम्पाओं से वंचित रह गए हैं। क्या स्वयं मुहम्मद ने यह घोषित नहीं किया है: ''मैं सभी ईशदूत हूँ ?'' क्या उन्होंने नहीं कहा कि जिनका हमने पहले उल्लेख किया है: ''मैं आदम, नूह, मूसा और ईसा हूँ, ''मैं अंतिम आदम हूँ'' भी कहने में असमर्थ क्यों होना चाहिए था ? क्योंकि जैसा उन्होंने अपने को ''ईशदूतों में प्रथम'' - जो आदम है - भी माना था, उसी प्रकार

"पैगम्बरों की मुहर " भी उस दिव्य सौन्दर्य पर लागू होता है। यह मान्यरूप से स्पष्ट है कि "ईशदूतों में प्रथम" होने से उसी प्रकार वह उनकी "मुहर" भी है।

172. इस धर्मकाल में, इस प्रकरण का रहस्य समस्त मानवजाति के लिए दुःखदायी परीक्षा रहा है। देखो, कितने ही लोगों ने इन शब्दों से जुड़े रहकर उसमें अविश्वास किया जो उनका सच्चा प्रकटकर्ता है। हम पूछते हैं, यह लोग "प्रथम" और "अंतिम" शब्दों का परमात्मा - महिमामंडित हो उसका नाम - के सन्दर्भ में क्या अर्थ करते ? वे यदि मानते हैं कि ये शब्द इस वस्तुगत ब्रह्माण्ड के सम्बन्ध में हैं, तो यह सम्भव कैसे हो सकेगा, जब कि वस्तुओं की दृष्टिगोचर व्यवस्था अभी तक प्रकटतः विद्यमान है ? नहीं, इस सन्दर्भ में "प्रथम" का तात्पर्य "अन्तिम" के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं और "अन्तिम" का "प्रथम" के अतिरिक्त दूसरा नहीं है।

173. जिस प्रकार "अनादि" जिसका कोई "आदि" नहीं है में शब्द "अन्तिम" उसके लिये सच्चे रूप से लागू है जो दृश्य और अदृश्य का शिक्षक है, उसी प्रकार "प्रथम" और "अन्तिम" शब्द उसके प्राकट्य के लिए लागू होते हैं। वे एक ही समय "प्रथम" और "अन्तिम" दोनों के अर्थ प्रदर्शक हैं। "प्रथम की पीठिका पर स्थापित होते हुए वे "अन्तिम" के सिंहासन के भी अधिकारी हैं। यदि कोई विवेकशील नेत्र मिले, तो वह तुरन्त यह बोध कर लेगा कि "प्रथम" और "अन्तिम" के, "प्रकट" और "गुप्त", "आदि" और "अन्त" के अर्थ-प्रदर्शक इन पावन अस्तित्वों, अनासक्ति के इन सारों, इन दिव्य आत्माओं के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं है। और तू यदि "परमात्मा एकाकी था, उसके अतिरिक्त अन्य कोई नहीं था" के पवित्र लोक में उड़ान भरे, तो तू उस सभा-मण्डप में ये सारे नाम नितांत अस्तित्वहीन और पूर्णतः विस्मृत पायेगा। तब तेरे नेत्र इन आवरणों से, उन शब्दों और संकेतों से धुंधले नहीं किए जा सकेंगे। कितना दिव्य और ऐश्वर्ययुक्त है यह स्थान, जिसको जिब्राईल एक गड़रिये से असंरक्षित रहकर, कदापि प्राप्त नहीं कर सकता और आकाश का पक्षी, असहाय रहकर, वहाँ कभी नहीं पहुँच सकता।

174. और अब, तू आस्थावानों के सेनापति अली के इस कथन का अर्थ समझने का प्रयास कर: "भव्यता के आवरणों का भेदन, असहाय।" "भव्यता के इन आवरणों"

में हैं ईश्वरावतार के जीवनकाल में रहने वाले धर्मोपदेशक और विद्वान, जो विचार के और अपने प्रेम के अभाव तथा नेतृत्व की उत्सुकता के कारण ईश्वर के धर्म की शरण में जाने से न केवल चूक गए हैं, बल्कि, जिन्होंने सुमधुर दिव्य संगीत की ओर ध्यान देने से भी इन्कार किया है। "उन्होंने अपने कानों में अपनी उँगलियाँ डाल ली हैं।"[116] और, लोगों ने भी, परमात्मा को पूरी तरह अस्वीकार कर तथा उन्हीं को अपना स्वामी मानकर, इन आडम्बरपूर्ण तथा दम्भी नेताओं की प्राधिकारिता के अन्तगत अपने को रख दिया है, क्योंकि उनके पास सत्य को झूठ से अलग करने के लिए कोई दृष्टि, कोई श्रवण, कोई हृदय नहीं है।

175. लोगों को अपनी ही आँखों से देखने और अपने ही कानों से सुनने के लिये सभी ईशदूतों, संतों और परमात्मा के प्रियजनों द्वारा दिये गये आदेशों की दिव्यतः प्रेरित चेतावनियों के बावजूद, उन्होंने तिरस्कारपूर्वक उनके परामर्श अस्वीकृत किये हैं और अपने धर्म के नेताओं का अंधानुकरण किया है और करते रहेंगे। विद्वज्जनों की विद्वत्ता से विहीन यदि कोई निर्धन तथा अप्रसिद्ध व्यक्ति उनको यह कहकर सम्बोधित करे: "हे लोगो! तुम ईश्वर के संदेशवाहकों का अनुसरण करो।"[117] तो ऐसे कथन पर अत्यन्त विस्मित होकर वे उत्तर देगें: "तेरा क्या मतलब है कि ये सारे धर्मगुरू, अपने समस्त प्राधिकार, अपने ठाठ-बाट और तड़क-भड़क वाले ये सारे ज्ञान के व्याख्याता भूल में हैं और असत्य से सत्य को पृथक करने में विफल रहे हैं ? क्या तू, और तेरे जैसे लोग उसे समझ लेने का दिखावा करते हैं जिसे वे नहीं समझ पाये हैं ?" यदि संख्याओं तथा वस्त्रों की उत्कृष्टता को ज्ञान और सत्य के मानदण्ड माना जाये, तो विगत युग के लोगों को, जिनसे आज के लोग संख्या, ऐश्वर्य तथा शक्ति में कदापि आगे नहीं बढ़ पाये हैं, निश्चित ही श्रेष्ठ और अधिक योग्य माना जाना चाहिए।

176. यह स्पष्ट है कि पावनता के प्राकट्य जब भी प्रकट हुए हैं, उनके दिनों के धर्मगुरूओं ने लोगों को सत्य का मार्ग प्राप्त करने से बाधित किया है। सभी धर्मग्रंथों और दिव्य ग्रंथों के अभिलेख इसे प्रमाणित करते हैं। परमात्मा का ऐसा एक भी दूत प्रकट नहीं हुआ जो अपने दिवस के धर्मयाजकों की निर्मम घृणा, भर्त्सना, अस्वीकृति और अभिशाप का शिकार नहीं हुआ हो। शोक उनके प्रति, उन अत्याचारों के लिए

जो पूर्व में उनके हाथों किए गए। शोकपूर्ण दुर्भाग्य है उनका, उसके लिये जो वे आज कर रहे हैं। भूल की इन प्रतिमूर्तियों से बढ़कर चिन्तनीय भव्यता के कौन से आवरण हैं। परमेश्वर की साधुता की सौगंध! ऐसे आवरणों का भेदन समस्त कार्यों में सर्वाधिक सामर्थ्यवान और उन्हें विदीर्ण कर डालना समस्त कर्मों में सर्वाधिक प्रशंसा के योग्य है। ईश्वर हमारी सहायता करे और तुम्हारी सहायता करे, हे उस चैतन्य के जनो! कि संयोग से उसके प्राकट्य काल में तुम्हें इन कर्मों को सम्पन्न करने हेतु कृपापूर्वक सहायता प्राप्त हो और उसके दिवसों में तुम परमात्मा की उपस्थिति प्राप्त कर सको।

177. इसके अतिरिक्त ''भव्यता के आवरणों'' में ऐसे शब्द हैं जैसे ''अन्तिम पैगम्बर'' आदि जिनको पृथक करना इन अकुलीन तथा दोषपूर्ण आत्माओं की दृष्टि में एक सर्वोच्च प्राप्ति है। इन रहस्यपूर्ण कथनों के कारण ही, ये सभी क्लेशप्रद ''भव्यता के आवरण'' सत्य के प्रकाश के दर्शन से बाधित किए गए हैं। क्या उन्होंने आकाश के उस पक्षी[118] का यह रहस्य उच्चरित करते मधुरगान को नहीं सुना: ''एक हजार फातिमाओं से मैंने सगाई की है, जो सभी अब्दुल्लाह के पुत्र, (अन्तिम पैगम्बर), मुहम्मद की बेटियाँ थीं? देखो, कितने रहस्य ईश्वरीय ज्ञान के मण्डल में अभी तक उदघाटित नहीं हैं और उसके विवेक के कितने सारे रत्न अभी तक उसके अभेद्य कोषों में छिपे हुए हैं। तू यदि अपने हृदय में इनका मनन करे तो यह अनुभूति कर लेगा कि उसके हस्तकौशल का न तो कोई आदि है और न अंत। उसकी दिव्य व्यवस्था की प्रभुता नश्वर प्राणियों की जिह्वा के लिए इतनी विराट है कि उसका वर्णन नहीं किया जा सकता या मानव मन का पक्षी उड़कर उसके पार नहीं जा सकता और उसके धर्मकाल की दूरदर्शिता इतनी रहस्यमय है कि वह मानव मस्तिष्क की समझ से परे है। उनकी सृष्टि किसी अंत से आगे नहीं जा सकी है और वह सर्वदा उस ''अनादि आदि'' और ''अनन्त अन्त'' तक सत्य रहेगा। अपने हृदय में इन शब्दों पर मनन करो और विचार करो कि इन सभी पवित्र आत्माओं के लिए यह किस प्रकार लागू है।

178. इसी भाँति, तू उस शाश्वत सौन्दर्य अली के पुत्र हुसैन के मधुरिम गान का अर्थ समझने का प्रयास कर, जिसने सलमान को सम्बोधित कर ये शब्द कहे थे: ''मैं एक हज़ार आदमों के साथ रहा, प्रत्येक तथा अगले आदम के बीच का अन्तराल पचास हजार वर्ष था और इनमें से प्रत्येक के प्रति मैंने अपने पिता को प्रदत्त उत्तराधिकार

घोषित किया।'' फिर वह कुछ विस्तृत विवरण देते हुए कहते हैं: ''ईश्वर के पथ पर मैंने एक हजार लड़ाइयाँ लड़ी हैं, जिनमें सबसे छोटी और महत्वहीन खैबर की लड़ाई थी, जिसमें मेरे पिता लड़े और अधर्मियों के विरूद्ध संघर्ष किया।'' अब इन दो पारम्परिक कथनों से ''अंत'', ''प्रत्यागमन'' और ''अनादि'' अथवा ''अनन्त सृष्टि'' के रहस्य को समझने का प्रयास करो।

179. हे मेरे प्रिय! दिव्य स्वर-माधुर्य मानव कर्ण के सुनने के प्रयत्नों या मन द्वारा उसके रहस्य ग्रहण करने से परे अपरिमित रूप से उदात्त है। असहाय चींटी उस सर्वमहिमामय के सभा-मण्डप में पग कैसे रख सकती है ? और फिर भी, दुर्बल आत्माएँ विवेक के अभाव में इन गूढ़ वचनों को अस्वीकार करती हैं और ऐसे पारम्परिक कथनों के सत्य पर उंगली उठाती हैं। नहीं, उनके सिवा जो समझ रखते हैं उन्हें कोई नहीं समझ सकता। कहो, वह अंत है जिसके लिए समस्त ब्रह्माण्ड में किसी अंत की कल्पना नहीं की जा सकती और जिसके लिए सृष्टि जगत में किसी आदि की धारणा नहीं की जा सकती। हे धरती के जनसमूहो, उस आदि के प्राकट्यों में प्रकटित उस अंत के वैभव को देखो।

180. कैसी विचित्रता है ! ''एक तरफ तो ये लोग कुरआन की उन आयतों से तथा निश्चय के लोगों के उन पारम्परिक कथनों से जुड़े हैं जिनको उन्होंने अपने हितों के अनुरूप पाया है और दूसरी तरफ उन्हें अस्वीकार करते हैं जो उनकी स्वार्थपूर्ण कामनाओं के विपरीत हैं।'' तुम लोग किताब के कुछ हिस्सों पर यकीन रखते हो और कुछ को नहीं मानते हो?''[119] तुम उसका निर्णय कैसे कर सके जिसे तुम समझते नहीं ? जैसाकि प्रभुता के उस स्वामी ने अपनी उदात्त वाणी में मुहर के बारे में बोलने के पश्चात, अपनी अचूक पुस्तक में कहा है: ''मुहम्मद परमेश्वर के दूत'' और ''पैगम्बरों की मुहर''[120] ने सभी लोगों के समक्ष ''दिव्य उपस्थिति की प्राप्ति'' का वचन प्रकट कर दिया है। पुस्तक के शब्द अविनाशी सम्राट की उपस्थिति की इस प्राप्ति को प्रमाणित करते हैं, जिनमें से कुछ का हमने पहले उल्लेख किया है। ''वह एकमेव सत्य ईश्वर मेरा साक्षी है।'' दिव्य उपस्थिति की प्राप्ति से अधिक स्पष्ट या अधिक उदात्त कुछ भी कुरआन में प्रकट नहीं किया गया

है। यह उनके लिए उत्तम है जिन्होंने इसे प्राप्त किया है, उस दिवस में जिसमें अधिकांश लोग, जैसाकि तुम प्रत्यक्ष देखते हो, उससे विमुख हुए हैं।

181. और फिर भी, पूर्व आयत के रहस्य के जरिए वे बाद की आयत में प्रतिज्ञापित कृपा से इस तथ्य के बावजूद विमुख हुए हैं कि "पुनरूज्जीवन दिवस" में "दिव्य उपस्थिति की प्राप्ति" ग्रंथ में स्पष्ट रूप से वर्णित है। स्पष्ट साक्ष्यों के जरिए यह दिखला दिया गया और सुनिश्चित रूप से प्रतिष्ठित कर दिया गया है कि "पुनरूज्जीवन" का तात्पर्य है अपने धर्म की उद्घोषणा करने के लिए ईश्वरावतार का उदय, और "दिव्य उपस्थिति की प्राप्ति" का अर्थ है उसके प्राकट्य के स्वरूप में उसके सौन्दर्य की उपस्थिति की प्राप्ति। क्योंकि "सत्य ही" कोई आँख उसे देख नहीं सकती, किन्तु वह सबको देख सकता है।"[121] इन सब असंदिग्ध तथ्यों तथा अत्यन्त स्पष्ट वक्तव्यों के बावजूद, वे मूर्खतापूर्वक "मुहर" शब्द से चिपटे हैं और उसकी पहचान से पूर्णतः वंचित रह गये हैं जो अपनी उपस्थिति के दिवस में प्रारम्भ और मुहर दोनों का प्रकाशक हैं। "परमात्मा यदि मनुष्यों को उनके हठधर्मितापूर्ण कर्मों का दण्ड देता, तो वह पृथ्वी पर किसी चलती-फिरती चीज को नहीं छोड़ता! किन्तु एक निश्चित समय तक वह उन्हें छूट देता है।"[122] लेकिन इन सारी चीजों से पृथक, इन लोगों ने यदि "ईश्वर की जो इच्छा होती है सो करता है और जैसा चाहता है निर्दिष्ट करता है" शब्दों से प्रवाहित स्फटिक-निर्मल धाराओं की एक बूँद भी प्राप्त की होती तो उसके धर्मप्रकाशन के प्रधान केन्द्र के विरूद्ध इस प्रकार के अशोभनीय आक्षेप आरोपित न किए होते। परमात्मा का धर्म, समस्त कर्म तथा शब्द, उसकी शक्ति की मुट्ठी में हैं। "समस्त वस्तुएँ उसके सामर्थ्यशाली हाथ में कैद हैं, उसके लिए सभी कुछ सुगम और सम्भव है।" जिसकी वह इच्छा करता है उसे सम्पन्न करता है और जो कुछ वह चाहता है वही सब करता है। "जो कोई 'क्यों' अथवा 'कहाँ' से कहता है उसने ईश-निंदा की है। यदि ये लोग उपेक्षा की नींद त्यागकर उसकी अनुभूति कर लें जो कुछ उनके हाथों ने किया है तो निश्चित ही उनका विनाश हो जाएगा और अपनी ही मर्जी से वे अपने आप को अग्नि - अपने अंत और वास्तविक निवास गृह में झोंक देंगे। क्या उन्होंने इसे नहीं सुना है जो उसने प्रकट किया है: "उससे उसके कर्मों के बारे में नहीं पूछा जायेगा ?"[123] इन

वचनों के प्रकाश में मनुष्य इतना साहसी कैसे हो सकता है कि उस पर सवाल उठाये और निरर्थक बातों में व्यस्त रहे ?

182. कृपालु परमेश्वर! इतनी अधिक है लोगों की मूर्खता और हठधर्मिता कि उन्होंने अपने ही विचारों तथा इच्छाओं की ओर अपने मुँह घुमा लिए हैं और परमेश्वर के ज्ञान तथा इच्छा की ओर अपनी पीठ कर ली है - पवित्र और महिमामण्डित हो उसका नाम।

183. 'न्यायनिष्ठ बनो': यदि ये लोग इन देदीप्यमान शब्दों तथा पवित्र संकेतों को समझते और ईश्वर को "जैसा वह चाहता है करता है।" के रूप में पहचानते तो वे इन चकाचौंध करती मूर्खताओं से कैसे जुड़े रह सकते थे ? नहीं, वे अपनी सम्पूर्ण आत्मा से, जो कुछ वह कहता है, उसे स्वीकर कर लेते और उसके अधीन रहते। वह कहता है: "मैं परमात्मा की सौगन्ध लेकर कहता हूँ! अगर दिव्य आदेश और विधाता की रहस्मय व्यवस्थायें न होतीं तो स्वयं धरती ही इन सभी लोगों को नष्ट कर देती," किन्तु, "वह उन्हें तब तक राहत देगा जब तक एक ज्ञात दिवस का निर्धारित समय नहीं आ जाता।"

184. इस्लामी धर्मव्यवस्था के उदयकाल से बारह सौ अस्सी वर्ष बीत गए हैं और प्रत्येक प्रभातोदय के साथ इन दृष्टिहीन तथा अधम लोगों ने कुरआन का पाठ किया है और फिर भी उस ग्रंथ का एक अक्षर भी ग्रहण करने में विफल रहे हैं। बारम्बार उन्होंने उन आयतों का पाठ किया जो इन पवित्र प्रकरणों को यथार्थ और स्पष्टरूपेण प्रमाणित करती हैं और शाश्वत भव्यता के प्राकट्यों के सत्य की साक्षी देती हैं और इतने पर भी वे उनका प्रयोजन नहीं समझ पाये हैं। वे इस सम्पूर्ण काल में यह अनुभूति भी नहीं कर पाये हैं कि प्रत्येक युग में धर्मग्रंथों तथा पवित्र पुस्तकों के पाठ के अध्येता को उनका अर्थ समझने तथा उनके अन्तरतम रहस्यों का उद्घाटन करने योग्य बनाने के अतिरिक्त अन्य कोई प्रयोजन नहीं है। दूसरे शब्दों में समझे बगैर पठन मनुष्य के लिए किसी काम का नहीं है।

185. और ऐसा हुआ कि किसी दिन एक जरूरतमंद आदमी इस 'आत्मा' से उसके ज्ञान के महासागर के लिए छटपटाता मिलने आया। उससे वार्तालाप करते समय, निर्णय दिवस, पुनरूज्जीवन, पुनर्जीवन तथा लेखा-जोखा के सम्बन्ध में चर्चा हुई। उसने हमसे यह समझाने का आग्रह किया कि इस अद्‌भुत धर्मकाल में संसार के

लोगों को लेखा-जोखा के लिए कैसे प्रस्तुत किया गया, जबकि किसी को उसकी जानकारी नहीं कराई गई ? इस पर, हमने उसकी क्षमता तथा समझ के अनुसार उसको विज्ञान तथा प्राचीन ज्ञान-विवेक के कुछ सत्य प्रदान किये। तत्पश्चात हमने उससे पूछा: "क्या तूने कुरआन नहीं पढ़ी है और क्या तू इस आशीर्वादित आयत से परिचित नहीं है ? "उस दिवस पर न तो मनुष्य और न आत्मा से उसके पाप के विषय में पूछा जायेगा ?"[124] क्या तू यह अनुभूति नहीं करता है कि पूछने का तात्पर्य जिह्वा या वाणी से पूछना नहीं है, जैसाकि ये शब्द स्वयं संकेत देते और सिद्ध करते हैं ? क्योंकि बाद में कहा गया है: "अपराधियों को उनकी मुखाकृति से जाना जायेगा और उनको उनके माथे पर झूलती लटों तथा उनके पैरों से पकड़ा जाएगा।"[125]

186. इस प्रकार संसार के लोगों की जाँच उनकी मुखाकृतियों से की जाती है। उससे उनका अविश्वास, उनकी आस्था और उनका अन्याय सभी कुछ प्रकट हो जाता है। जैसाकि इस दिवस में स्पष्ट है कि दोषी लोग किस प्रकार अपने मुखमण्डल द्वारा जाने गये तथा दिव्य मार्गदर्शन के अनुयायियों से पृथक कर दिये गये। यह लोग, पूर्णतया परमात्मा के निमित्त और उसकी सुप्रसन्नता के अतिरिक्त अन्य किसी कामना से नहीं, अपने हृदय में पढ़ी गई पुस्तक की आयत पर मनन करते तो निश्चित रूप से वह सब पा लेते जिसे वे ढूंढते हैं। उसकी आयतों में वे समस्त वस्तुएँ प्रकट और प्रत्यक्ष पाते, वे बड़ी हो या छोटी, जो इस धर्मकाल में होकर गुजरी हैं। वे उनमें परमात्मा के नामों तथा गुणों के प्राकट्यों के अपनी निवास भूमि से अन्यत्र प्रस्थान के, शासन तथा लोगों के घृणित गर्व और विरोध के और एक निश्चित तथा विशेष रूप से निर्देशित भूमि में सार्वभौम प्राकट्य के निवास एवं स्थापना के सन्दर्भ भी पहचान लेते। फिर भी, उस मनुष्य के अतिरिक्त, जो एक समझने वाले हृदय से युक्त है, इसे कोई नहीं समझे सकता।

187. हम अपने प्रकरण को उससे मुहरबन्द करते हैं जो पूर्वकाल में मुहम्मद के समक्ष प्रकट किया गया था क्योंकि उसकी मुहर उस पवित्र कस्तूरी की सुवास प्रवाहित करती है जो मनुष्यों को अनन्त वैभव के रिज़वान की ओर ले जाती है। उसने कहा और उसके शब्द सत्य हैं: "परमेश्वर शांति के आवास की ओर बुलाता है,"[126] और

जिसको वह चाहता है उसका समुचित पथ-प्रदर्शन करता हैं।''[127] ''उनके लिए शांति का एक आवास उनके प्रभु का सान्निध्य है और वह उनके कार्यों के कारण उनका रक्षक होगा।''[128] उसने यह प्रकट किया है कि उसकी कृपा विश्व को आवृत कर ले, समस्त सत्ता के प्रभु, ईश्वर का गुणगान हो!

188. हमने विविध प्रकार से और बार-बार प्रत्येक प्रकरण का अर्थ प्रस्तुत किया है, ताकि सम्भवतः उच्च या निम्न, प्रत्येक आत्मा अपनी क्षमता तथा पात्रता के अनुसार उससे अपना अंश प्राप्त कर सके। यदि वह किसी तर्क को समझने में असफल रहे तो इस प्रकार से वह एक अन्य सन्दर्भ लेकर अपना प्रयोजन सिद्ध कर सकती है। ''ताकि सभी प्रकार के मनुष्य जान लें कि अपनी प्यास कहाँ बुझायें।''

189. ईश्वर की सौगंध! इस समय धूल पर निवास करता वह दिव्य पक्षी इन सुरीले गीतों के अतिरिक्त हजारों गीत उच्चरित कर सकता है और इन कथनों से पृथक, अगणित रहस्य उद्घाटित करने में समर्थ है। उसके अनुच्चरित शब्दों का प्रत्येक अकेला वर्ण अपरिमितरूप से उस सबसे ऊपर उदात्त है जो पहले प्रकट किया गया है और इस लेखनी से जो कुछ प्रवाहित हुआ है उससे परे अत्यधिक भव्य है। भविष्य उस समय का अनावरण करेगा जब आन्तरिक अर्थ की वधु, ईश्वरेच्छा के निर्देश से, अपने रहस्यमय भवनों से घूँघट उठा कर बाहर आती है और प्राचीन लोक में अपने आपको प्रकट करती है। उसकी अनुमति के बगैर कुछ भी सम्भव नहीं है, उसकी शक्ति का माध्यम लिए बगैर कोई शक्ति ठहर नहीं सकती और उसके अतिरिक्त अन्य कोई ईश्वर नहीं है। सृष्टि जगत उसी का है और प्रभुधर्म उसी का है। सभी उसके धर्मप्रकाशन की उद्घोषणा करते हैं और सभी उसकी चेतना के रहस्यों को अनावृत करते हैं।

190. पिछले पृष्ठों में हमने शाश्वत पावनता के दिवानक्षत्र से उभरते प्रत्येक विभूति को दो स्थान दिये हैं। पहला स्थान सारभूत एकता का है, जिसके विषय में हम पहले बता चुके हैं। ''उनमें से किसी में भी हम अंतर नहीं करते।''[129] दूसरा स्थान अन्तर का है और सृष्टि जगत से तथा उसकी सीमाओं से सम्बन्धित है। इस विषय में, प्रत्येक अवतार को एक विशिष्ट व्यक्तित्व, एक निर्धारित लक्ष्य, एक पूर्वनियत धर्मप्रकाशन और विशेष रूप से अभिचिह्नित सीमायन दिया गया है। उनमें प्रत्येक को एक भिन्न नाम से जाना गया है, विशेष लक्षणों से अंकित किया गया है,

प्रत्येक एक निश्चित लक्ष्य को पूर्ण करता है और प्रत्येक को एक विशिष्ट धर्मप्रकाशन सौंपा गया है। जैसाकि वह कहता है: ''कुछ देवदूतों को हमने दूसरों से श्रेष्ठ बनाया है। कुछ से परमेश्वर ने बात की है, कुछ को उसने ऊपर उठाया तथा उदात्त किया है और मरीयम के पुत्र ईसा को हमने प्रकट चिह्न दिए और हमने पवित्र चेतना से उसे शक्तियुक्त किया है।''[130]

191. उनके शब्द तथा उद्देश्य के इस अन्तर के कारण ही, दिव्य ज्ञान के स्रोतों से प्रवाहित शब्द तथा वचन विविध तथा भिन्न प्रतीत होते हैं। नहीं तो, उनकी दृष्टि में जो दिव्य प्रज्ञा के रहस्यों में प्रवृत्त है, उनके सभी कथन यथार्थ हैं, बल्कि एक सत्य की ही अभिव्यक्तियाँ हैं। हमने जिन स्थानों का वर्णन किया है उनके गुणगान में अधिकांश लोग विफल रहे हैं। अतः वे अवतारों द्वारा कहे गये विभिन्न कथनों से, जो मूलतः एक और समान है, व्याकुलता और निराशा का अनुभव करते हैं।

192. यह सदा स्पष्ट रहा है कि वाणी की भिन्नता को उनके पद की भिन्नता मानी जानी चाहिए। इस प्रकार उनके एकत्व और उत्कृष्ट अनासक्ति के दृष्टिकोण से देखने पर ईश्वरत्व के गुण, दिव्यत्व, सर्वोच्च एकाकीपन और अन्तरतम सार सत्ता के उन सारस्वरूपों के लिए लागू रहे हैं और रहेंगे, क्योंकि वे सब दिव्य धर्मप्रकाशन के सिंहासन पर विराजते हैं और दिव्य गोपनीयता की पीठिका पर स्थापित हैं। उनके प्राकट्य के जरिए ईश्वर का धर्मप्रकाशन होता है और उनकी मुखाकृति द्वारा ईश्वर का सौन्दर्य उद्घाटित होता है। इसी प्रकार से, दिव्य सत्ता के इन प्राकट्यों द्वारा उच्चरित स्वयं परमेश्वर के स्वर सुने गये हैं।

193. उनके दूसरे पद के प्रकाश में देखने पर, जो भिन्नता का पद, विशिष्टता, शारीरिक सीमाबद्धता, मानकों तथा वैशिष्ट्य का पद है,- वे सम्पूर्ण सेवाभाव, पूर्ण आत्मलोप और आत्मनिर्भरता को प्रकट करते हैं। जैसाकि उसने भी कहा है: ''मैं ईश्वर का सेवक हूँ।[131]'' ''मैं तुम्हारी भाँति मात्र एक मनुष्य हूँ।''[132]

194. इन अकाट्य तथा पूरी तरह प्रमाणित वक्तव्यों से तू अपने पूरे प्रश्नों का अर्थ समझने का प्रयास कर, जिससे तू ईश्वर के धर्म में दृढ़ हो सके और उसके ईशदूतों तथा प्रियजनों के वचनों की विविधता से भ्रमित न हो।

195. यदि कोई सर्वस्वीकृत ईश्वरावतार घोषित करे कि "मैं ईश्वर हूँ!" तो वह वस्तुतः सत्य कहता है और इसमें संदेह नहीं किया जा सकता, क्योंकि यह बार-बार दर्शाया जा चुका है कि उनके धर्मप्रकाशन के जरिए उनके गुण तथा नाम, ईश्वर का धर्मप्रकाशन उसका नाम और उसके गुण संसार में प्रकट किए जाते हैं, इस प्रकार उसने प्रकट किया है: "जो (मुट्ठी भर मिट्टी) तुमने फेंकी वह तुमने नहीं, ईश्वर ने फेंकी थी।"[133] और उसने यह भी कहा है: "सत्य ही, जिसने तेरे प्रति अपनी भक्ति का वचन दिया, उसने वस्तुतः ईश्वर के प्रति भक्ति का वचन दिया।"[134] और यदि उनमें से कोई यह कहे: "मैं ईश्वर का संदेशवाहक हूँ" तो भी वह सत्य, असंदिग्ध सत्य बोलता है। जैसाकि वह कहता है: "मुहम्मद तुममें से किसी मनुष्य के पिता नहीं है, बल्कि वह ईश्वर के संदेशवाहक हैं।" इस प्रकाश में देखे जाने पर, वे सब उस आदर्श सम्राट, उस अपरिवर्तनशील सार के संदेशवाहक मात्र हैं और यदि वे यह घोषित करें: "मैं ईशदूत की मुहर हूँ।" तो वे सब सत्य बोलते हैं, क्योंकि वे सब एक व्यक्ति, एक आत्मा, एक चेतना, एक सत्ता, एक प्रकटीकरण हैं। वे सभी "आदि" और "अंत" के, "प्रथम" और "अंतिम" के, "दृश्य" और "अदृश्य" के प्राकट्य हैं, जो उससे सम्बन्धित हैं जो चेतना का सार है, और यदि वे कहें: "हम ईश्वर के सेवक हैं।," सत्य है, क्योंकि उन सबको सेवाभाव की उस पराकाष्ठा में प्रकट किया गया है," जिसे सम्भवतः कोई मनुष्य प्राप्त नहीं कर सकता। इस प्रकार जिन क्षणों में सत्ता के ये सार प्राचीन और शाश्वत पावनता के महासागरों में गहरे निमग्न थे, या जब उन्होंने दिव्य रहस्यों के सर्वोच्च शिखरों की उड़ान भरी तब उन्होंने अपनी वाणी को दिव्यत्व की वाणी, स्वयं ईश्वर का आह्वान होने का दावा किया। यदि सुविचारित निर्णय की दृष्टि से देखा जाये, तो यह माना जाएगा कि इसी अवस्था में उन्होंने अपने को उसके सम्मुख जो सर्वव्यापी निर्मल है, पूरी तरह आत्मलोप और विलोपन की अवस्था में माना है। क्या तुम्हारा विचार है कि उन्होंने अपने को पूर्णतः शून्य माना है और उस दरबार में अपने उल्लेख को ईश-निन्दा माना है। क्योंकि ऐसे सभामण्डप में स्वत्व का रंचमात्र भी होना आत्म-स्वीकृति तथा स्वतंत्र अस्तित्व का प्रमाण है। जिन्होंने इस सभामण्डप को प्राप्त किया है उनकी दृष्टि में ऐसा विचार ही अपने आप में गम्भीर सीमा-भंजन है। फिर उसकी विद्यमानता में यदि किसी अन्य का उल्लेख किया

जाये, अगर मनुष्य का हृदय, उसकी जिह्वा, उसका मन या उसकी आत्मा उस परमप्रिय के अतिरिक्त किसी और में व्यस्त हो जाये, अगर उसके नेत्र उसके अतिरिक्त किसी अन्य के मुखड़े के दर्शन करें, अगर उसके कान उसकी वाणी के अतिरिक्त किसी अन्य स्वर-माधुर्य की ओर प्रवृत्त हों, और अगर उसके पग उसके मार्ग के अतिरिक्त किसी अन्य मार्ग पर चलें, तो यह कितना अधिक दुःखद होगा।

196. इस काल में ईश्वर का समीर प्रवाहित है और उसकी चेतना समस्त वस्तुओं में व्याप्त है। ऐसा है उसकी कृपा का प्रवाह कि लेखनी गतिहीन और जिह्वा अवाक् रह जाती है।

197. इस पद के कारण उन्होंने अपने लिए दैवी स्वर का दावा किया है, जबकि संदेशवहन के अपने पद के कारण उन्होंने अपने को ईश्वर का संदेशवाहक घोषित किया है। प्रत्येक घटना में उन्होंने ऐसी वाणी को स्वर दिया है जो उस अवसर की अपेक्षाओं के अनुरूप थी और इन सभी घोषणाओं को अपने से जोड़ा है। ये घोषणाएं, जो दिव्य धर्मप्रकाशन के क्षेत्र से सृजन के क्षेत्र तक और उस अलौकिक जगत से पार्थिव अस्तित्व के जगत तक फैली हुई हैं। इस प्रकार तथ्य यह है कि उनका कोई भी वचन हो, चाहे वह दिव्यता, प्रभुता, ईशदूतकर्म, संदेशवाहक पद, धर्मसंरक्षक पद, देवत्व या सेवाभाव से सम्बन्धित हो, वह संदेह की छाया से परे सम्पूर्ण सत्य है। अतः अपने तर्क के समर्थन में हमने जो कथन उद्धृत किये हैं उन पर अवश्य ही ध्यान देकर विचार किया जाये, जिससे उस अदृश्य के प्राकट्यों और पावनता के दिवास्रोतों की विविध वाणियाँ आत्मा और मन को विचलित करना बन्द कर दें।

198. सत्य की विभूतियों द्वारा उच्चरित उन शब्दों पर अवश्य ही विचार किए जाने की आवश्यकता है और यदि उनका महत्व नहीं समझा जा सके, तो ज्ञान के न्यासियों से प्रकाश की तलाश की जानी चाहिए, ताकि वे उसकी व्याख्या करें और उनका रहस्य उद्घाटित करें, क्योंकि किसी मनुष्य को अपनी अपूर्ण समझ के अनुसार पवित्र शब्दों की व्याख्या करना और उन्हें अपनी इच्छाओं तथा कामनाओं के विपरीत पाने पर उनके सत्य को अस्वीकार और परित्याग करना योग्य नहीं है। आज इस युग के धर्मोपदेशकों तथा शास्त्रज्ञों का यही ढंग है, जिनका ज्ञान तथा विद्या की पीठिकाओं पर अधिकार है और जिन्होंने अज्ञान को ज्ञान की संज्ञा दी है

तथा अन्याय को न्याय कहा है। यदि वे अपने निरर्थक मनोरथों द्वारा गढ़ी गई छवियों के बारे में 'सत्य के प्रकाश' से पूछते और वे अपने मनोरथों और ग्रंथ की अपनी समझ से अलग उनका उत्तर पाते तो वे निश्चय ही उसकी भर्त्सना करते जो समस्त ज्ञान का आधार है। प्रत्येक युग में ऐसी घटनायें घटित हुई हैं।

199. उदाहरणार्थ, जब अस्तित्व के स्वामी मुहम्मद से नये चन्द्रमाओं के सम्बन्ध में पूछा गया, तो उन्होंने परमात्मा द्वारा दी गई आज्ञा के अनुसार उत्तर दिया: "वे मनुष्यों के लिये समय-मापक हैं।"[135] इस पर जिन्होंने उनकी बात सुनी, उन्होंने उनको अज्ञानी पुरूष मानकर उनकी भर्त्सना की।

200. इसी प्रकार, "चेतना" से सम्बन्धित आयत में, वह कहता है: "वे तुझसे चेतना के बारे में पूछेंगे। कहो, "चेतना मेरे प्रभु की आज्ञा है।"[136] जैसे ही मुहम्मद का उत्तर मिला, उन सबने हो-हल्ला मचाकर यह कहते हुए विरोध किया: "देखो! एक अज्ञानी पुरूष, जो चेतना को जानता तक नहीं है, अपने को दिव्य ज्ञान का प्रकाशक कहता है।" और अब युग के धर्मगुरूओं को देखो, जिन्होंने उसके नाम से सम्मानित किए जाने के कारण और यह पाकर कि उनके पूर्वजों ने उसका धर्मप्रकाशन स्वीकार किया है, उसके सत्य के प्रति अंधसमर्पण कर दिया है। निरीक्षण करो, कि ये लोग आज यदि ऐसे प्रश्नों के उत्तर में ऐसे जवाब पाते, तो वे बेहिचक उन्हें अस्वीकार करके छोड़ देते - नहीं, वे पुनः वही झूठे आक्षेप करते, जैसे उन्होंने इस दिवस में किये हैं। यह सब, इस तथ्य के बावजूद कि सत्ता के ये सार ऐसी मनोनुकूल कल्पनाओं से ऊपर अत्यन्त उदात्त हैं और इन सारे व्यर्थ कथनों से परे, अपरिमेय रूप से भव्य तथा प्रत्येक हृदय की समझ से परे हैं। उस महाज्ञान से तुलना करने पर उनका तथाकथित ज्ञान नितान्त झूठा है और उनकी सारी समझ भारी भूल के अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं हैं। नहीं, दिव्य विवेक की इन खानों और शाश्वत ज्ञान की इन निधियों से जो कुछ प्रसारित होता है, वही सत्य है, और सत्य के अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है। कहावत है: "ज्ञान एक बिन्दु है जिसे मूर्खों ने विस्तारित कर दिया है।"[137] हमारे तर्क का यह एक प्रमाण है और पारम्परिक कथन है: "ज्ञान एक प्रकाश है जिसे परमात्मा जिसके हृदय में चाहता है प्रकाशित करता है।" हमारे वक्तव्य की यह एक पुष्टि है।

201. चूँकि उन्होंने ज्ञान का अर्थ ही नहीं समझा है और उस नाम से अपनी ही कल्पना से बनायी गई तथा अज्ञान की प्रतिमूर्तियों से उत्पन्न सोच का आह्वान किया है, अतः उन्होंने ज्ञान के स्रोतों पर विपदाऐं ढायीं हैं जिनके बारे में तूने सुना और देखा है।

202. उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति[138] जो अपने ज्ञान और उपलब्धियों के लिए प्रसिद्ध तथा अपने को लोगों के सर्वप्रधान नेताओं में मानता था, ने अपनी पुस्तक में सच्चे ज्ञान के सभी व्याख्या करने वालों पर झूठे आरोप लगाए तथा उनकी निन्दा की है। उसकी सम्पूर्ण पुस्तक में उसके स्पष्ट वक्तव्यों तथा संकेतों से यह पूरी तरह साफ़ है। हमने बहुधा उसके बारे में सुना था। अतः उसकी रचनाओं को पढ़ना चाहा। यद्यपि हमें दूसरे लोगों के लेखों का अध्ययन करने की इच्छा कभी नहीं हुई, फिर भी चूंकि कुछ व्यक्तियों ने उसके बारे में हमसे प्रश्न पूछा था, अतः उसकी पुस्तकों को उद्धृत करने की आवश्यकता हमने अनुभव की, जिससे हम ज्ञान और विवेक के साथ अपने प्रश्नकर्ताओं को उत्तर दे सकें। हालाँकि, उसकी रचनायें अरबी भाषा में उपलब्ध नहीं थीं। एक दिन एक व्यक्ति ने हमें सूचना दी कि उसकी इरशाद-उल-अवाम[139] शीर्षक की एक कृति इस शहर में मिल सकती है। इस शीर्षक से ही हमें छल और मिथ्या अहंकार की गंध आई क्योंकि उसने अपने विद्वान होने की कल्पना की थी और शेष लोगों को अज्ञानी माना था। उसका मूल्य वस्तुतः अपनी पुस्तक के लिए चुने गए शीर्षक से ही ज्ञात हो गया था। यह स्पष्ट हो गया कि उसका लेखक स्वार्थ और कामना के मार्ग का अनुसरण कर रहा था और अज्ञान तथा दोष के बियाबान में भटक गया था। क्या तुम सोचते हो कि, वह सुप्रसिद्ध पारम्परिक कथन भूल गया था, जो कहता है: ''जो जानने योग्य है वह ज्ञान है; और सामर्थ्य तथा शक्ति, सभी उसके सृजन हैं।'' तो भी, हमने वह पुस्तक मंगवाई और उसे कुछ दिन अपने पास रखा। सम्भवतः वह दो बार मेरे पास आई। दूसरी बार संयोग से हमें मुहम्मद की 'मेराज' की कहानी मिल गई, जिनके बारे में कहा गया था: ''तू न होता तो मैंने ग्रहों की रचना न की होती।'' हमने देखा कि उसने कोई बीस या अधिक विज्ञानों की गणना की थी जिनके ज्ञान को उसने ''मेराज'' का रहस्य समझाने के लिए अत्यावश्यक माना था। उसके कथनों से हमने जाना कि जब तक कोई मनुष्य उन सभी की गहन समझ न रखता हो, तब तक वह इस उत्कृष्ट तथा उदात्त विषय का समुचित विवेक कभी प्राप्त नहीं कर सकता। विशेष

विज्ञानों में थे तत्वज्ञान सम्बन्धी आदर्श, रसायन विद्या, और प्राकृतिक जादू का विज्ञान। ऐसी व्यर्थ तथा हेय विद्याओं को इस आदमी ने दिव्य ज्ञान के पवित्र तथा बाध्यकारी रहस्यों की समझ की पूर्वापेक्षाएं माना था।

203. कृपालु प्रभु! ऐसी है उसकी समझ की माप और फिर भी, देखो कि उसने ईश्वर के असीम ज्ञान के प्रतिरूपों पर कैसी निन्दाऐं और कैसे-कैसे मिथ्या-दोष आरोपित किए। कितनी उचित और सच्ची है यह कहावत: "तू अपने आक्षेप उनके सम्मुख उछालता है जिन्हें उस एक सत्य ईश्वर ने अपने सातवें आसमान के खजानों का न्यासधारी बनाया है ?" एक भी विवेकवान हृदय या मन ने, एक भी विद्वान या बुद्धिमान ने इन निरर्थक कथनों पर ध्यान नहीं दिया है और फिर भी, प्रत्येक विवेकशील हृदय के समक्ष यह कितना स्पष्ट तथा प्रत्यक्ष है कि यह तथाकथित विद्या उसके द्वारा अस्वीकृत है और सदैव रहेगी जो एक सत्य परमात्मा है। इन विज्ञानों का ज्ञान, जो सच्चे विद्वानों की नज़रों में अत्यधिक घृणित है, "मेराज" के रहस्यों की समझ के लिए आवश्यक कैसे माना जा सकता है, जबकि स्वयं "मेराज" का स्वामी इन सीमित तथा अस्पष्ट विद्याओं के एकमात्र वर्ण से कभी बोझिल नहीं हुआ और अपना देदीप्यमान हृदय इन मिथ्या-आकर्षण से भरी भ्रातिन्यों से कभी धूमिल नहीं हुआ ? कितना सच कहा है उसने: "समस्त मानवी प्राप्तियाँ एक लंगड़े गधे पर चलती हैं, जबकि सत्य, वायु पर सवार होकर, आकाश के पार गमन करता है।" ईश्वर की सदाशयता की सौगंध ! जो कोई इस "मेराज" के रहस्य की थाह लेने की इच्छा करे और इस महासागर से एक बूँद की लालसा करे और यदि उसके हृदय का दर्पण पहले से इन विद्याओं की धूल से धुँधला हो, और इस रहस्य का प्रकाश उसमें प्रतिबिम्बित हो, इसके पूर्व, उसे स्वयं को अवश्य ही स्वच्छ एवं विशुद्ध करने की आवश्यकता होगी।

204. इस दिवस में, जिन्होंने प्राचीन ज्ञान के महासागर में गोता लगाया है और जो दिव्य विवेक की नौका में विचरण करते हैं, वे लोगों की ऐसी व्यर्थ कामनाओं से निषेध करते हैं। उनके प्रभामण्डित वक्ष, स्तुति हो उस परमेश्वर की, ऐसी विद्या के प्रत्येक चिह्न से निर्मल और ऐसे घातक आवरणों से ऊपर अत्यंत उदात्त है। समस्त आवरणों में सबसे अधिक घने इस आवरण को हमने प्रियतम के प्रति प्रेम की अग्नि से भस्मसात किया है - उस आवरण को जिसका उल्लेख इस कहावत में

हुआ है: ''सभी आवरणों में सर्वाधिक पीड़ादायी है ज्ञान का आवरण।'' उसकी भस्म पर, हमने दिव्य ज्ञान का मण्डप बनाया है। हमने, ईश्वर का गुणगान हो! उस अतिशयप्रिय के सौन्दर्य की अग्नि से, ''परमानन्द के परदे'' जला दिये हैं। हमने उसके अतिरिक्त जो संसार की कामना और उसकी भव्यता है, सभी कुछ मानव हृदय से दूर कर दिया है। हम किसी ज्ञान से नहीं बल्कि उसके ज्ञान से जुड़े हैं और अपना हृदय उसके प्रकाश की देदीप्यमान भव्यताओं के अतिरिक्त कहीं स्थिर नहीं करते हैं।

205. जब हमने देखा कि उसका एक प्रयोजन लोगों को यह अनुभूति कराना था कि उसका इन सारी विद्याओं पर अधिकार है तो हमें अत्यधिक आश्चर्य हुआ और फिर भी, मैं ईश्वर की सौगंध लेकर कहता हूँ, कि दिव्य ज्ञान के चारागाहों से प्रवाहमान एक भी श्वांस उसकी आत्मा पर कभी प्रवाहित नहीं हुई, उसने प्राचीन ज्ञान के एक भी रहस्य को कभी उद्घाटित नहीं किया। नहीं, यदि उसके समक्ष कभी ज्ञान का अर्थ उद्घाटित कर भी दिया जाता तो उसका हृदय निराशा से भर जाता और उसके सारे अस्तित्व की नींव हिल जाती। उसके निम्नतर कोटि के और अर्थहीन वक्तव्यों के बावजूद, देखो कि उसके दावे अमर्यादा की किन ऊँचाइयों तक पहुँच गये हैं।

206. कृपालु प्रभु ! लोग जिस तरह से उसके चतुर्दिक एकत्र हुए हैं और उसके व्यक्तित्व के प्रति भक्ति दिखलाई है उस पर हमें आश्चर्य होता है। उड़ती धूल से संतुष्ट ये लोग अपने मुख उसी की ओर किये हुए हैं और पीठ के पीछे उसे फेंक दिया है, जो स्वामियों का स्वामी है। कौओं के काँव-काँव से संतुष्ट होकर और काले कौअे की आकृति के प्रति मुग्ध होकर उन्होंने बुलबुल के सुमधुर स्वर और गुलाब के सौन्दर्य को भुला दिया है। इस दिखावटी पुस्तक के अध्ययन से कैसी अकथनीय भ्राँतियाँ प्रकट हुई हैं। वे इतनी अयोग्य हैं कि कोई लेखनी उनका वर्णन नहीं कर सकती और इतनी अधम हैं कि क्षण भर भी उन पर ध्यान नहीं दिया जा सकता। तथापि, यदि कोई कसौटी होती, तो वह सत्य को झूठ से, प्रकाश को अंधकार से और धूप को छाया से तुरन्त पृथक कर देती।

207. जिन विज्ञानों का इस कपटी ने अस्तित्व बताया है उनमें से एक रसायन विद्या है। हम आशा करते हैं कि कोई राजा या सर्वोच्च शक्ति सम्पन्न मनुष्य इस विज्ञान को मनोरथ के क्षेत्र से तथ्य के क्षेत्र में और मात्र आडम्बर के तल से वास्तविक

उपलब्धि के तल पर उतारने के लिए उससे कहे। काश यह, अनपढ़ और विनम्र सेवक, जिसने ऐसी चीजों का कभी कोई आडम्बर नहीं दिखाया, न उनको सच्चे ज्ञान की कसौटी ही माना, उसके कार्य को हाथ में ले पाता, जिससे उसके द्वारा सत्य को झूठ से पृथक करके जाना जा सकता। किन्तु किस लाभ के लिए इस समूची पीढ़ी ने हमें अपने भालों से गहरे घाव ही दिए और हमारे होठों के लिए उसने जो प्याला चुना वह विष का था। हमारी गर्दन पर अभी तक जंजीरों के निशान हैं और हमारे शरीर पर घोर क्रूरता के साक्ष्य अंकित हैं।

208. इस मनुष्य की उपलब्धि, उसके अज्ञान, विवेक और विश्वास के बारे में देखो कि उस 'ग्रंथ' ने जो समस्त वस्तुओं को अपने में समाहित करता है, क्या प्रकट किया है: "सचमुच, ज़क़्कूम का वृक्ष[140], 'असीम'[141] का आहार होगा।" और फिर कुछ शब्दों के उपरान्त वह कहता है: "इसका आस्वादन कर, क्योंकि तू वस्तुतः सामर्थ्यशाली करीम है।" विचार करो कि कितने स्पष्ट और प्रकट रूप से ईश्वर की दोषमुक्त पुस्तक में उसका वर्णन किया गया है। इसके अतिरिक्त, इस व्यक्ति ने विनम्रता का पाखण्ड करते हुए, स्वयं अपनी पुस्तक में अपने आपको "असीम सेवक" कहा है: ईश्वरीय ग्रंथ में "असीम", जनसामान्य के बीच शक्तिशाली, नाम से "करीम" है।

209. आशीर्वादित आयत पर मनन करो, कोई भी वस्तु चाहे हरी हो या शुष्क वह अचूक ग्रंथ में लिपिबद्ध है।"[142] इन शब्दों का भाव तेरे हृदय की पाती पर अंकित हो जाये। इसके बावजूद, भारी जनसमूह उसके प्रति भक्तिभाव रखता है। उन्होंने ज्ञान और न्याय के मूसा को अस्वीकृत कर दिया है और वे अज्ञान के सामिरी[143] से प्रभावित हुए हैं। उन्होंने दिव्य तथा शाश्वत आकाश में जगमगाने वाले दिवानक्षत्र से आँखें फेर कर उसकी गरिमा की पूरी तरह उपेक्षा की है।

210. हे मेरे भ्रात! एक दिव्य भूगर्भ से ही दिव्य ज्ञान के रत्न उत्पन्न हो सकते हैं और मात्र उपवन में ही रहस्यमय पुष्प की सुवांस ली जा सकती है, प्राचीन विवेक का धवल पुष्प निष्कलंक हृदय के अतिरिक्त अन्यत्र कहीं नहीं खिल सकता। "उपजाऊ भूमि में उसके पौधे अपने स्वामी की अनुमति से प्रचुरता में अंकुरित होते हैं और उस भूमि में जो उर्वर नहीं है वे मात्र अत्यल्प प्रस्फुटित होते हैं।"[144]

211. चूँकि स्पष्टतः यह दर्शा दिया गया है कि जिन्होंने दिव्य रहस्यों की दीक्षा ली है वे ही आकाश-विहंग द्वारा उच्चरित मधुर गीतों को सुन सकते हैं, अतः प्रत्येक व्यक्ति के लिये यह परम आवश्यक है कि वह प्रकाशित हृदय वाले तथा दिव्य रहस्यों के खजानों से परमात्मा के धर्म की गूढ़ता और पवित्रता के दिवास्रोतों के कथनों से मर्मयुक्त संकेतों के ज्ञान की प्रार्थना करे। अर्जित ज्ञान की मदद से नहीं, बल्कि पूर्णतः ईश्वर की सहायता और उसकी कृपा के उद्गारों के जरिए ही ये रहस्य उद्घाटित हो पाऐंगे। "अतः तुम लोग पूछो उनसे जो धर्मग्रंथों के संरक्षक हैं, यदि तुम उसे नहीं जानते हो।"[145]

212. किन्तु हे मेरे भ्रात, जब कोई सच्चा जिज्ञासु चिरपुरातन के ज्ञान की ओर जाने वाले मार्ग में खोज के लिए अपने पग बढ़ाने का निश्चय करे, तो सबसे पहले उसे अपना हृदय जो ईश्वर के आन्तरिक रहस्यों के प्रकटीकरण की पीठिका है, से समस्त अर्जित ज्ञान की मलिनतापूर्ण धूल और आसुरी मनोरथ के प्रतिरूपों के निर्देशों से स्वच्छ तथा विशुद्ध अवश्य कर ले। वह अपने हृदय को, जो प्रियतम के सुस्थिर प्रेम का मंदिर है, प्रत्येक मैल से स्वच्छ अवश्य करे और अपनी आत्मा को उस सबसे जिसका सम्बन्ध जल तथा मिट्टी से है, समस्त छायारूप तथा क्षणिक आसक्तियों से निर्मल करे। अपना हृदय वह इतना स्वच्छ कर ले कि उसमें प्रेम तथा घृणा का कोई अवशेष न रह जाये, ताकि ऐसा न हो कि प्रेम अंधा होकर उसे भूल में प्रवृत्त कर दे, अथवा घृणा सत्य से दूर भटका दे। जैसाकि तू इस दिवस में प्रत्यक्ष देखता है कि ऐसे प्रेम तथा घृणा के कारण ही अधिकांश लोग किस प्रकार उस अनश्वर मुखमण्डल से दूर हुए हैं, दिव्य रहस्यों के मूर्त स्वरूपों से दूर भटक गये हैं और विस्मृति तथा भूलों के जंगल में विचरण कर रहे हैं। जिज्ञासु अवश्य ही प्रत्येक पल ईश्वर में अपना सम्पूर्ण भरोसा रखे, पृथ्वी के जनों का परित्याग करे, धूल के जगत से स्वयं को अनासक्त करे और उससे आसक्त रहे जो प्रभुओं का प्रभु है। वह अवश्य ही स्वयं को किसी अन्य से उच्च समझने का प्रयास न करें, अपने हृदय की पाती से गर्व तथा मिथ्या अभिमान का प्रत्येक चिह्न अवश्य धो डाले, अवश्य ही धैर्य और समर्पण का भाव रखें, मौन धारण किये रहे और निरर्थक वार्ता से बच कर रहे, क्योंकि जिह्वा सुलगती अग्नि है और वाचलता घातक विष है। भौतिक अग्नि शरीर को भस्म करती है जबकि जिह्वा की अग्नि हृदय और

आत्मा दोनों को विनष्ट कर देती है। पहली अग्नि का प्रभाव मात्र एक बार तक रहता है, किन्तु दूसरी का प्रभाव सौ वर्षों से अधिक भी बना रहता हैं।

213. सच्चे जिज्ञासु को पीठ पीछे की गई निन्दा को भी एक दुःखद त्रुटि समझना चाहिये और इसके प्रभाव से अपने को अलग रखना चाहिए, क्योंकि पीठ पीछे निन्दा से हृदय-दीप बुझ जाता है और आत्मा का प्रकाश भी धुँधला पड़ जाता है। उसे थोड़े से ही संतोष करना चाहिये और अनुचित इच्छा-आकांक्षाओं से मुक्त रहना चाहिये। उसे सत्संग करना चाहिये तथा अभिमानी और सांसारिक लिप्सा के पुतलों की संगत से दूर रहना चाहिये। प्रत्येक प्रातः उसे प्रभु-स्मरण करना चाहिये तथा हृदय की सम्पूर्ण आस्था के साथ प्रभु को प्राप्त करने का यत्न करना चाहिये। उसे अपने सभी भ्रमपूर्ण विचारों को प्रभुस्मरण की अग्नि से भस्मसात कर देना चाहिये। उसे निर्धनों की सहायता करनी चाहिये। उसे पशुओं के प्रति दया-भाव रखना चाहिये। उसे अपने प्रिय प्रभु के लिये अपना सर्वस्व न्यौछावर करने में जरा भी हिचकना नहीं चाहिये तथा कुमार्गियों की मिथ्या बातों में पड़कर कभी भी सत्यमार्ग से विमुख नहीं होना चाहिए। दूसरों के साथ उसे वैसा व्यवहार नहीं करना चाहिये जो वह स्वयं अपने साथ किया जाना पसन्द न करता हो। उसे ऐसा वायदा नहीं करना चाहिए जिसे वह पूरा न कर सकता हो। उसे पाप कर्म करने वालों से दूर रहना चाहिये और उनके पापों के क्षमा-दान हेतु प्रार्थना करनी चाहिए तथा उनकी दयनीय दशा के कारण उनसे घृणा नहीं करनी चाहिए, क्योंकि कोई नहीं जानता कि स्वयं उसकी अपनी अवस्था क्या होगी। अनेक पापियों ने अपने अंतिम समय में प्रभु पर सम्पूर्ण भरोसा किया और उसके अनन्त अमृत का पान कर देवलोक को प्राप्त हुआ और कितनी बार ऐसा हुआ कि एक परम भक्त अपने देह-विसर्जन के समय अपनी आस्था से फिसल गया और नरकाग्नि का ग्रास बना। इन तर्कसंगत और शक्तिसम्पन्न वचनों से अवगत कराने का हमारा उद्देश्य जिज्ञासु को यह बताना है कि उसे प्रभु के अतिरिक्त अन्य सभी कुछ को क्षण भंगुर मानकर उस प्रभु में अपना ध्यान लगाना चाहिये जो सम्पूर्ण श्रद्धा का पात्र है।

214. उच्च विचार वालों के ये गुण हैं और आध्यात्मिक रूझान के प्रमाण चिह्न हैं। वैसे पथिकों के लिये जो सकारात्मक ज्ञान के पथ पर चलते हैं, आवश्यक गुणों की चर्चा करते हुये इनके विषय में लिखा जा चुका है। जब कोई अनासक्त पथिक और समर्पित जिज्ञासु इन शर्तों को पूरा कर लेता है, तब ही उसे एक सच्चा जिज्ञासु कहा जा सकता है। "जो कोई भी मुझे पाने के प्रयास करता है"[146] और जब कभी

भी वह इन शब्दों में अन्तर्निहित शर्तों को पूरा करता है तब ही वह इस आशीर्वाद से विभूषित किया जाता है। ''अपने पथ पर अवश्य ही हम उसका मार्गदर्शन करेंगे।''[147]

215. जब जिज्ञासु के हृदय में सच्ची उत्सुकता, अथक प्रयत्न, समर्पित भक्ति, प्रज्वलित प्रेम, असीम आनंद और अपार संतोष की ज्योति प्रदीप्त होगी और प्रभु की प्रेममयी कृपा-वायु उसकी आत्मा में प्रवाहित होगी तब ही भ्रम का अंधकार मिटेगा, शंका और कुप्रवृत्तियों की धुंध छंटेगी और ज्ञान तथा आस्था का प्रकाश उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व को प्रकाशित करेगा। उस समय परमात्मा का शुभ संदेश लेकर रहस्यमय दूत प्रभु के नगर से शुभ प्रभात की भाँति उदित होगा और ज्ञान की तुरही से अज्ञानता के अंधकार में सोये हुये हृदय और आत्मा को जगायेगा। तब प्रभु की कृपा तथा प्रेम जिज्ञासु को वह नवजीवन प्रदान करेगा कि वह स्वयं को नवनेत्र, नवकर्ण, नवहृदय और नवमस्तिष्क से विभूषित पायेगा। वह विश्व के अवतार के चिह्नों को समझ पायेगा और तब ही आत्मा के गुप्त रहस्यों के प्रति ध्यानमग्न हो सकेगा। प्रभु प्रदत्त दृष्टि से वह प्रत्येक अणु में अनंत आस्था के उच्च मापदण्डों की ओर ले जाने वाले द्वार के दर्शन करेगा। तब वह सभी वस्तुओं में दिव्य प्रकटीकरण के रहस्यों और अनन्त प्रकटीकरण के प्रमाणों को प्राप्त कर पायेगा।

216. मैं ईश्वर की सौगंध खाकर कहता हूँ ! अगर वह, जो मार्गदर्शन के पथ पर चलता है और इस महिमामंडित उच्च स्थान को पाने के लिये न्याय की ऊँचाइयों को पाने की कामना रखता है तो वह सुदूरलोक से आती ईश्वर की सुरभि से सुवासित होगा और सभी वस्तुओं के दिवाबसंत से ऊपर उठकर दिव्य मार्गदर्शन की सुनहरी सुबह के दर्शन करता है। तब उसे प्रत्येक वस्तु, चाहे वह कितनी भी सूक्ष्म क्यों न हो, प्रकटीकरण के रूप में दिखेगी, जो उसे उसके प्रियतम, उसकी खोज के लक्ष्य की ओर ले जायेगी। उस जिज्ञासु का विवेक इतना गहन होगा कि वह सच और झूठ के बीच विभेद कर पायेगा जिस प्रकार वह सूर्य और उसकी छाया के अन्तर को समझ पाता है। अगर पूर्व के सुदूर क्षेत्र में भी प्रभु की सुरभि बह रही होगी तो वह पश्चिम के सुदूर क्षेत्र में रहकर भी उसकी अनुभूति कर पायेगा। इसी प्रकार वह ईश्वर के सभी चिह्नों को स्पष्ट रूप से समझ पायेगा - ईश्वर की अद्‌भुत वाणी, उसके महान कार्य, उसकी शक्तिशाली प्राप्तियों का अन्तर मनुष्य के कथन और कर्मों से स्थापित कर पायेगा, जिस प्रकार जौहरी रत्नों और पत्थर के बीच के अंतर

को और मनुष्य वसंत और पतझड़, तपन और शीत के अंतर को समझ पाता है। तब मनुष्य की आत्मा से समस्त सांसारिक मोह-माया की भ्राँतियाँ मिट जायेगी, तब वह अपने प्रियतम के उच्छवास को दूर से ही अनुभव कर लेगा और उसकी सुरभि से आकर्षित हो आस्था के नगर में प्रवेश करेगा। वहाँ वह उसके अनादि ज्ञान के रहस्यों को देखेगा, उसके निगूढ़ वचनों को उस नगर के पल्लवित वृक्ष के पत्तों की खड़खड़ाहट से समझ जायेगा। वह अपने अन्तःकर्ण और वाह्यकर्ण-दोनों से उस नगर की धूल से उठती स्वामियों के स्वामी के स्तुतिगान और महिमा का श्रवण कर पायेगा और अपने अन्तर्चक्षु से वह ''प्रत्यावर्तन'' और ''नवजागरण'' के रहस्यों को खोज पायेगा। सभी नामों और गुणों के सम्राट ने उस नगर के लिये कैसी अकथनीय महिमा, कैसे चिह्न, कैसे प्रकटीकरण, कैसी भव्यता निर्धारित की है ! इस नगर में आकर बिना जल के प्यास बुझ जाती है और बिना अग्नि के ईश्वर की प्रेमाग्नि प्रज्वलित हो उठती है। यहाँ की घास के प्रत्येक तिनके में महाज्ञान के रहस्य छिपे हैं और प्रत्येक गुलाब के पौधे पर दिव्यानंद से अभीभूत असंख्य कोकिलाओं की कूक सुनाई पड़ती है। इसके अद्भुत कंद, पुष्प उस अनन्त प्रज्वलित झाड़ी के रहस्य बतलाते हैं और इसकी मंद सुरभि के पावन उच्छवास मसीही आत्मा की अनुभूति कराते हैं। स्वर्ग के बिना भी यह अपार सम्पदा प्रदान करता है और मृत्युविहीन अनश्वरता प्रदान करता है। इसकी पाती-पाती में असीम आनन्द भरा है और प्रत्येक प्रकोष्ठ में अनन्त रहस्य छिपे पड़े हैं।

217. जिन्होंने साहस के साथ ईश्वर की इच्छा के खोज के अथक प्रयास किये हैं, वे जब एक बार ईश्वर के अतिरिक्त सभी कुछ का त्याग कर देगें तब उस नगर से इस तरह जुड़ जायेंगे कि इससे विछोह का एक पल भी सोच के परे हो जायेगा। वे सम्बुल पुष्प की सुरभि में दोषमुक्त प्रमाण और इसकी बैकुंठ-कोकिला की मधुर स्वरलहरियों के संकेतों से सम्बलित होंगे। एक हज़ार साल के बाद एक बार फिर वह नगर नवीन होगा, फिर से सजाया-संवारा जायेगा। वह नगर और कुछ नहीं बल्कि भगवद्वाणी है जो प्रत्येक युग में प्रकट की जाती है। मूसा के युग में यह पंचग्रंथ थी, ईसा के काल में गॉस्पल, ईशदूत मुहम्मद के समय में कुरआन और इस युग में बयान और इस ईश-काल में 'जिसे प्रभु प्रकट करेगा', उसका अपना महाग्रंथ, वह महाग्रंथ जिससे जुड़े हैं पहले के सभी ईश-काल के ग्रंथ, वह महाग्रंथ जो उन सबके बीच सर्वोपरि है। इन नगरों में आध्यात्मिक आहार आशीषों के साथ दिये गये हैं और दोषमुक्त आनन्द का प्रावधान किया गया है। जो आहार वे देते हैं

वह स्वर्ग का आहार है और जो चेतना वे भरते हैं वह ईश्वर का अविनाशी आशीष है। अनासक्त आत्माओं को वे एकता का उपहार देते हैं, दीन-हीन को धनधान्य से भर देते हैं और उन्हें ज्ञान का प्याला देते हैं जो अज्ञानता के बियाबान में भटकते हैं। ये सभी मार्गदर्शन, आशीष, ज्ञान और समझ, आस्था और आश्वस्ति उन सबको दी जाती है जो आसमान और धरती पर हैं और जो इन नगरों में गुप्त और संचित है।

218. उदाहरण के लिए, कुरआन मुहम्मद के लोगों के लिए एक अभेद्य दुर्ग रही। उनके दिनों में जिस किसी ने उसमें प्रवेश किया, वह आसुरी हमलों, धमकाती बर्छियों, आत्मा को निगल जाने वाले संदेहों और शत्रु की ईश-निंदा से भरी कानाफूसियों से रक्षित हुआ। शाश्वत और उत्तम फलों, विवेक के फलों का एक भाग उसे उस दिव्य वृक्ष से प्रदान किया गया। ज्ञान की सरिता के अमृत-जल पीने के लिए और दिव्य एकता के रहस्यों की मदिरा चखने के लिए दी गई।

219. जिन सारी चीजों की अपेक्षा लोगों ने मुहम्मद के प्रकटीकरण और उनके नियमों के सम्बन्ध में की थी, उन्हें देदीप्यमान भव्यता के उस रिज़वान में प्रकट और प्रत्यक्ष पाया जाना था। वह ग्रंथ मुहम्मद के बाद अपने लोगों के लिए एक स्थायी साक्ष्य निर्मित करता है, क्योंकि उसके आदेश निर्विवाद हैं और उसके वचन अचूक हैं। सभी को ''वर्ष साठ''[148] तक उसके नियमों के पालन की आज्ञा दी गई, जो ईश्वर के अद्भुत प्राकट्य के अवतरण का वर्ष है। वह ग्रंथ ऐसा ग्रंथ है जो जिज्ञासु को दिव्य उपस्थिति के रिज़वान की ओर ले जाता है और जिस किसी ने अपने देश को त्याग कर एक जिज्ञासु के मार्ग का अनुसरण किया है, उसको वह सदास्थायी पुनर्मिलन के मण्डप में प्रवेश कराता है। उसका मार्गदर्शन कभी चूक नहीं कर सकता, उसके साक्ष्य से बढ़कर कोई अन्य साक्ष्य नहीं हो सकता। दूसरे सारे पारम्परिक कथन, अन्य सभी पुस्तकें तथा अभिलेख ऐसी विशिष्टता से रहित हैं, क्योंकि पारम्परिक कथन तथा जिन्होंने उनको कहा है दोनों, उस ग्रंथ के मूलपाठ द्वारा पूर्णतया सम्पुष्ट तथा सिद्ध हैं। इसके अतिरिक्त, पारम्परिक कथनों में स्वतः अत्यधिक भिन्नता है और अनेक प्रकार की अस्पष्टताएँ हैं।

220. स्वयं मुहम्मद ने, अपने ध्येय का अन्त निकट आने पर, ये शब्द कहे: ''सत्यतः, मैं तुम्हारे बीच अपने युगल और प्रभावशाली साक्ष्य को छोड़ता हूँ: ईश्वर का ग्रंथ

और अपना परिवार। "ईशदूतों के प्रकटीकरण के उद्गम और दिव्य मार्गदर्शन की अतल गहराइयों में यद्यपि अनेक पारम्परिक कथन प्रकट हुए थे, फिर भी उन्होंने केवल उसी ग्रंथ का उल्लेख किया, उसके जरिए उसे ही खोजियों के लिए सबसे सामर्थ्यशाली उपकरण और साक्ष्य के रूप में, 'पुनरूज्जीवन दिवस' तक के लिए लोगों का एक मार्गदर्शक नियुक्त किया।

221. ईश्वर ने जो कुछ अपने ग्रंथ में लोगों के मार्गदर्शन के साक्ष्य के रूप में स्थापित किया है, उस पर ध्यान देकर अटल दृष्टि, विशुद्ध हृदय तथा निर्मल भावना से विचार करो, जिसे उच्च तथा निम्न दोनों तरह के लोगों द्वारा प्रमाणिक माना जाता है। इस साक्ष्य से हम दोनों और संसार की समस्त मानवजाति भी अवश्य जुड़े, जिससे उसके प्रकाश के माध्यम से हम सत्य और असत्य, मार्गदर्शन तथा भटकाव की ओर जाने और उनके बीच के अन्तर को समझ सकें। चूँकि मुहम्मद ने अपने साक्ष्य अपने ग्रंथ तथा अपने परिवार तक ही सीमित किये हैं, और जबकि परिवार अब नहीं है, तब सिर्फ रह जाता है उनके साक्ष्य के रूप में मात्र उनका ग्रंथ।

222. अपने ग्रंथ के आरम्भ में वह कहता है: "अलिफ! लाम! मीम! इस ग्रंथ के बारे में कोई संदेह नहीं है: वह ईश्वर का भय रखने वाले लोगों के लिए एक मार्गदर्शन है।"[149] कुरआन के असम्बद्ध अक्षरों में दिव्य सार के रहस्य अन्तर्निहित हैं और उनकी सीपियों में उसकी एकता के मोती छिपे हैं। स्थानाभाव से हम इस समय उनका वर्णन नहीं कर रहे हैं। बाह्य रूप से वे मुहम्मद को ही संकेतित करते हैं; जिन्हें परमात्मा यह कहकर सम्बोधित करता है: "हे मुहम्मद, इस ग्रंथ के बारे में, जिसे दिव्य एकता के गगन से अवतरित किया गया है, कोई संदेह या अनिश्चितता नहीं है। इसमें उनके लिए मार्गदर्शन है जो ईश्वर से भय करते हैं।" विचार करो, कैसे उन्होंने उन सबके लिए, जो आकाश में तथा पृथ्वी पर हैं, मार्गदर्शन के रूप में इसी ग्रंथ कुरआन को नियुक्त तथा आज्ञापित किया है। दिव्य अस्तित्व और अज्ञेय सार हेतु उन्होंने स्वयं साक्ष्य दिया है कि सारे संशय तथा अनिश्चितता से परे यह ग्रंथ 'पुनरूज्जीवन दिवस' न आने तक समस्त मानवजाति का मार्गदर्शक है और अब हम पूछते हैं, कि इस अत्यन्त अतिविशिष्ट साक्ष्य को वह दिव्य उद्गम जिसकी परमात्मा ने घोषणा की है और उसे मूर्तिमंत सत्य उद्घोषित किया है, संदेह और

अविश्वास से देखना क्या इन लोगों के लिए उचित है ? इस चीज से विमुख होना क्या इनके लिये उचित है जिसे उसने ज्ञान के सर्वोन्नत शिखरों की प्राप्ति और उस ग्रंथ के अतिरिक्त अन्य किसी की तलाश न करने के लिये मार्गदर्शन का सर्वोच्च उपकरण नियुक्त किया है ? मनुष्यों के असंगत और मूर्खतापूर्ण कथनों को वे उनके मनों में अविश्वास के बीज कैसे बोने दे सकते हैं ? और अब वे ऐसे व्यर्थ विवाद कैसे करते रह सकते हैं कि किसी व्यक्ति ने ऐसा या वैसा कहा है, अथवा कहीं कुछ हुआ ही नहीं ? यदि कोई वस्तु ईश्वर के ग्रंथ के अतिरिक्त विचारणीय होती जो एक अधिक शक्तिशाली साधन और मानवजाति के लिए अधिक निश्चित मार्गदर्शन सिद्ध हो सकती, तो क्या वह उसे आयत में प्रकट करने से रह जाते ?

223. उपर्युक्त आयत में प्रकट ईश्वर की अप्रतिरोध्य आज्ञा तथा सुस्थिर इच्छा से अलग न होना हमारे लिए अपरिहार्य है। हम पवित्र तथा अद्‌भुत धर्मग्रंथों को स्वीकारें, क्योंकि ऐसा न करके हम इस आशीर्वादित वचन के सत्य को स्वीकार नहीं कर पाये हैं। यह स्पष्ट है कि जो क़ुरआन के सत्य की स्वीकृति में विफल हुआ है वह वस्तुतः पूर्ववर्ती सभी धर्मग्रंथों के सत्य को स्वीकारने से चूक गया है। मात्र यही उस आयत का प्रकट निहितार्थ है। यदि हम उसके आन्तरिक अर्थों की व्याख्या करें और उसके अप्रकट रहस्यों को अनावृत करें तो उनके वर्णन के लिये अनन्तकाल भी पर्याप्त नहीं होगा और न संसार ही उन्हें सुन पाने में समर्थ होगा। सत्यतः, परमात्मा हमारे कथन का साक्षी है।

224. एक अन्य अनुच्छेद में वह इसी प्रकार कहता है: "और यदि तुम उसे लेकर संशयग्रस्त हो जिसे हमने अपने सेवक के पास भेजा है, तो उसी के समान एक सूरा प्रस्तुत करो और अपने गवाहों को परमात्मा के निकट बुलाओ, यदि तुम सत्यनिष्ठ मनुष्य हो।"[150] देखो, कितना उच्च स्थान और कितना बड़ा सद्‌गुण है इन वचनों का, जिन्हें उसने अपना सर्वाधिक सुनिश्चित साक्ष्य, अपना अचूक प्रमाण, अपनी सर्वव्यापी शक्ति का साक्ष्य और अपनी इच्छा की शक्ति का एक प्रकटीकरण घोषित किया है। उसने, उस दिव्य सम्राट ने, सभी वस्तुओं पर अपने ग्रंथ की आयतों की निर्विवाद परमोच्चता घोषित की है जो उसके सत्य को प्रमाणित करती हैं, क्योंकि अन्य प्रमाणों तथा प्रतीकों से तुलना करने पर, दिव्यतः प्रमाणित शब्द सूर्य की भाँति चमकते हैं, जबकि अन्य सभी तारों जैसी हैं। संसार के मनुष्यों के

लिए वे स्थायी साक्ष्य, निर्विवाद प्रमाण और उस आदर्श सम्राट का जगमगाता प्रकाश हैं। उनकी उत्कृष्टता अनूठी है, उनके सद्‌गुणों का पार कोई भी नहीं पा सकता। वे दिव्य मोतियों का खजाना और दिव्य रहस्यों का भण्डार हैं। वे सर्वदा बाध्यकारी बंधन, सुदृढ़-डोर, उर्वतुल-बुस्का, कभी न बुझने वाली अग्नि की संरचना करते हैं। दिव्य ज्ञान सरिता उनसे प्रवाहित होती है और उसकी प्राचीन तथा सर्वप्रज्ञ की अग्नि उसके जरिए प्रभासित होती है। यही अग्नि, एक पल में, निष्ठावानों के हृदय में प्रेम की ज्वाला प्रज्वलित करती है, और शत्रु के हृदय में प्रमाद की शिथिलता उत्पन्न कर देती है।

225. हे मित्र! ईश्वर की आज्ञा को टाल नहीं देना, बल्कि अपने दिव्य साक्ष्य के रूप में उसने जो निर्दिष्ट किया है, उसे स्वीकारना और उसके अधीन रहना ही योग्य है। इस उत्पीड़ित आत्मा के लिए यह स्थान इतना अधिक सारगर्भित है कि उसे प्रदर्शित तथा उसकी व्याख्या नहीं की जा सकती। परमात्मा सत्य बोलता है और मार्ग दिखलाता है। सत्य ही वह अपने समस्त लोगों से उच्च, सामर्थ्यशाली तथा उपकारी है।

226. इसी प्रकार, वह कहता है: "ऐसे हैं ईश्वर के वचन: सत्यता के साथ हम तेरे प्रति उनका वर्णन करते हैं, किन्तु यदि वे ईश्वर तथा उसके वचनों को अस्वीकार करते हैं तो किस प्रकटीकरण के माध्यम से वे विश्वास करेंगे?" तू यदि इन वचनों का निहितार्थ ग्रहण करे, तो तू इस सत्य को पहचान लेगा कि ईशदूतों से बड़ा कोई प्राकट्य कभी प्रकट नहीं किया गया है और उनके प्रकटित शब्दों के साक्ष्य से बढ़कर सामर्थ्यवान कोई साक्ष्य पृथ्वी पर कभी नहीं दिखाई दिया है। नहीं, उसके सिवा जो वह प्रभु, तेरा परमेश्वर चाहता है, कोई अन्य साक्ष्य इस साक्ष्य से कभी बढ़ कर नहीं हो सकता।

227. एक अन्य स्थान पर वह कहता है: "शोक प्रत्येक असत्यवादी, पापी के लिए, जो उसके प्रति पाठ किए ईश-वचनों को सुनता है और तदुपरान्त, मानो उसने उनको सुना ही नहीं, गर्व भरे तिरस्कार का हठ करता है। उसे एक वेदनापूर्ण दण्ड की बात बतला दो।"[151] इस वचन में छिपे अर्थ अकेले ही, सबको जो आकाश और पृथ्वी पर हैं, सन्तुष्ट करते हैं, यदि लोग अपने प्रभु के वचनों पर विचार करें।

क्योंकि तू सुनता है कि लोग कैसे उस दिवस में दिव्यतः - प्रकटित वचनों की तिरस्कारपूर्वक उपेक्षा करते हैं, मानों वे सभी चीजों में सबसे निकृष्ट हो और फिर भी, इन वचनों से बड़ी कोई चीज कभी प्रकट नहीं हुई है, न कभी दुनिया में प्रकट होगी। उनसे कहो: "हे असावधान लोगो! तुम वही करते हो जो तुम्हारे पूर्वजों ने एक बीते युग में किया था। अपनी निष्ठाहीनता के वृक्ष से जो फल उन्होंने पाये, वही तुम पाओगे। शीघ्र ही तुम अपने पूर्वजों के निकट पहुँचोगे और उनके साथ तुम नारकीय अग्नि में निवास करोगे। एक कुत्सित निवास स्थान! अत्याचारियों का निवास स्थान।"

228. फिर एक और स्थान पर वह कहता है: "जब वह हमारी किसी आयत से परिचित हो जाता है तो वह उसका उपहास करने की ओर प्रवृत होता है। एक लज्जाजनक दण्ड उनके लिये है!"[152] लोगों ने ठिठोली करते हुए यह कह कर मन्तव्य प्रकट किया: "तुम एक अन्य चमत्कार करो और हमें एक अन्य चिह्न दो!" एक ने कहा: "आकाश का एक हिस्सा अब हमारे ऊपर गिराओ।,"[153] और दूसरे ने: "तेरे समक्ष यदि यह सत्य हो, तो आकाश से हमारे ऊपर पत्थरों की वर्षा करो।"[154] जैसे इस्राईल के लोग मूसा के समय पृथ्वी की अधम वस्तुओं से आकाश की रोटी की अदला-बदली करते थे, उसी प्रकार इन लोगों ने अपनी मलीन, अपनी पापपूर्ण और अपनी व्यर्थ इच्छाओं से दिव्यतः प्रकटित आयतों के आदान-प्रदान का प्रयास किया है। इसी प्रकार आज के दिन तू देखता है कि यद्यपि आध्यात्मिक अवलम्बन दिव्य दयालुता के आकाश से अवतरित हुआ है और उसकी स्नेहिल सौजन्यता के मेघों से और समस्त अस्तित्व के प्रभु के आदेश से, उसकी फुहार बह रही है। जीवन के सागररूपी-हृदय के रिज़वान में लहलहा रहे हैं, फिर भी श्वांनों की भाँति क्षुधातुर ये लोग सड़े-गले माँस के चतुर्दिक एकत्र हो गये हैं और खारे झील के ठहरे जल से संतुष्ट हो गये हैं। कृपालु प्रभु! कैसा विचित्र है इन लोगों का व्यवहार! वे मार्गदर्शन के लिए शोर-गुल करते हैं, जबकि, जो समस्त वस्तुओं का मार्गदर्शन करता है और उसकी पताकाएं पहले से ही फहराई जा चुकी हैं। वह ज्ञान की अस्पष्ट गूढ़ताओं में उलझे हैं, जबकि वह जो सारे ज्ञान का सार हैं, सूर्य सदृश्य प्रकाशमान हो रहा है। सूर्य को वे अपनी स्वयं की आँखों से देख रहे हैं, फिर भी उसके प्रकाश के प्रमाण के लिए उस समुज्ज्वल प्रभामण्डल से प्रश्न करते हैं। बासंती बौछारों को वे अपने पर बरसता देख रहे हैं, फिर भी उस अनुकम्पा का एक साक्ष्य

तलाशते हैं। सूर्य का प्रमाण उसका प्रकाश है, जो प्रकाशित होता है और समस्त वस्तुओं पर छा जाता है। बौछार का प्रमाण उसकी अनुकम्पा है जो जीवन परिधान से विश्व को सम्पन्न तथा नवीकृत करती है। हाँ, दृष्टिहीन लोग सूर्य से उसकी ऊष्मा के अतिरिक्त कोई बोध नहीं ले सकते और ऊसर भूमि दयालुता की बौछारों का कोई अंशलाभ नहीं पा सकती है। "विस्मय मत करो यदि कुरआन में अनास्थावान लोग अक्षरों की पहचान के अतिरिक्त कोई बोध नहीं करते हैं, क्योंकि अंधे लोग सूर्य में ताप के अतिरिक्त कुछ नहीं महसूस कर पाते हैं।"

229. एक अन्य लेखांश में वह कहता है: "जब हमारी स्पष्ट आयत पढ़कर उनको सुनायी जाती है तब उनका एक मात्र तर्क यह होता है: "यदि तुम सत्य बोलते हो, तो हमारे पूर्वजों को वापस लाओ!"[155] देखो, सब पर समान रूप से बरसने वाली दयालुता की इन विभूतियों से उन्होंने कैसे मूर्खतापूर्ण साक्ष्य चाहे हैं! उन्होंने उन वचनों पर आक्षेप किया, जिनका एक अकेला अक्षर आसमानों तथा पृथ्वी की सृष्टि से महत्तर है और जो स्वार्थ तथा कामना की घाटी के मृतकों को आस्था की चेतना से जीवन्त करते हैं और यह कहते हुए कोलाहल मचाया: "हमारे पूर्वजों को उनकी समाधियों से शीघ्र बाहर लाकर दिखलाओ।" ऐसा दुराग्रह और गर्व उन लोगों का था। इन आयतों में प्रत्येक संसार के मानव समूहों के लिए एक अचूक साक्ष्य और उसके सत्य का एक महिमामण्डित प्रमाण है। उनमें प्रत्येक सत्यतः समस्त मानवजाति को सन्तुष्ट करता है, यदि तू ईश्वरीय आयतों का चिन्तन करे। उपर्युक्त आयत में रहस्यों के मोती छिपे पड़े हैं। चाहे जो व्याधि हो, जो चिकित्सा वह प्रस्तुत करता है वह कभी विफल नहीं हो सकती है।

230. जो यह मानते हैं कि ग्रंथ और उसके वचन सामान्यजनों के लिए कदापि एक साक्ष्य नहीं हो सकते उनके निरर्थक विवाद पर ध्यान मत दो, क्योंकि वे न तो उनका अर्थ ग्रहण करते हैं और न उसके मूल्य की सराहना करते हैं। फिर भी, पूर्व और पश्चिम दोनों के लिए ईश्वर का अचूक साक्ष्य कुरआन के अतिरिक्त दूसरा अन्य कुछ नहीं है। यदि वह मनुष्यों की समझ के परे होती तो वह समस्त लोगों के लिए एक सार्वभौम साक्ष्य कैसे घोषित हो सकती थी ? यदि उनका विवाद सत्य हो तो फिर किसी की अपेक्षा नहीं होगी, न ईश्वर को जानना ही उनके लिए आवश्यक

होगा, क्योंकि दिव्य सत्ता का ज्ञान उसके ग्रंथ के ज्ञान से बढ़कर है और सामान्य लोगों में उसे समझने की क्षमता नहीं होगी।

231. ऐसा वाद-विवाद पूर्णतया मिथ्या तथा अस्वीकार्य है। यह पूरी तरह गर्व तथा अहंकार के परिणामस्वरूप होता है। इसका उद्देश्य लोगों को दिव्य कृपा के रिज़वान से भटकाना और लोगों पर अपने अधिकार की लगाम कसना है। फिर भी, ईश्वर की दृष्टि में, ये सामान्य लोग अपने धार्मिक नेताओं से असीमित रूप से श्रेष्ठ और उच्च हैं जो उस एक सत्य परमेश्वर से विमुख हो गए हैं। उसके शब्दों की समझ और आकाश के पक्षियों के स्वरों की बोधगम्यता किसी प्रकार मानवीय ज्ञान पर निर्भर नहीं है। वह हृदय की शुद्धता, आत्मा की पावनता तथा चेतना की स्वतंत्रता पर पूर्णतया निर्भर है। यह साक्ष्य उनके द्वारा दिया गया है जो आज विद्या के स्वीकृत मानकों के एक शब्द मात्र से रहित होते हुए भी, ज्ञान की उच्चतम पीठिकाओं के अधिकारी हैं और उनके हृदय का उपवन, दिव्य कृपा की बौछारों के जरिए, विवेक के गुलाबों तथा समझ के बहुरंगी पुष्पों से सुसज्जित हैं। हृदय के सच्चे जनों के लिए यह उत्तम है कि सामर्थ्यशाली दिवस के प्रकाश में उनका अंश है।

232. इसी तरह, वह कहता है: "वे जो ईश्वर की आयतों और उससे मिलने का विश्वास नहीं करते, वे मेरी दयालुता से नाउम्मीद होंगे और उन्हें कष्टप्रद सज़ा मिलेगी।"[156] इसी तरह, "वे कहते हैं, "क्या हम एक दीवाने कवि के लिए अपने देवताओं को त्याग देंगे ?"[157] इस वचन का अर्थ स्पष्ट है। वचनों के प्रकट किए जाने के पश्चात उन्होंने जो आंकलन किया उसे देखो। उन्होंने उसे एक कवि कहा, परमेश्वर के वचनों पर आक्षेप किया, और यह कह कर चीत्कार कर उठे: "उसके ये शब्द प्राचीन ईशदूतों द्वारा कही कथाओं पर आधारित हैं।" इससे उनका तात्पर्य था कि जिन वचनों को प्राचीन अवतारों ने कहा है उन्हीं को मुहम्मद ने संग्रहित कर ईश्वर का वचन कहा है।

233. इसी भाँति, इस दिवस में, तूने लोगों को इस प्रकटीकरण पर वैसा ही दोषारोपण करते सुना है। वे कहते हैं : "उसने ये वचन प्राचीन शब्दों से संकलित किए हैं," अथवा "ये वचन बनावटी हैं।" व्यर्थ और अहंकारी हैं ये कथन, निम्न है उनकी दशा और स्थान।

234. उन अस्वीकृतियों तथा भर्त्सनाओं के पश्चात, जिनको उन्होंने कहा और जिनका हमने उल्लेख किया है, उन्होंने यह कह कर विरोध जताया: "हमारे धर्मग्रंथों के अनुसार मूसा तथा ईसा के बाद किसी भी स्वतंत्र ईशदूत को दिव्य प्रकटीकरण के विधानों को समाप्त करने का अधिकार नहीं है। नहीं, जिसे प्रकट होना है वह आवश्यक रूप से उस विधान को पूर्ण करेगा।" इस पर, समस्त दिव्य प्रकरणों का सूचक इस सत्य की साक्षी देता है कि उस सर्वदयामय की कृपा का प्रवाह कभी रुका नहीं है, यह वचन प्रकट किया गया है: "यूसुफ़ तुम्हारे पास इससे पहले स्पष्ट प्रतीक लेकर आया, लेकिन जिस संदेश को लेकर वह तुम्हारे पास आया तुमने उस पर संदेह करना बंद नहीं किया। अंततः जब वह मर गया, तो तुमने कहा, "ईश्वर किसी प्रकार से उसके पश्चात संदेशवाहक नहीं भेजेगा।" इस प्रकार परमात्मा उसे सही राह से विमुख कर देता है जो आज्ञाओं का उल्लंघन करते हैं और शंकालु प्रवृत्ति के होते हैं।"[158] अतः इस वचन से समझ लो और निश्चित रूप से जान लो कि प्रत्येक युग के लोगों ने ग्रंथ के एक शब्द से जुड़कर ऐसे व्यर्थ तथा असंगत कथन विवाद करते हुए कहे हैं कि संसार में पुनः कोई ईशदूत प्रकट नहीं किया जाएगा। जैसाकि ईसाई धर्मोपदेशकों ने, गॉस्पल के जिस वचन का हम पहले उल्लेख कर चुके हैं उसे दृढ़ता से थामे हुए यह समझाने का प्रयास किया है कि गॉस्पल का नियम किसी भी समय रद्द नहीं किया जाएगा और कोई स्वतंत्र ईशदूत पुनः प्रकट नहीं किया जाएगा, जब तक वह गॉस्पल के नियम की पुष्टि नहीं करता है। अधिकांश लोग इस आध्यात्मिक रोग से पीड़ित हो गए हैं।

235. जैसा कि तू देखता है कि क़ुरआन के लोगों ने कैसे, प्राचीन लोगों की तरह, "अंतिम पैगम्बर" शब्दों से अपनी आँखों पर परदा पड़ने दिया है। फिर भी, वे स्वयं इस आयत की साक्षी देते हैं : "कोई उसकी व्याख्या नहीं जानता है सिवा ईश्वर के और उनके जो समस्त ज्ञान से सुसंस्थापित हैं।"[159] जब वह समस्त ज्ञान में सुस्थापित है, जो उसकी आत्मा, रहस्य तथा सार है, उसे प्रकट करता है, जो उसकी कामना के रंचमात्र से विलग होते हैं, तो वे बुरी तरह उसका विरोध करते हैं और निर्लज्जतापूर्वक उसे अस्वीकार करते हैं। इनको तूने पहले भी सुना और देखा है। ऐसे कर्म और शब्द धर्म के नेताओं द्वारा भड़काए गये हैं, जो किसी ईश्वर की नहीं बल्कि अपनी ही कामना की उपासना करते हैं, जो किसी के नहीं बल्कि भौतिक

सम्पदा के भक्त हैं, जो शिक्षा के गहन आवरणों में लिपटे हैं और जो उसकी अस्पष्टताओं में फँसकर भूल के मरूस्थलों में खो गये हैं। जैसाकि अस्तित्व के प्रभु ने स्पष्ट रूप से घोषित किया है: "तू क्या सोचता है? जिसने अपनी वासनाओं का एक ईश्वर बना लिया हो और जिससे परमात्मा एक ज्ञान के जरिए भूल कराता हो और जिसके कान तथा जिसका हृदय उसने बन्द कर दिया हो और जिसकी दृष्टि पर उसने एक परदा डाल दिया है - ईश्वर द्वारा उसकी अस्वीकृति के पश्चात, कौन किसी को ऐसे मार्ग दिखाएगा ? तब क्या तुझे चेतावनी नहीं दी जाएगी ?"[160]

236. यद्यपि "जिससे परमात्मा एक ज्ञान के जरिए भूल कराता है" का बाह्य तात्पर्य यही है जो प्रकट किया गया है, फिर भी हमारे लिए यह युग के उन धर्मोपदेशकों को संकेतित करता है जो ईश्वर के सौन्दर्य से विमुख हो गये हैं; और जिन्होंने अपने स्वयं के मनोरथों तथा इच्छाओं से निर्मित अपने ही ज्ञान से जुड़े रहकर ईश्वर के दिव्य संदेश तथा प्रकटीकरण की निंदा की है। "कहो: वह एक महत्वपूर्ण संदेश है, जिससे तुम दूर भागते हो।"[161] इसी प्रकार वह कहता है: "और जब हमारी आयतें उनके समक्ष पढ़ी जातीं हैं तो वे कहते हैं; "यह महज एक मनुष्य है जो तुम्हारे पूर्वजों की आराधना से तुमको विमुख कर देना चाहता है।" और वे कहते हैं, "यह एक गढ़े हुए झूठ की अपेक्षा अन्य कुछ नहीं हैं।"

237. ईश्वर की पवित्र वाणी सुनो और उसकी मधुर तथा अनश्वर स्वर-लहरी पर ध्यान दो। देखो, कैसे उसने उनको दृढ़ चेतावनी दी है जिन्होंने ईश्वर के वचनों को अस्वीकार किया है और उनको त्याग दिया हैं जिन्होंने उसके पवित्र वचनों को नकारा है। विचार करो, लोग दिव्य उपस्थिति के कौसर से कितनी दूर भटक गये हैं और उस निर्मल सौन्दर्य के सम्मुख आध्यात्मिक रूप से उन आश्रयहीनों की निष्ठाहीनता तथा अहंकार कितना कष्टप्रद रहा है। यद्यपि प्रेमलसौजन्य तथा अनुकम्पा के उस सार ने उन क्षणभंगुर प्राणियों को अनश्वरता के क्षेत्र में प्रवेश कराया और उन निराश्रित आत्माओं का सच्ची सम्पदा की पावन सरिता की ओर मार्गदर्शन किया, फिर भी कुछ ने उन "समस्त प्राणियों के प्रभु" पर "ईश-निन्दक" होने का आरोप लगाया, अन्य लोगों ने उस पर "वह व्यक्ति जो लोगों को आस्था

और सच्चे विश्वास के मार्ग से रोकता है।'' होने का आरोप लगाया और कुछ दूसरों ने उसे ''उन्मत्त'' घोषित किया।

238. इसी प्रकार तू इस दिवस में देखता है कि कैसे निम्नकोटि के दोषारोपणों के साथ उन्होंने 'अमरत्व के रत्न' पर धावा बोला है और कैसे अकथनीय अत्याचारों से उसको लाद दिया है जो विशुद्धता का स्रोत है। यद्यपि ईश्वर ने अपने सम्पूर्ण ग्रंथ में और अपनी पवित्र तथा अमर पाती में उनको चेतावनी दी है जो प्रकटित वचनों को नकारते हैं तथा उनका परित्याग करते हैं और उनके लिए जो उन्हें स्वीकारते हैं अपनी कृपा घोषित की है, फिर भी उन असंख्य मिथ्या आक्षेपों को देखो जो उन्होंने ईश्वर की शाश्वत पावनता के नूतन आकाश से प्रकटित किए गये वचनों के विरूद्ध किए। यह, इस तथ्य के बावजूद कि किसी आँख ने कृपा का इतना महान प्रवाह नहीं देखा है, न किसी कान ने स्नेहिल सौजन्यता के ऐसे प्रकटीकरण के बारे में सुना है। ऐसी कृपा तथा प्रकटीकरण प्रस्तुत किए गये हैं कि प्रकटित वचन सर्वकृपालु की दयालुता के मेघों से बरसती बासन्ती फुहारों की भाँति दिखायी दिए हैं। ''स्थिरता से सम्पन्न'' ईशदूतों में जिनकी उच्चता तथा महिमा सूर्य के सदृश प्रकाशित है, प्रत्येक को एक ग्रंथ से सम्मानित किया गया है जिसे सभी ने देखा है और जिसके वचनों को समुचित रूप से निश्चित किया गया है। जबकि वे वचन जो दिव्य दयालुता के इस मेघ से बरसे हैं इतने अधिक हैं कि अभी तक कोई उनकी संख्या का अनुमान लगाने में समर्थ नहीं हुआ है। कोई बीस ग्रंथ इस समय उपलब्ध हैं। अनेक अभी भी हमारी पहुँच से परे हैं। कितने ही लूट लिए गये और शत्रु के हाथों में जा पड़े, जिनके विषय में कोई नहीं जानता।

239. हे भ्रात, हम अपने नेत्र खोलें, उनके शब्द पर चिन्तन करें और ईश्वरावतारों की आश्रयदायी छाया को तलाशें, ताकि संयोग से हम ग्रंथ के अचूक परामर्शों से चेतावनी पा सकें और पवित्र पातियों में उल्लिखित उपदेशों पर ध्यान दें, ताकि हम पदों के प्रकटकर्ता पर आक्षेप न लगा सकें, ताकि हम पूरी तरह उसके धर्म के प्रति अपने को अधीन कर सकें और सम्पूर्ण हृदय से उसके नियम को अपना सकें, जिससे शायद हम उसकी दया के दरबार में प्रवेश प्राप्त कर लें और उसकी कृपा के सागर-तटों पर निवास करने लगें। वह वस्तुतः अपने सेवकों के प्रति दयालु और क्षमाशील है।

240. और इसी प्रकार, वह कहता है: "कहो, हे ग्रंथ के लोगो! क्या तुम हमें इसीलिए अस्वीकार करते हो कि हम परमात्मा में विश्वास करते हैं और उसमें, जिसे उसने हमारे लिए अवतरित किया है और जिसे उसने पूर्वकाल में भेजा है क्योंकि तुममें से अधिकांश बुराई के कर्ता-धर्ता हैं?[162]" कितने स्पष्ट रूप से यह आयत हमारे प्रयोजन को प्रकट करती है और कितनी स्पष्टता से यह ईश्वर के पदों के साक्ष्य का सत्य प्रदर्शित करती है, यह पद ऐसे समय प्रकट किया गया था जब इस्लाम पर नास्तिकों ने शब्दों से आक्रमण किया था और उसके अनुयायियों पर अविश्वासी होने का आरोप लगाया था, जब मुहम्मद के साथियों पर ईश्वर को अस्वीकार करने और एक मिथ्यावादी मायावी के अनुयायी होने का दोषारोपण किया था। अपने प्रारम्भिक दिनों में जब इस्लाम बाहर से देखने पर प्राधिकार और शक्ति से विहीन था, ईशदूत के मित्र जो ईश्वर की ओर अभिमुख हुए थे, जहाँ कहीं गए उन्हें सताया गया, पीड़ित किया गया, पत्थर मारे गये और कलंकित किया गया। ऐसे ही समय यह आशीर्वादित वचन दिव्य प्रकटीकरण के आकाश से अवतरित किया गया। उसने एक अखण्डनीय साक्ष्य प्रकट किया और एक अचूक मार्गदर्शन का प्रकाश दिया। मुहम्मद के साथियों को उसने नास्तिकों तथा मूर्तिपूजकों के प्रति निम्नांकित घोषणा करने के लिए निर्देशित किया: "तुम हम पर अत्याचार और उपद्रव करते हो और फिर भी, हमने क्या किया है ? हमने ईश्वर में और मुहम्मद की वाणी के जरिए हमारे लिए अवतरित पदों में और जो प्राचीन ईशदूतों पर अवतरित हुए थे उनमें विश्वास किया है।" इसका तात्पर्य यह है कि उनका एकमात्र अपराध यह था कि मुहम्मद पर अवतरित हुए ईश्वर के नवीन तथा अद्‌भुत वचन को पहचान लेना, साथ ही वे वचन जो प्राचीन ईशदूतों द्वारा प्रकट किये गये थे, वे सभी वचन ईश्वर के थे और उनका सत्य स्वीकारना तथा अंगीकार करना, यही साक्ष्य उस दिव्य सम्राट ने अपने सेवकों को सिखाया है।

241. इस दृष्टि से, लोगों के लिए इन नव-प्रकटित आयतों पर जिन्होंने पूर्व तथा पश्चिम दोनों को आच्छादित कर लिया है, दोषारोपण करना और अपने को सच्चे विश्वास के धारक मानना क्या उचित है ? अपेक्षाकृत क्या उन्हें उसमें विश्वास नहीं करना चाहिए जिसने इन आयतों को प्रकट किया है ? उस प्रमाण का विचार करते हुए जिसे उसने स्वयं स्थापित किया है, वह उनको सच्चा विश्वासी कैसे नहीं मान पाया

जिन्होंने इस सत्य की साक्षी दी है ? यह बात उससे दूर है कि वह अपनी दयालुता के द्वार से उनको लौटा दे जिन्होंने दिव्य पदों के सत्य की ओर उन्मुख होकर उन्हें अंगीकार किया है अथवा वह उन्हें धमकाए जो उसके निश्चित साक्ष्य से जुड़े हैं। वह वस्तुतः सत्य को अपनी आयतों के जरिए स्थापित करता है और अपने प्रकटीकरण को अपने वचनों से पुष्टि प्रदान करता है। सत्य ही वह शक्तिशाली, संकट में सहायक, सर्वशक्तिमान है।

242. और इसी प्रकार, वह कहता है: "हमने यदि तेरे निमित्त कागज़ पर लिखी एक पुस्तक अवतरित की होती और यदि वे उसे अपने हाथों से स्पर्श करते, तो उन नास्तिकों ने निश्चय ही कहा होता "यह कुछ नहीं बल्कि स्पष्ट जादू है।"[163] कुरआन के अधिकांश वचन इस विषय के सूचक हैं। संक्षेप के निमित्त ही हमने केवल इन वचनों का उल्लेख किया है। विचार करो, कि क्या सम्पूर्ण ग्रंथ में इन वचनों के अतिरिक्त कोई अन्य चीज उसके सौन्दर्य के प्राकट्यों की पहचान के मानक रूप में स्थापित हुई है, जिससे लोग जुड़ सकें और ईश्वरावतारों को अस्वीकार कर सकें ? इसके विपरीत, प्रत्येक उद्धरण में उसने उनको अग्नि की धमकी दी है जो, जैसा पहले दिखलाया गया है, वचनों को अस्वीकार करते हैं और उन पर आक्षेप करते हैं।

243. इसलिए, यदि कोई व्यक्ति उठे और हजारों पद, पातियाँ, रचनाएं तथा प्रार्थनाएं प्रकट करे जिनमें कोई भी किसी विद्यार्जन के जरिए प्राप्त नहीं की गई हो, तो कौन-सा बहाना उन लोगों को उचित ठहराएगा जो उन्हें अस्वीकार करते हैं और अपने को उसकी कृपा-शक्ति से वंचित करते हैं ? जब एक बार उसकी आत्मा ने आरोहण कर लिया है और अपनी विषादपूर्ण काया से दूर हो गई है तो वे क्या उत्तर दे सकेंगे ? क्या वे अपने को यह कहकर सत्य सिद्ध करने का प्रयास करेंगे: "हम किसी एक पारम्परिक कथन से जुड़े रहे और उसकी शाब्दिक परिपूर्णता न देखकर, हमने दिव्य प्रकटीकरण के मूर्तिमंत स्वरूपों के विरूद्ध ऐसे आरोप लगाये और ईश्वर के नियम से दूरी बनाये रखी?" क्या तूने सुना नहीं है कि क्यों कुछ ईशदूत "निष्ठा से सम्पन्न" ईशदूत की उपाधि से विभूषित किए गए हैं? इसके कारणों में उनके प्रति एक ग्रंथ का प्रकटीकरण था। और फिर भी, वचनों के बहुतेरे

ग्रंथों के प्रकटकर्ता तथा लेखक के प्रति इन लोगों की अस्वीकृति और उसके कथनों का अनुसरण उचित कैसे माना जाएगा जिन्होंने मूर्खतापूर्वक मनुष्यों के हृदयों में संदेह के बीज बोये हैं और जो शैतान की तरह लोगों को अधःपतन तथा भूल के मार्गों में ले जाने के लिए उठे हैं? इसके अतिरिक्त हमें आश्चर्य होता है कि क्या ये लोग ऐसी दिव्य आत्मा, ऐसी पवित्र श्वांस से दूर रहे हैं और उसे अस्वीकार किया है जिससे, काश वे जुड़ पाते, उसके मुखड़े के अतिरिक्त जिसके मुखमण्डल की ओर वे उन्मुख हो पाते ? हाँ - "सभी को स्वर्गों में एक निवास स्थान प्राप्त है जिसकी ओर वे मुड़ते हैं।"[164] हमने तुझे ये दो मार्ग दिखाए हैं, जिसे तू चुने, उस मार्ग पर चल। यही सचमुच सत्य है और सत्य के अलावा मात्र दोष शेष रहता है।

244. इस प्रकटीकरण का सत्य दर्शाने वाले प्रमाणों में यह है कि प्रत्येक युग तथा धर्मकाल में, जब कभी वह अदृश्य सार अपने अवतार के स्वरूप में प्रकट हुआ, कुछ अज्ञात और सांसारिक उलझनों से अनासक्त आत्मायें ईशदूत के सूर्य तथा दिव्य मार्गदर्शन के चन्द्र से प्रकाश चाह और दिव्य उपस्थिति भी प्राप्त की। इसी कारण उस युग के धर्मोपदेशक तथा धन-दौलत वाले इन लोगों से घृणा करते थे और उनका तिरस्कार करते थे। जैसाकि, जिन्होंने भूल की उनके सम्बन्ध में उसने प्रकट किया है: "तब उसके लोगों के प्रमुखों ने कहा जो विश्वास नहीं करते थे, हम तुझमें अपने जैसा ही एक मनुष्य देखते हैं और हम जल्दी में निर्णय लेने वाले अपने तुच्छतम लोगों के अतिरिक्त किसी को नहीं देख रहे हैं जिसने तेरा अनुसरण किया हो। नहीं, हम तुम्हें मिथ्यावादी मानते हैं।"[165] उन्होंने उन पवित्र प्राकट्यों पर आक्षेप किए और यह कह कर विरोध किया: "हमारे बीच तुच्छ जनों के अतिरिक्त किसी ने तुम्हारा अनुसरण नहीं किया है, उन्होंने जो किसी प्रकार से ध्यान दिए जाने के पात्र नहीं हैं।" उनका लक्ष्य यह दिखलाना था कि विद्वानों, धनवानों और यशस्वीजनों में किसी ने उनमें विश्वास नहीं किया। इस और ऐसे ही प्रमाणों द्वारा उन्होंने उसके, जो सत्य के सिवा कुछ नहीं कहता है, झूठ को दर्शाने का प्रयास किया।

245. तथापि, इस अत्यन्त देदीप्यमान धर्मकाल में, इस सर्वाधिक सामर्थ्यशाली सर्वोच्चता में प्रकाशित धर्मोपदेशकों की, उत्कृष्ट विद्या-विशारदों की, परिपक्व प्रज्ञावानों की एक संख्या ने उसके दरबार में प्रवेश पाया है, उसकी दिव्य

उपस्थिति के प्याले का रसपान किया है और उसकी परम् उत्कृष्ट कृपा के सम्मान से सुशोभित हुए हैं। उन्होंने उस परम प्रियतम के लिए संसार का और जो कुछ उसमें है सबका त्याग किया है। हम उनमें से कुछ नामों का उल्लेख करेंगे, ताकि शायद दुर्बल हृदयीजनों को इससे शक्ति और प्रोत्साहन प्राप्त हो सके।

246. उनमें थे मुल्ला हुसैन, जिन्होंने दिव्य प्रकटीकरण के सूर्य से ओजस्वी भव्यता को प्राप्त किया। वह न होते, तो ईश्वर अपनी दया की पीठिका पर स्थापित न हुआ होता, न शाश्वत भव्यता के सिहांसन पर आरूढ़ हो पाता। उनके बीच थे सैयद याह्या, अपने युग की विलक्षण तथा अद्वितीय विभूति,

मुल्ला मुहम्मद अली ज़नजानी

मुल्ला अली बस्तामी

मुल्ला सईद बारफरोशी

मुल्ला नेमतुल्लाह माज़िन्दरानी

मुल्ला यूसुफ अर्दिबिली

मुल्ला मेहदी खुई

सैयद हुसैन तुर्शीज़ी

मुल्ला मेहदी क़ंदी

मुल्ला बाकिर

मुल्ला अब्दुल ख़ालिक़ यज़्दी

मुल्ला अली बरक़ानी

और अन्य, संख्या में लगभग चार सौ, जिनके नाम ईश्वर की ''रक्षित पाती'' पर अंकित हैं।

247. इन सबको दिव्य प्रकटीकरण के उस सूर्य के प्रकाश से मार्गदर्शन मिला। सबने उसके सत्य को स्वीकार किया और अपनाया। ऐसी थी उनकी आस्था कि उनमें अधिकांश ने अपनी भौतिक सम्पदा तथा बंधु-बांधवों तक का त्याग कर दिया और उस सर्वशोभायमान की सद्कृपा से जा लगे। अपने परम प्रियतम के लिए उन्होंने अपने प्राण न्यौछावर कर दिए और अपना सर्वस्व उसके पथ में समर्पित कर

दिया। उनके वक्ष शत्रु की बर्छियों का लक्ष्य बने और उनके सरों ने अधार्मिकों के भालों को अलंकृत किया। कोई भूमि नहीं बची जिसने अनासक्ति के इन साकार स्वरूपों का रक्तपान नहीं किया और कोई तलवार नहीं जिसने उनकी गर्दनों पर आघात नहीं किया। उनके कर्म ही उनके शब्दों के सत्य की साक्षी देते हैं। इन पवित्रात्माओं का साक्ष्य, जो अपने जीवन अपने प्रियतम हेतु अर्पित करने के लिए इतनी भव्यता से उठे कि सारा संसार उनके बलिदान के ढंग से चकित रह गया, क्या यह इस दिवस के लोगों को सन्तुष्ट नहीं करता है ? क्या यह उनकी निष्ठाहीनता के विरूद्ध पर्याप्त साक्ष्य नहीं है जिन्होंने एक अमान्य वस्तु के लिए अपनी आस्था से छल किया, जो कुछ नष्ट हो जाने वाला है उसके लिए अमरत्व का सौदा किया, खारे पानी के स्रोतों के लिए दिव्य उपस्थिति के कौसर का परित्याग कर दिया और जिनके जीवन का एकमात्र उद्देश्य दूसरों की सम्पत्ति को हड़पना रहा है ? जैसाकि तू देखता है कि किस प्रकार वे सब संसार के आडम्बरों में व्यस्त रहे और उससे दूर भटक गये हैं जो है सर्वोच्च, सर्वस्वामी।

248. न्यायनिष्ठ बनो: क्या उनका साक्ष्य स्वीकार्य और ध्यान देने योग्य है, जिनके कर्म उनके शब्दों के अनुकूल हैं, जिनका बाह्य अस्तित्व उनके आन्तरिक जीवन के अनुरूप है ? मन उनके कर्मों पर व्याकुल हो जाता है और आत्मा उनके धैर्य तथा सहनशीलता से चकित हो जाती है अथवा इन निष्ठाहीन आत्माओं का साक्ष्य स्वीकार्य है जो स्वार्थपूर्ण कामना की श्वांस के अतिरिक्त कोई श्वांस नहीं लेते हैं और जो अपने निकम्मे मनोरथों के पिंजड़े में कैद है? अंधकार के चमगादड़ों की भाँति, वे संसार की क्षणभंगुर वस्तुओं का पीछा करने के अतिरिक्त अपने पलंग से अपने सिर नहीं उठाते और अपने अधम जीवन के लक्ष्यों को प्राप्त करने के श्रम के अतिरिक्त रात भर कोई विश्राम नहीं पाते। अपनी स्वार्थपूर्ण प्रयोजनों में डूब कर, वे दिव्य आदेश को भूल बैठे हैं। दिन के समय वे अपनी पूरी आत्मा से सांसारिक लाभों के पीछे जी-तोड़ परिश्रम करते हैं और रात्रि-काल में उनका काम अपनी दैहिक कामनाओं को संतुष्ट करना होता है। किस नियम अथवा मानक ने ऐसी क्षुद्र आत्माओं के निषेधों से जुड़ने को और उनकी आस्था की अवहेलना को, जिन्होंने ईश्वर की सुप्रसन्नता के लिए, अपना जीवन और सम्पदा, अपनी ख्याति और कीर्ति, अपनी प्रतिष्ठा और सम्मान त्याग दिया, उचित ठहराया जा सकेगा?

249. क्या "शहीदों के शहजादे"[166] के जीवन की घटनायें समस्त घटनाओं में महत्तम, उनके सत्य का सर्वोच्च साक्ष्य नहीं मानी गई ? क्या प्राचीन लोगों ने उन घटनाओं को अभूतपूर्व नहीं कहा ? क्या उन्होंने यह नहीं माना कि सत्य के किसी प्राकट्य ने कभी ऐसी अटलता, ऐसी अपूर्व भव्यता नहीं दिखलायी है ? और फिर भी, उनके जीवन का यह प्रसंग, उसी तरह आरम्भ होकर, जैसा वह प्रभातकाल में हुआ था, उसी मध्यान्ह तक समाप्त हो गया, जबकि इन पावन प्रकाशों ने अठारह वर्षों तक वीरतापूर्वक सभी ओर से उन पर बरसने वाली वेदनाओं की बौछारें सही हैं। किस प्रेम, किस भक्तिभाव से, कैसे उल्लास और पवित्र आनन्द से, उन्होंने अपने जीवन उस सर्वभव्य के मार्ग में अर्पित कर दिए। सभी इस सत्य के साक्षी हैं और फिर भी, वे इस धर्मप्रकाशन को महत्वहीन कैसे कह सकते हैं ? क्या किसी युग ने इतनी गतिशील घटनाएँ देखी हैं ? यदि वे साथी ईश्वर के सच्चे सेवक नहीं हैं तो और किसे इस नाम से पुकारा जाएगा ? क्या ये साथी शक्ति या भव्यता के खोजी रहे हैं ? क्या उन्होंने कोई अन्य कामना की है ? अपने तमाम अद्‌भुत साक्ष्यों तथा अनोखे कार्यों वाले ये साथी यदि झूठे हैं, तो फिर अपने लिए सत्य का दावा करने योग्य कौन हैं ? मैं ईश्वर की सौगंध खाकर कहता हूँ, उनके कर्म ही धरती के समस्त लोगों के लिए पर्याप्त साक्ष्य तथा अकाट्य प्रमाण हैं, यदि मनुष्य दिव्य प्रकटीकरण के रहस्यों पर अपने हृदयों में विचार करे। "और जो अन्यायपूर्वक कार्य करते हैं वे शीघ्र ही उस परिणाम को जानेंगे जो उनकी प्रतीक्षा कर रहा है।"[167]

250. इसके अतिरिक्त, सच और झूठ का चिह्न ग्रंथ में निर्देशित तथा निर्धारित है। इस दिव्यतः निर्धारित कसौटी से सभी मनुष्यों के दावे तथा कपट अवश्य ही परखे जाने की आवश्यकता है, जिससे सत्यनिष्ठों को जाना और धूर्तों से पृथक किया जा सके। यह कसौटी इस वचन के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं है: "मृत्यु की कामना करो, यदि तुम सच्चे मनुष्य हो।"[168] असंदिग्ध निष्ठा के इन शहीदों का विचार करो जिनकी सच्चाई ग्रंथ के स्पष्ट मूलपाठ का साक्ष्य देती है और जिन सभी ने, जैसा तूने देखा है, अपने जीवन, अपनी सम्पत्ति, अपनी पत्नी, अपने बच्चे, अपना सर्वस्व त्याग कर दिया है और स्वर्ग के सर्वोन्नत लोकों के लिए आरोहण किया है। इस

सर्वप्रधान और भव्य प्रकटीकरण के सत्य के इन अनासक्त तथा उदात्त अस्तित्वों के साक्ष्य को अस्वीकार करना और उन आक्षेपों को स्वीकार्य मानना क्या उचित है जो इस देदीप्यमान प्रकाश के विरूद्ध इस आस्थाहीन जनसमुदाय द्वारा लगाये गये हैं, जिन्होंने स्वर्ण के लिए अपनी आस्था त्याग दी है और नेतृत्व के लिए जिन्होंने उन पर दोषारोपण किये हैं जो समस्त मानवजाति का प्रथम नायक है ? ऐसा हुआ है, यद्यपि उनका चरित्र सभी लोगों के सामने अब प्रकट है। लोगों ने उनको उन लोगों के रूप में पहचान लिया है जो किसी प्रकार अपने क्षणिक प्राधिकार का एक कण या एक उपाधि ईश्वर के पवित्र धर्म के निमित्त नहीं छोड़ेंगे, कितना ही अल्प हो उनका जीवन, उनकी सम्पदा और अन्य चीजें।

251. देखो दिव्य कसौटी ने, ग्रंथ के स्पष्ट मूलपाठ के अनुसार सत्य को मिथ्या से किस प्रकार अलग कर दिया है। इसके बावजूद वे अभी तक इस सत्य से बेखबर, और प्रमाद की नींद में निमग्न हैं और संसार की असारताओं के पीछे भाग रहे हैं और व्यर्थ तथा पार्थिव नेतृत्व के विचारों में व्यस्त हैं।

252. हे मनुष्य के पुत्र! देखते-देखते अनेक दिन बीत गये और तूने स्वयं को अपनी कल्पनाओं एवं मिथ्या आकांक्षाओं में ही लीन कर रखा है। अपनी शय्या पर भला तू कब तक अचेत पड़ा रहेगा ? अपनी निद्रा से जाग, क्योंकि 'सूर्य' का मध्याकाश तक आगमन हो चुका है, कदाचित अपने सौन्दर्य के प्रकाश द्वारा वह तुझे भी प्रभामण्डित कर दे।

253. फिर भी, यह जान ले कि इन विद्वानों और धर्मोपदेशकों में से जिनका हमने उल्लेख किया है कोई नेतृत्व के पद या गौरव से जुड़ा नहीं था। क्योंकि धर्म के सुप्रसिद्ध और प्रभावशाली नेता, जो प्राधिकार से आसनों का उपभोग करते हैं और नेतृत्व के क्रियाकलापों को सम्पादित करते हैं, किसी प्रकार सत्य के प्रकटकर्ता के प्रति भक्तिभाव धारण नहीं कर सकते, सिवा उनके जिन्हें प्रभु चाहता है। किन्तु कुछ के लिए, ऐसी चीजें कभी नहीं हुई हैं। ''और मेरे मुट्ठी भर सेवक ही कृतज्ञ जन हैं।''[169] जैसाकि इस धर्मकाल में जिनके हाथों में लोगों की बागडोर थी ऐसे यशस्वी धर्मोपदेशकों में से एक ने भी इस धर्म को अंगीकार नहीं किया। बल्कि, उन्होंने इसके विरूद्ध ऐसी शत्रुता और संकल्प के साथ संघर्ष किया जैसा किसी कान ने सुना नहीं और किसी आँख ने देखा नहीं है।

254. उस उदात्त स्वामी बाब सबका जीवन उसके लिए न्यौछावर हो - ने प्रत्येक नगर के धर्मोपदेशकों के लिए एक संदेश विशेष रूप से प्रकट किया, जिसमें उन्होंने उनमें से प्रत्येक की अस्वीकृति और दोषारोपण की प्रकृति पूरी तरह प्रस्तुत की है। "अतः, तुम उचित रूप से ध्यान दो, तुम लोग जो अंतर्दृष्टि के मनुष्य हो।"[170] उनके विरोध के प्रति अपने उल्लेखों द्वारा वह उन आपत्तियों को अमान्य करना चाहते थे जिन्हें बयान के लोग "मुस्तग़ास"[171] के प्राकट्य के दिवस, बाद के पुनरूत्थान के दिवस में यह दावा करते हुए उठा सकते थे कि, जब तक बयान के धर्मकाल में कई धर्मोपदेशकों ने उस धर्म को अपनाया है, इस बाद के प्रकटीकरण में इनमें से किसी ने उसके दावे को नहीं पहचाना है। उनका प्रयोजन लोगों को चेतावनी देना था ताकि, ईश्वर न करे, ऐसा हो कि वे इन मूर्खतापूर्ण विचारों से जुड़ जायें और अपने को दिव्य सौन्दर्य से वंचित कर लें। हाँ, ये धर्मोपदेशक जिनका हमने उल्लेख किया है, अधिकांश अप्रसिद्ध थे और ईश्वर की कृपा से, वे सभी पार्थिव आसक्तियों से विशुद्ध और नेतृत्वों की उलझनों से मुक्त थे। "ऐसी है परमात्मा की अनुकम्पा, वह जिसे चाहता है उसे देता है।"

255. इस प्रकटीकरण के सत्य का एक अन्य प्रमाण, जो अन्य सभी प्रमाणों के बीच सूर्य की भाँति प्रकाशित है, ईश्वर के धर्म को उद्घोषित करने की शाश्वत सौंदर्य की अटलता है। यद्यपि आयु में युवा और सुकोमल और जिस प्रभुधर्म को उन्होंने प्रकट किया वह धरती की समस्त मानवजातियों, उच्च और निम्न, धनी और निर्धन, उदात्त और अधम, राजा और प्रजा दोनों की इच्छा के विपरीत था, फिर भी वह उठे और दृढ़ता से उसको उद्घोषित किया। सभी ने इसे जाना और सुना है। वह किसी से भयभीत नहीं हुए, नतीजों की उन्होंने परवाह नहीं की। ऐसी चीज क्या एक दिव्य प्रकटीकरण की शक्ति और ईश्वर की अजेय इच्छा की सामर्थ्य के बिना प्रकट की जा सकती थी ? ईश्वर की सदाश्यता की सौगन्ध ! यदि कोई व्यक्ति इतने महान धर्मप्रकाशन को अपने हृदय में रखता, तो ऐसी घोषणा का विचार उसे केवल व्याकुल ही करता। यदि सभी मनुष्यों के हृदय उसके हृदय में एकत्र कर दिए जाते, तो भी वह इतने भंयकर उपक्रम का साहस करने से झिझकता। वह उसे केवल ईश्वर की अनुमति से ही प्राप्त कर सकता था, केवल तभी जब उसके हृदय का मार्ग दिव्य कृपा के स्रोत से जुड़ जाता और उसकी आत्मा सर्वशक्तिमान के

अचूक अवलम्बन से आश्वस्त हो जाती। हमें आश्चर्य है कि इतने महान साहस का सम्बन्ध वे किस चीज से बतलाते हैं ? क्या वे उस पर अज्ञानता का आरोप लगाते हैं जैसे उन्होंने पहले के ईशदूतों को आरोपित किया था ? क्या वे यह मानते हैं कि उनका उद्देश्य नेतृत्व और पार्थिव सम्पत्तियों की प्राप्ति के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं था ?

256. कृपालु प्रभु! अपनी पुस्तक में, जिसे उन्होंने ''कय्यूमुल- अस्मा''- समस्त ग्रंथों में प्रथम, महत्तम और सर्वाधिक सामर्थ्यशाली - शीर्षक दिया है, उन्होंने अपनी शहादत की भविष्यवाणी की है। उसमें यह अनुच्छेद है: ''हे तू ईश्वर के अवशेष! मैंने तेरे लिये स्वयं का पूर्ण त्याग कर दिया है, तेरे ही निमित्त मैंने अभिशाप स्वीकार किये हैं और तेरे प्रेम के मार्ग में शहादत के अतिरिक्त कोई कामना नहीं रखी है। मेरा यथेष्ट साक्षी है ईश्वर, वह उदात्त, रक्षक, युग-युगान्तर का प्रभु!''

257. इसी प्रकार, ''हा'' अक्षर की अपनी व्याख्या में उन्होंने शहादत की याचना की, यह कहते हुए: ''मेरा विचार है कि मैंने अपने अन्तरतम में आह्वान करता एक स्वर सुना: ''क्या तू ईश्वर के मार्ग में उस वस्तु को बलिदान कर सकता है जिसे तू सर्वाधिक प्रेम करता है, जैसे हुसैन ने, मेरे निमित्त अपना जीवन अर्पित किया है।'' और यदि मैं इस अवश्यम्भावी रहस्य के प्रति सचेत न होता तो, उसकी सौगंध जिसके हाथों में मेरा अस्तित्व है, भले ही धरती के सारे सम्राट एक साथ सम्बद्ध हो जाते, वे मुझसे एक शब्द मात्र भी लेने में सक्षम न होते। फिर ये सेवक जो बिल्कुल ध्यान देने योग्य नहीं हैं और जो सत्य ही निर्वासितों में से हैं ''वे सब ईश्वर के मार्ग में मेरे धैर्य, मेरे त्याग और मेरे आत्म-बलिदान को जान सकते हैं।''

258. ऐसी वाणी के प्रकटकर्ता को क्या ईश्वर के मार्ग के सिवा किसी अन्य मार्ग पर चलने वाला और उसकी सुप्रसन्नता के अतिरिक्त किसी अन्य वस्तु की लालसा रखने वाला माना जाएगा ? इसी वचन में अनासक्ति की एक श्वांस छिपी है, जिसे यदि इस संसार पर फूँक दिया जाता, तो सभी प्राणी अपने जीवन त्याग देते और अपनी आत्मायें बलिदान कर देते। इस पीढ़ी के शैतानी व्यवहार का विचार करो और उनकी विस्मयकारी अरूचि देखो। देखो कि किस प्रकार उन्होंने इस समस्त भव्यता के प्रति अपनी आँखें बन्द कर ली हैं और निम्नता की हद तक जाकर घृणित

लाशों के पीछे भाग रहे हैं, जिनके उदर से निष्ठावानों के निगले गये तत्व की चीख उठती है। और उन्होंने कैसे अशोभनीय आरोप पवित्रता के उन दिवास्रोतों के प्रति लगाये हैं ? इस प्रकार हम तेरे समक्ष उसका वर्णन करते हैं जो उन अधर्मियों के हाथों से हुआ है, वे जिन्होंने पुनरूज्जीवन दिवस में अपना मुख दिव्य उपस्थिति से मोड़ लिया है, जिनको परमात्मा ने उनके ही अविश्वास की आग से पीड़ित किया है और जिनके लिए उसने संसार में एक शोधक दण्ड की व्यवस्था की है जो उनकी आत्मा और शरीर दोनों को नष्ट करेगा। इनके लिए ही कहा गया है: ''ईश्वर शक्तिहीन है और उसकी दयालुता का हाथ बंधा हुआ है।''

259. प्रभुधर्म में दृढ़ता 'सत्यतः' एक सुनिश्चित प्रमाण और एक श्रेष्ठ साक्ष्य है। जैसाकि ''अवतारों की मुहर'' ने कहा है: ''दो आयतों ने मुझे बूढ़ा बना दिया है।'' ये दोनों आयतें ईश्वर के धर्म में अटलता की सूचना देती हैं। जैसाकि उसने कहा है: ''तू दृढ़ बन जैसी तुझे आज्ञा दी गई है।''[172]

260. और अब विचार करो कि ईश्वर के रिज़वान का यह सिदरा ईश्वर के धर्म की घोषणा के लिए कैसे अपने नवयौवन काल में उठा है। देखो कि ईश्वर के सौन्दर्य ने कैसी दृढ़ता प्रकट की है। सारा संसार उसे बाधित करने के लिए उठ खड़ा हुआ, फिर भी पूरी तरह असफल रहा। ईश्वरीय कृपा की पात्रता के उस सिदरा पर जितनी ही कठोर बाधाऐं डाली गईं, उतना ही उसका लगाव बढ़ा और उतनी ही अधिक दीप्तिमयता से उसके प्रेम की लौ जली। यह सब प्रत्यक्ष है और इस सत्य पर कोई विवाद नहीं करता। अंततः उसने अपनी आत्मा समर्पित कर दी और अमरलोक के लिए अपनी उड़ान भरी।

261. और उसके प्राकट्य के सत्य के साक्ष्यों में थे स्वयं प्रभुत्व, अति श्रेष्ठ शक्ति तथा सर्वोच्चता जिसको किसी सहायता के बिना असहाय तथा अकेले ही उस आधार प्राकट्य तथा अस्तित्व के प्रकटकर्ता ने संसार भर में प्रकट किया है। जैसे ही वह शाश्वत सौन्दर्य शीराज में वर्ष साठ में प्रकट हुआ और गोपनीयता के परदे फाड़ डाले, वैसे ही प्रभुत्व, सामर्थ्य, सर्वोच्चता और शक्ति सागरों के सागर तथा सारों के सार से निकलकर प्रत्येक भू-भाग में प्रकट हो गये। इतनी अधिक मात्रा में कि प्रत्येक नगर से उस दिव्य प्रकाशस्रोत से प्रेरित हृदय जिन्होंने सन्निष्ठापूर्वक उस शाश्वत सूर्य का प्रकाश प्रतिबिम्बित किया और कितने विविध थे दिव्य प्रज्ञा के

महासागर से निकले ज्ञान-प्रवाह जिन्होंने सारे अस्तित्वों को आवृत कर लिया। प्रत्येक नगर में, सभी धर्मोपदेशक और उच्च धर्माधिकारी बाधा और दबाव डालने के लिए उठ खड़े हुए और उन्हें कुचलने की दुर्भावना, ईर्ष्या और अत्याचार के लिए कमर कस ली। कितनी बड़ी संख्या है उन पवित्र आत्माओं की, न्याय के उन सारों की जिन्हें अत्याचार का दोष लगाकर मार डाला गया! और विशुद्धता के कितने ही मूर्तरूपों ने, जिन्होंने और कुछ नहीं मात्र सच्चा ज्ञान और निष्कलंक कर्म प्रदर्शित किये थे, पीड़ादायी मृत्यु का वरण किया। इन सबके बावजूद, इनमें से प्रत्येक पवित्र अस्तित्व ने अपने अंतिम क्षण तक ईश्वर के नाम की श्वांस ली और समर्पण तथा त्याग के क्षेत्र में उड़ान भरी। ऐसी थी वह शक्ति और रूपान्तरकारी प्रभाव जिसका उसने उनके ऊपर उपयोग किया, जिससे वे उसकी इच्छा के अतिरिक्त किसी अन्य कामना के पोषण से अलग हो गये और अपनी आत्मा को उसके स्मरण से जोड़ लिया।

262. विचार करो: कौन इस संसार में ऐसी श्रेष्ठ शक्ति, ऐसा व्यापक प्रभाव प्रकट करने में समर्थ है ? इन निष्कलंक हृदयों और निर्मल आत्माओं ने, पूर्ण समर्पण के साथ, उसकी आज्ञा के आह्वानों का प्रत्युत्तर दिया। शिकायत के स्थान पर उन्होंने ईश्वर को धन्यवाद दिये और अपनी पीड़ा के अंधकार के मध्य उन्होंने कुछ नहीं बल्कि उसकी इच्छा की दीप्तिमानता की सहर्ष स्वीकृति प्रकट की। यह प्रत्यक्ष है कि इन साथियों के प्रति धरती के समस्त लोगों ने कितनी निर्दयी घृणा, कितनी कटु दुर्भावना तथा शत्रुता अपने हृदयों में रखी। इन पवित्र और आध्यात्मिक अस्तित्वों पर ढाये गये उत्पीड़न और कष्ट को उन्होंने मुक्ति, सम्पन्नता और शाश्वत सफलता का मार्ग माना। क्या संसार ने, आदम के दिनों से इतनी तीव्र उत्तेजना, ऐसी हिंसक हलचल देखी है ? उस तमाम यातना के, जो उन्होंने सहन कीं और अनेक प्रकार की पीड़ाओं को जो उन्होंने सहीं, बावजूद इसके वे सार्वभौम तिरस्कार तथा अभिशाप के लक्ष्य बने। लगता है धैर्य केवल उनकी सहनशीलता के प्रभाव से प्रकट हुआ था, और आज्ञाकारिता केवल उनके कर्मों द्वारा ही उत्पन्न हुई थी।

263. तू अपने हृदय में इन महत्वपूर्ण घटनाओं का विचार कर, जिससे तू इस धर्मप्रकाशन की महानता समझ सके और उसकी विराट भव्यता के दर्शन कर सके। उस दयालु की कृपा से आस्था की चेतना तेरे अस्तित्व में बसेगी। तू आस्था के आसन पर स्थापित होगा। वह एकमेव ईश्वर मेरा साक्षी है! तू यदि तनिक विचार

करे, तो तू यह समझ लेगा कि, इन स्थापित सत्यों और साक्ष्यों से अलग, धरती के लोगों द्वारा आरोपित दोष, दुर्वचन तथा घृणा ही स्वयं शक्तिशाली साक्ष्य हैं इन शूरवीरों के सत्य के। जब तू सभी लोगों द्वारा, चाहे वे धर्मोपदेशक, विद्वान या अज्ञानी हों, लगाए गए झूठे आरोपों पर चिन्तन करेगा तो तू प्रभुधर्म में अधिक दृढ़ और अडिग होगा। क्योंकि जो कुछ घटित हुआ है, उसकी भविष्यवाणी उन्होंने की है जो दिव्य ज्ञान के भण्डार तथा ईश्वर के शाश्वत नियम के प्राप्तकर्ता हैं।

264. यद्यपि एक बीते युग के पारम्परिक कथनों का उल्लेख करने की हमारी कोई इच्छा नहीं थी, फिर भी तेरे प्रति अपने प्रेम के कारण हम कुछ का उल्लेख करेंगे जो हमारे तर्क के अनुकूल हैं। हालाँकि उनकी आवश्यकता हम अनुभव नहीं करते हैं क्योंकि हमने जिन चीजों का पहले उल्लेख किया है वे संसार और उस सबके लिये जो उसमें है, पर्याप्त है। वास्तव में समस्त धर्मग्रंथ और उनके रहस्य इस संक्षिप्त विवरण में अन्तर्निहित हैं। इतने अधिक कि, यदि कोई व्यक्ति अपने हृदय में उसका तनिक विचार करे, तो जो कुछ कहा गया है उस सबमें वह ईश्वर के शब्दों का रहस्य खोज लेगा और उसका अर्थ समझ लेगा जिसे उस आदर्श सम्राट ने प्रकट किया है। चूँकि लोगों में विवेक और समझ की भिन्नता है, अतः हम उसी के अनुसार कुछ पारम्परिक कथनों का उल्लेख करेंगे ताकि ये अस्थिर आत्मा को अडिगता और क्षोभग्रस्त मन को शांति प्रदान करे। इनसे ईश्वर के साक्ष्य, उच्च तथा निम्न दोनों के प्रति, परिपूर्ण हो जायेगें।

265. उनमें है यह पारम्परिक कथन, "और जब सत्य का मानक प्रकट किया जाता है, पूर्व तथा पश्चिम दोनों के लोग उसे बुरा कहते हैं।" आत्म-त्याग की मदिरा का अवश्य ही छक कर रसपान किए जाने की आवश्यकता है, अनासक्ति की उन्नत ऊँचाइयाँ, अवश्य ही प्राप्त किए जाने की ज़रूरत है और "एक घंटे का चिन्तन सत्तर वर्षों की धर्मनिष्ठ आराधना से श्रेष्ठ है।" शब्दों में संदर्भित चिन्तन का अवश्य ही पालन किए जाने की आवश्यकता है, जिससे लोगों के निम्न कोटि के व्यवहार की थाह ली जा सके। वे लोग जो, जिस सत्य की वे मुक्त घोषणा करते हैं उसके प्रति अपने प्रेम तथा लालसा के बावजूद, सत्य के अनुयायियों की निन्दा करते हैं जबकि एक बार उसे प्रकट किया जा चुका है। उपर्युक्त पारम्परिक कथन इसी सत्य

की साक्षी देता है। यह स्पष्ट है कि इस आचरण का कारण उन नियमों, प्रथाओं, अभ्यासों और अनुष्ठानों को जिनसे वे जुड़े रहे हैं, रद्द किए जाने के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं था। अन्यथा, यदि उस दयालु का सौन्दर्य उन नियमों तथा प्रथाओं से सहमत होता जो लोगों के बीच प्रचलित हैं और यदि वह उनके पालन को अनुमोदित करता, तो इतना संघर्ष और संकट संसार में किसी तरह प्रकट न होता। यह पारम्परिक कथन इन वचनों से प्रमाणित और सत्य सिद्ध है जो उसने प्रकट किये हैं: ''वह दिवस जब वह आह्वानकर्ता एक कठोर कार्य के लिए बुलाएगा।''[173]

266. भव्यता के आवरण के उस पार से दिव्य उद्घोषक का अलौकिक आह्वान जो मानवजाति को, जिन वस्तुओं में वे संलिप्त हैं उनके, सम्पूर्ण परित्याग के लिए पुकार रहा है, जो उनकी कामना के प्रतिकूल है और यह कटु परीक्षणों तथा हिंसक हलचलों का कारण है। लोगों के मार्ग पर विचार करो। वे इन सुस्थापित पारम्परिक कथनों की उपेक्षा करते हैं जो सभी पूर्ण हुए हैं और संदेहपूर्ण मान्यता वाली चीजों से जुड़े हैं और पूछते हैं कि ये क्यों पूर्ण नहीं हुआ और फिर भी, वे चीजें प्रकट हुई हैं जो उनकी सोच से बाहर हैं। सत्य के चिह्न और प्रतीक मध्यान्ह के सूर्य की भाँति प्रकाशमान हो रहे हैं और लोग फिर भी अज्ञान तथा मूर्खता के निर्जन में लक्ष्यविहीन और व्याकुलता के साथ भटक रहे हैं। कुरआन की समस्त आयतों तथा मान्यता प्राप्त पारम्परिक कथनों के होते हुए भी, जो सभी एक नये धर्म, एक नये विधान और एक नये प्रकटीकरण की सूचना देते हैं, यह पीढ़ी अभी भी उस प्रतिज्ञापित के दर्शन की आस लगाये राह देख रही है जो मुहम्मद के धर्मकाल के नियमों का पोषण करेगा। इसी भाँति यहूदी और ईसाई इसी तरह के वाद-विवाद में व्यस्त हैं।

267. एक नये नियम तथा एक नये प्रकटीकरण का आभास देने वाले शब्दों में हैं ''नुदबा की प्रार्थना'' के लेखांश: ''कहाँ है वह जो अध्यादेशों तथा नियमों को फिर से नया करने के लिए संरक्षित हैं ? कहाँ है वह जो धर्म और उसके अनुयायियों को रूपान्तरित करने के अधिकार से सम्पन्न है ?'' इसी प्रकार, उन्होंने ज़ियारत[174] में प्रकट किया है: ''शांतिलाभ हो नवीकृत सत्य का।'' मेहदी के लक्षण के सम्बन्ध में पूछे जाने पर अबू-अब्दुल्ला ने यह कह कर उत्तर दिया: ''वह उसे सम्पन्न करेगा जिसे ईश्वर के संदेशवाहक मुहम्मद ने सम्पन्न किया है और उसे नष्ट करेगा जो

उसके पूर्व हो चुका है, जैसे ईश्वर के संदेशवाहक ने उनके मार्गों का ध्वंस किया जो उनके पहले आए थे।''

268. देखो, इन और ऐसे ही पारम्परिक कथनों के बावजूद, वे निरर्थक विवाद करते हैं कि पूर्व प्रकटित नियम अवश्य ही किसी भी तरह बदले न जायें और फिर भी, मानवजाति के समग्र गुण-धर्म में एक रूपान्तरण को प्रभावी बनाना क्या प्रत्येक प्रकटीकरण का लक्ष्य नहीं है, ऐसा रूपान्तरण जो अपने को अन्तर्बाह्य दोनों रूपों में प्रकट करेगा, जो उसके आन्तरिक जीवन तथा बाह्य दशाओं दोनों पर प्रभाव डालेगा? क्योंकि यदि मानवजाति का चरित्र न बदले तो ईश्वर के सार्वभौम प्राकट्यों की व्यर्थता प्रकट हो जाएगी। एक आधिकारिक तथा सुविदित ग्रंथ ''अवालिम'' में लिखा है: ''एक युवक बनी-हाशिम से प्रकट किया जायेगा जो एक नया ग्रंथ प्रकट करेगा।'' तत्पश्चात ये शब्द आते हैं: ''उसके अधिकांश शत्रु धर्मोपदेशक होंगे।'' एक अन्य स्थान पर, मुहम्मद के पुत्र सादिक के बारे में वर्णन है कि उन्होंने यह कहा था: ''बनी-हाशिम से एक युवक प्रकट होगा जो लोगों को अपने प्रति प्रभु-भक्ति का आदेश देगा। उसका ग्रंथ एक नवीन ग्रंथ होगा, जिसमें वह लोगों से अपनी आस्था का वचन देने का आह्वान करेगा। अरबों के लिए उसका प्रकटीकरण कठोर है। यदि तुम लोग उसके बारे में सुनो, तो उसके निकट जाने की शीघ्रता करना।'' कितनी उत्तमता से उन्होंने उस धर्म के इमामों तथा निश्चय के दीपकों के निर्देशों का अनुपालन किया। यद्यपि स्पष्ट रूप से कहा गया है: ''यदि तुम सुनो कि बनी-हाशिम का एक युवक प्रकट हुआ है, एक नये तथा दिव्य ग्रंथ और दिव्य नियमों के नवीनीकरण के लिए लोगों का आह्वान कर रहा है तो, उसके निकट शीघ्रतापूर्वक जाना,'' फिर भी उन सभी ने उस प्रभु को अधर्मी घोषित किया, और उसे पाखण्डी घोषित किया। हाशिम के उस प्रकाश, उस दिव्य प्राकट्य की ओर वे दौड़े तो नंगी तलवारें और दुर्भावना से भरे हृदय लेकर। इसके अतिरिक्त, देखो कि ग्रंथों में धर्मगुरूओं की शत्रुता का कितने स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है। इन साक्ष्य रूप तथा महत्वपूर्ण सभी पारम्परिक कथनों के, इन सभी अचूक और निर्विवाद, योग्य संकेतों के बावजूद, लोगों ने ज्ञान और पवित्र वाणी के निष्कलंक सार को अस्वीकार किया है और विद्रोह तथा भूल के अर्थ प्रकाशकों की ओर मुड़ गये हैं। इन लिखित पारम्परिक कथनों तथा प्रकटित वचनों

के होते हुए भी, वे केवल वही बोलते हैं जो उनकी निजी स्वार्थपूर्ण कामनाओं से प्रेरित होता है। और "सत्य का सार" यदि उसे प्रकट करे जो उनकी अभिरूचियों तथा कामनाओं के विपरीत है, तो वे उस पर स्पष्ट रूप से विधर्मी होने का दोष लगायेंगे और यह कहकर विरोध करेंगे: "यह धर्म इमामों और उन जाज्वल्यमान प्रकाशों के वचनों के विपरीत है। हमारे दोषरहित विधान में ऐसा कुछ नहीं दिया गया है।" इसी प्रकार इस दिवस में ऐसे मूल्यहीन वक्तव्य इन क्षुद्र नश्वर जनों द्वारा दिये गये और दिए जा रहे हैं।

269. और अब, इन दूसरे पारम्परिक कथनों पर विचार करो और देखो कि किस प्रकार इन सभी चीज़ों की भविष्यवाणी की गई है। "अरबईन" में लिखा है: "बनी-हाशिम से एक युवक का प्रादुर्भाव होगा जो नये विधान प्रकट करेगा। वह अपनी ओर से लोगों का आह्वान करेगा किन्तु कोई उसकी पुकार पर ध्यान नहीं देगा। उसके अधिकांश शत्रु धर्मगुरू होंगे। उसके आदेश का वे पालन नहीं करेंगे, बल्कि यह कह कर विरोध करेंगे: 'यह उसके विपरीत है जो हमें धर्म के इमामों द्वारा दिया गया है।" इस दिवस में, सभी यही शब्द बार-बार कह रहे हैं और पूरी तरह अनभिज्ञ हैं कि वह "वही करता है जो वह चाहता है" के सिंहासन पर प्रतिष्ठित है, और "जो कुछ वह चाहता है निर्धारित करता है" की पीठिका पर निवास करता है।

270. कोई भी ज्ञान 'उसके' प्रकटीकरण की प्रकृति को ग्रहण नहीं कर सकता, न कोई प्रज्ञा ही 'उसके' धर्म के सम्पूर्ण परिमाण को समझ सकती है। समस्त कथन उसके अनुमोदन पर निर्भर हैं और समस्त वस्तुओं को उसके धर्म की आवश्यकता है। उसके अतिरिक्त सभी उसकी आज्ञा से बने हैं और उसके नियम के जरिए गतिशील और अस्तित्ववान रहते हैं। वह दिव्य रहस्यों को उजागर करने वाला तथा गुप्त और प्राचीन ज्ञान का अर्थ-प्रकाशक है। इसी प्रकार "बेहारूल अनवार", "अवालिम" और मुहम्मद के पुत्र सादिक की "यान्बु" में वर्णित है कि उन्होंने ये शब्द कहे: "ज्ञान बीस और सात अक्षर हैं। ईशदूतों ने जो कुछ प्रकट किया है वह सब उनमें से दो अक्षर हैं। इस प्रकार किसी मनुष्य ने अभी तक इन दो अक्षरों से अधिक नहीं जाना है। किन्तु जब काइम आएगा, तब वह शेष बीस और पांच

अक्षरों को प्रकट करेगा।'' विचार करो: उसने ज्ञान को बीस और सात अक्षरों से युक्त घोषित किया है और आदम से ''अन्तिम पैगम्बर'' तक सभी ईशदूतों को उनमें केवल अक्षरों के दो व्याख्याकार और इन्हीं दो अक्षरों को लेकर अवतरित होने वाला माना है। वह यह भी कहता है कि काइम शेष सभी बीस और पांच अक्षरों को प्रकट करेगा। इस वचन से देखो कि उसका स्थान कितना महत् तथा उच्च है। उसका वचन सभी ईशदूतों के वचनों से बढ़कर है और उसका प्रकटीकरण उनके सभी प्रियजनों के विवेक तथा ज्ञान से अति श्रेष्ठ है। जिस प्रकटीकरण के सम्बन्ध में ईशदूतों को, उसके संतों तथा प्रियजनों को या तो अवगत नहीं किया गया है, अथवा ईश्वर के दुर्बोध आदेश का अनुसरण करते हुए जिसे उन्होंने अनावृत नहीं किया है, - ऐसे प्रकटीकरण को इन तुच्छ तथा दुराचारी जनों ने अपनी तुच्छ बुद्धि और अपूर्ण ज्ञान और बोध से मापने का प्रयास किया है। यदि वह उनके मानदण्डों के अनुरूप न हुआ तो वे उसे स्पष्ट रूप से अस्वीकार कर देते हैं। ''तू सोचता है कि उनका एक बड़ा हिस्सा सुनता या समझता है ? वे पाशविक लोगों जैसे ही हैं। हाँ, वे मार्ग से आगे भी भटकते हैं।''[175]

271. हमें आश्चर्य होता है कि पहले लिखे गए पारम्परिक कथन की व्याख्या कैसे करते हैं ? वह पारम्परिक कथन जो अचूक शब्दों में दुर्बोध चीज़ों के प्रकटीकरण का और उसके दिवस की नई तथा अद्भुत घटनाओं की सम्पन्नता का पूर्वाभास देता है ? ऐसी विस्मयजनक घटनायें लोगों के बीच इतना बड़ा संघर्ष उत्पन्न करती हैं कि सभी धर्मगुरू तथा ज्ञानीजन उसको और उसके साथियों को मृत्युदण्ड देते हैं और धरती के समस्त जनसमुदाय उसका विरोध करने के लिए उठ खड़े होते हैं। जैसा कि ''काफ़ी'' में, जाबिर के पारम्परिक कथन में, ''फातिमा की पाती'' में क़ाइम की प्रकृति के सम्बन्ध में उल्लिखित है: ''वह मूसा की पूर्णता, ईसा की महत्ता और अय्यूब के धैर्य को प्रकट करेगा। उसके प्रियजन उसके दिवस में तिरस्कृत किये जायेंगे। तुर्कों तथा दीलमों के सिरों की भाँति उनके सिर उपहारस्वरूप भेंट किए जायेंगे। उनको कत्ल किया और जलाया जाएगा। भय उनको जकड़ लेगा, उद्विग्नता तथा शंका से उनके हृदय आतंकित हो जाएंगे। धरती उनके लहू से रंग जाएगी। उनकी स्त्रियाँ शोक और विलाप करेंगी। ये वस्तुतः मेरे मित्र हैं!'' विचार करो, इस पारम्परिक कथन का एकमात्र अक्षर नहीं बचा है जो चरितार्थ नहीं हुआ है। अधिकांश स्थानों पर उनका आशीर्वादित रक्त बहाया गया है, प्रत्येक नगर में

उनको कैदी बनाया गया है, समस्त प्रान्तों में उनको पैदल चलाया गया है और कुछ को आग में जला दिया गया है। और इस पर भी किसी ने तनिक ठहर कर विचार नहीं किया है कि यदि प्रतिज्ञापित काइम एक पूर्ववर्ती धर्मकाल के नियम तथा अध्यादेश प्रकट करता, तो ऐसे पारम्परिक कथन लिपिबद्ध क्यों किए जाते और इस सीमा तक संघर्ष तथा कलह क्यों होता कि लोग इन साथियों की हत्या को उन पर आरोपित एक अनिवार्य कर्त्तव्य मान लेते और पवित्रात्माओं की प्रताड़ना को उच्चतम अनुकम्पा-प्राप्ति का साधन समझ लेते ?

272. इसके अतिरिक्त, देखो कि कैसे ये घटनायें जो घटित हुई हैं और जो गलत काम किए गये हैं, उन सभी की पहले के पारम्परिक कथनों में चर्चा की गई है। जैसाकि ''ज़ावरा'' के सम्बन्ध में ''रौज़-ए-काफ़ी'' में लिखा गया है। ''रौज़-ए-काफ़ी'' में वहाब के पुत्र मुआविया के बारे में वर्णित है, कि अबू-अब्दुल्ला ने कहा है: ''क्या तू ज़ावरा को जानता है ?'' मैंने कहा: ''मेरा जीवन तुझ पर कुर्बान हो जाये! कहते हैं कि वह बगदाद है।'' ''नहीं'', उसने उत्तर दिया और फिर आगे कहा: ''क्या तूने रे नगर में प्रवेश किया है?'' जिसके उत्तर में मैंने कहा: ''हाँ, मैंने उसमें प्रवेश किया है।'' इस पर उसने पूछा: ''क्या तूने पशु बाजार देखा ?'' ''हाँ'', मैंने उत्तर दिया। उसने कहा: ''क्या तूने सड़क के दाहिनी ओर काला पर्वत देखा? वही ज़ावरा है। वहाँ कुछ लोगों की संतानों के अस्सी आदमी कत्ल किए जायेंगे, जिनमें सभी खलीफा कहे जाने योग्य होंगे।'' ''उन्हें कौन कत्ल करेगा ?'' मैंने पूछा। उसने उत्तर दिया: ''फारस के बच्चे!''

273. ऐसी दशा है उसके साथियों की विगत दिनों में भविष्यवाणी की गई है। और अब देखो कि इस पारम्परिक कथन के अनुसार कैसे ज़ावरा रे भूखण्ड के अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं है। उस स्थान पर उसके साथियों को बहुत कष्ट देकर मारा गया और पारम्परिक कथन के लेखानुसार इन सभी पवित्र अस्तित्वों को फारस वालों के हाथों शहादत प्राप्त हुई है। इसे तूने सुना है और सभी उसे प्रमाणित करते हैं। फिर क्यों नहीं ये अधम, कीट-तुल्य मनुष्य तनिक ठहर कर इन पारम्परिक कथनों पर चिन्तन करते हैं जो सभी मध्यान्ह काल के तेजस्वी सूर्य की भाँति प्रकट हैं ? किस कारण से वे सत्य को अंगीकार करने से कतराते हैं और जिन कुछ पारम्परिक कथनों का महत्व ग्रहण करने में वे विफल रहे हैं उनसे ईश्वर के

प्रकटीकरण तथा उसके सौन्दर्य की पहचान से उनको रोकते हैं और उन्हें नारकीय कूप में पड़ा रहने देते हैं ? ऐसी चीजों का कारण अन्य कुछ नहीं, बल्कि युगीन धर्मगुरूओं तथा शास्त्रज्ञों की आस्थाहीनता है। इनके सम्बन्ध में मुहम्मद के पुत्र सादिक ने कहा है: ''उस युग के धर्माचार्य आकाश के साये तले सर्वाधिक पतित धर्मगुरू होंगे। उनके बीच बुराई को बढ़ावा देने वाले लोग हैं और वह उन्हीं के पास लौट जायेंगे।''

274. हम 'बयान' के विद्वानों से ऐसे तरीकों का अनुसरण न करने की, मुस्तग़ास के समय उसको, जो दिव्य सार, स्वर्गिक प्रकाश, समग्र अनंतता, उस अदृश्य के प्राकट्यों का आदि और अंत है, उसे उत्पीड़ित न करने की विनती करते हैं जिससे इस दिवस में उसे उत्पीड़ित किया गया है। हम उनसे अपनी बुद्धि, अपने विवेक तथा शिक्षा पर निर्भर न रहने की, न अलौकिक तथा असीम ज्ञान के उद्घाटक से विवाद करने की याचना करते हैं। और फिर भी, इन तमाम चेतावनियों के बावजूद, हम देख रहे हैं कि एक नेत्र से विहीन व्यक्ति, जो स्वयं लोगों का मुखिया है, हमारे विरूद्ध परम दुर्भावना से उठ खड़ा हो रहा है। हम पूर्वालोकन कर रहे हैं कि प्रत्येक नगर में लोग आशीर्वादित सौन्दर्य को दबाने के लिए उठेंगे, कि सभी मनुष्यों की अन्तिम कामना और अस्तित्व के उस प्रभु के साथी उस आततायीं के सामने से भागकर उससे दूर निर्जन में शरण खोजेंगे, जबकि अन्य अपने को समर्पित कर देंगे और पूर्ण अनासक्ति से, उसके मार्ग में अपने जीवन न्यौछावर करेंगे। मुझे ऐसा लगता है कि हम उस व्यक्ति का निर्णय कर सकते हैं, जो अपनी ऐसी धर्मपरायणता और पवित्रता के लिए प्रतिष्ठित है कि मनुष्य उसके आज्ञापालन को अपना अनिवार्य कर्त्तव्य मानते हैं और जिसके आदेश के अधीन रहना आवश्यक समझते हैं, जो दिव्य वृक्ष के मूल पर ही आक्रमण करने के लिए उठेगा और अपनी शक्ति की सीमा तक उसके विरोध का प्रयास करेगा। ऐसी है लोगों की रीति।

275. हम प्रसन्नतापूर्वक आशा करेंगे कि 'बयान' के लोग प्रकाशित होंगे, चेतना के क्षेत्र में उड़ान भरेंगे और उसमें निवास करेंगे, सत्य का निर्णय करेंगे और अन्तर्दृष्टि के सहारे छलांग भरी असत्यता को पहचानेंगे। तथापि, इन दिनों ईर्ष्या की ऐसी गंध

फैली है कि - मैं समस्त अस्तित्वों, दृश्य और अदृश्य के शिक्षक की सौगन्ध लेकर कहता हूँ - संसार की नींव के आदि से - यद्यपि उसका कोई आदि नहीं है - आज के दिन तक, ऐसी दुर्भावना, ईर्ष्या तथा घृणा किसी प्रकार प्रकट नहीं हुई है, न भविष्य में कभी दिखायी देंगी क्योंकि कुछ लोगों ने, जिन्होंने कभी न्याय की सुवास नहीं ली है, विद्रोह का झण्डा उठाया है और हमारे विरूद्ध एकत्र हो गए हैं। सभी ओर हम उनकी बर्छियों की धमकी देखते हैं और सभी दिशाओं से हम उनके तीरों की चुभन का अनुभव कर रहे हैं। यह स्थिति है, यद्यपि हमने कभी किसी वस्तु पर गर्व नहीं किया है, न हमने किसी आत्मा से अपने आपको श्रेष्ठ ही दर्शाया है। प्रत्येक व्यक्ति के लिए हम अत्यन्त सौजन्यतापूर्ण साथी तथा एक अत्यन्त सहिष्णु और स्नेही मित्र रहे हैं। निर्धनों की संगति में हमने उनका साहचर्य तलाशा है और उदात्त तथा विद्वजनों के मध्य हम विनम्र तथा समर्पित रहे हैं। मैं ईश्वर, उस एकमेव सत्य परमेश्वर की सौगन्ध लेकर कहता हूँ, शत्रु और 'ग्रंथ' के लोगों के हाथों जो संताप और कष्ट हम पर आ पड़े हैं वे अत्यन्त दुःखद हैं, फिर भी जो कुछ उन पर आ पड़ा है जो हमारे मित्र होने का दावा करते हैं उससे तुलना करने पर वह सब नितान्त शून्यता में विलीन हो जाता है।

276. इससे अधिक हम क्या कहें ? विश्व यदि न्याय की दृष्टि से देख पाता, तो वह इन शब्दों का भार सहने में असमर्थ हो जाता। इस देश में हमारे आगमन के प्रारम्भिक दिनों में जब हमने आसन्न संकटपूर्ण घटनाओं के चिह्नों को पहचाना, तो उनके घटित होने के पूर्व हट जाने का निर्णय लिया। हम अपने को निर्जन एकांत में ले गए, और वहाँ, विमुक्त और एकाकी, दो वर्षों तक पूर्ण एकांतवास का जीवन बिताया। हमारी आँखों से पीड़ा के आँसुओं की वर्षा हुई और हमारे हृदय में तीव्र वेदना के महासागर ने हिलोरें लीं। अनेक दिन हमें कोई आहार नहीं मिला और अनेक दिनों तक हमारे शरीर को विश्राम नहीं मिला। जिसके हाथों में मेरा अस्तित्व है उसकी सौगंध! उत्पीड़नों तथा अबाध विपत्तियों की इन बौछारों के बावजूद, हमारी आत्मा परमानंद में मग्न रही और हमारे सम्पूर्ण अस्तित्व ने एक असीम प्रसन्नता की अनुभूति की। क्योंकि अपने एकांतवास में हम किसी आत्मा की हानि या लाभ, स्वास्थ्य या रुग्णता से अनजान रहे। एकाकी रहकर, संसार और जो कुछ उसमें है उसे भूलकर हमने अपनी चेतना से संलाप किया। यद्यपि हम नहीं जानते थे कि दिव्य नियति का जाल विशालतम नश्वर परिकल्पनाओं से

बढ़कर है और उसकी दिव्य व्यवस्था की बर्छी सर्वाधिक साहसपूर्ण मानवी उपायों का अतिक्रमण करती है। ईश्वर के ताने-बाने से निकल कर कोई भाग नहीं सकता और कोई आत्मा उसकी इच्छा के प्रति समर्पण किए बगैर छुटकारा नहीं पा सकती। ईश्वर की सदाशयता की सौगन्ध! हमने अपने एकांतवास से वापस न आना ही ठाना था और हमने अपने अलगाव में किसी से फिर मिलने की आशा नहीं की थी। हमारी उदासीनता का एकमात्र लक्ष्य आस्थावानों के बीच कलह का विषय, अपने साथियों के लिए क्षुब्धता का स्रोत, किसी आत्मा के अपकार का साधन अथवा किसी हृदय के दुःख का कारण बनने से बचना था। इनसे हटकर हमने कोई दूसरी कामना नहीं रखी और इसके अतिरिक्त हमारा कोई दूसरा उद्देश्य नहीं था फिर भी, प्रत्येक व्यक्ति ने अपनी ही कामना के अनुसार योजना बनाई और अपने ही व्यर्थ मनोरथ का अनुसरण किया। जब तक वह घड़ी नहीं आई, तब उस रहस्यमय स्रोत से हमारी वापसी की आज्ञा के आह्वान आए और वहाँ से हम लौटे। उसके प्रति अपनी इच्छा का समर्पण कर, हम उसकी आज्ञा के प्रति समर्पित हुए।

277. कौन-सी लेखनी उन चीजों का वर्णन कर सकती है जो अपनी वापसी पर हमने देखीं। दो वर्ष बीते हैं जिसके दौरान हमारे शत्रुओं ने हमें जड़ से खत्म करने के निरन्तर अथक प्रयास किये हैं, जिसके सब साक्षी हैं। तथापि, वफादारों में से कोई भी हमें सहायता प्रदान करने के लिए नहीं उठा, न किसी ने हमारी मुक्ति में सहायता करने की इच्छा की। नहीं, हमें सहायता देने के बजाय, उनके शब्दों तथा कर्मों ने अविरल दुःखों की कैसी-कैसी बौछारें हमारी आत्मा पर करायी हैं! उन सबके बीच, प्राण हथेली पर लिए, हम उसकी इच्छा के प्रति पूर्णतः समर्पित खड़े हैं, कि संयोगवश, ईश्वर की स्नेहसिक्त दयालुता और उसकी कृपा के जरिए, यह प्रकटित और प्रत्यक्ष 'अक्षर' उस आदि बिन्दु, सर्वाधिक उदात्त वचन के मार्ग में अपना जीवन न्यौछावर कर सके। उसकी सौगंध जिसकी आज्ञा से वह चेतना बोली है, हमारे हृदय की यह उत्कण्ठा न होती, तो हम इस नगर में आगे एक पल भी न रहे होते। "ईश्वर हमारा पर्याप्त साक्षी है।" इन शब्दों के साथ हम अपनी विवेचना का समापन करते हैं: "मात्र परमात्मा के अतिरिक्त कोई शक्ति या सामर्थ्य नहीं है।" "हम ईश्वर के हैं और उसी के पास वापस लौट जायेंगे।"

278. जिनके पास समझने योग्य हृदय है, जिन्होंने प्रेम की मदिरा का रसपान किया है, जिन्होंने क्षण मात्र के लिए अपनी स्वार्थमयी कामनाओं को तुष्ट नहीं किया है, वे मध्यान्हकाल की भव्यता से शोभित सूर्य की भाँति देदीप्यमान उन चिह्नों, प्रमाणों और साक्ष्यों का दर्शन करेंगे जो इस अद्‌भुत प्रकटीकरण, इस अतिश्रेष्ठ और दिव्य प्रभुधर्म को प्रमाणित करते हैं। विचार करो, कैसे, लोगों ने ईश्वर के सौन्दर्य को अस्वीकृत किया है और अपनी लोलुप कामनाओं से जुड़े रहे हैं। इन सभी उत्कृष्ट पदों, इन सुस्पष्ट संकेतों, जो मनुष्यों के बीच ईश्वर के विश्वास का 'महानतम प्रकटीकरण' हैं और इसमें प्रकटित उन सभी परमोत्कृष्ट स्थानों तथा साक्ष्य के रूप में पारम्परिक कथनों के बावजूद लोगों ने उसके सत्य की अवहेलना की है और उस पर आक्षेप किए हैं। उन्होंने कुछ पारम्परिक कथनों को दृढ़ता से थाम लिया है, जिसे अपने विवेक के अनुसार अपनी आशाओं से सम्बद्ध पाया है और जिसका अर्थग्रहण करने में वे विफल रहे हैं। इस प्रकार उन्होंने प्रत्येक आशा को छिन्न-भिन्न कर दिया है और उस सर्वभव्य की विशुद्ध मदिरा तथा अनश्वर सौन्दर्य के स्वच्छ एवं निर्मल जल से अपने को वंचित कर लिया है।

279. विचार करो कि जिस वर्ष में प्रकाश के उस परम सार को प्रकट होना है, उसका भी पारम्परिक कथनों में विशेष रूप से उल्लेख मिलता है। फिर भी उन्होंने अभी तक ध्यान नहीं दिया है, न उन्होंने क्षण भर को अपनी स्वार्थपूर्ण कामनाओं के पीछे भागना ही बंद किया है। पारम्परिक कथन के अनुसार, मुफ़ज़्ज़ल ने सादिक से पूछा: "उसके प्राकट्य के चिह्न के विषय में क्या है, हे मेरे स्वामिन ?" उन्होंने उत्तर दिया: "वर्ष साठ में उसका धर्म प्रकट होगा और उसका नाम घोषित किया जायेगा।"

280. कितना अद्‌भुत ! इन स्पष्ट तथा प्रकट उल्लेखों के बावजूद इन लोगों ने सत्य को त्याग दिया। उदाहरणार्थ, दिव्य सद्‌गुण से उस सार पर ढाए गये दुःखों, बन्दी जीवन तथा उत्पीड़नों का उल्लेख उन पूर्व पारम्परिक कथनों में किया गया है। "बेहार" में लिखा है: "हमारे काइम में चार ईशदूतों, मूसा, ईसा, यूसुफ और मुहम्मद के चार चिह्न होंगे। मूसा का चिह्न है भय तथा आशा, ईसा का वह जिसे उनके बारे में बोला गया था, यूसुफ का कैद और छल, मुहम्मद का कुरआन

के समान एक ग्रंथ का प्रकटीकरण।'' ऐसे निर्णयात्मक पारम्परिक कथन के बावजूद, जिसने ऐसी निभ्रांत भाषा में वर्तमान दिवस की घटनाओं का पूर्वाभास दिया है, कोई उसके भविष्य से सम्बन्धित कथन पर ध्यान देता नहीं मिला है और मेरा विचार है कि भविष्य में भी कोई ऐसा नहीं करेगा, सिवाय उसके जिसको तेरा प्रभु चाहेगा। ''ईश्वर वस्तुतः उनको सुनाएगा जिनको वह चाहेगा, किन्तु हम उनको नहीं सुनाऐंगे जो अपनी कब्रों में कैद हैं।''

281. तेरे समक्ष यह स्पष्ट है कि आकाश के पक्षी और शाश्वतता के कपोत दोहरी भाषा में बोलते हैं। एक भाषा, बाह्य भाषा, संकेतों से रहित होती है, अदृश्य तथा अनावृत होती है, जिससे वह एक मार्गदर्शक दीपक और एक संकेतक प्रकाश बन सके जिसके द्वारा पथिकगण पावनता की ऊँचाइयाँ प्राप्त कर सकें और जिज्ञासु शाश्वत पुनर्मिलन की ओर बढ़ सकें। ऐसे अनावृत पारम्परिक कथनों तथा साक्ष्यरूप वचनों का पहले उल्लेख हुआ है। दूसरी भाषा आवृत और गोपनीय है, जिससे जो कुछ द्रोहीजनों के हृदय में छिपा हुआ है उसे प्रकट किया जा सके और उनका अन्तर्तम अस्तित्व खुल जाये। मुहम्मद के पुत्र सादिक ने इस प्रकार कहा है: ''सत्य ही ईश्वर उनका परीक्षण और विश्लेषण करेगा।'' यही दिव्यतुला है, यह ईश्वर की कसौटी है, जिससे वह अपने सेवकों को प्रमाणित करता है। इन शब्दों का अर्थ उनके सिवा कोई नहीं समझ सकता, जिनके हृदय आश्वस्त हैं, जिनकी आत्माओं को परमात्मा की कृपा प्राप्त है और जिनके मन-मानस उसके अतिरिक्त अन्य सभी कुछ से अनासक्त हुए हैं। ऐसे वचनों में, लोगों द्वारा सामान्यतः समझा गया शाब्दिक अर्थ वह नहीं है जो अभीष्ट है। इस प्रकार यह लिखा गया है: ''प्रत्येक ज्ञान के सत्तर अर्थ हैं, जिनमें मात्र एक मनुष्यों को ज्ञात है और जब काइम आएगा, तब वह शेष को मनुष्यों के समक्ष प्रकट करेगा।'' वह यह भी कहता है: ''हम एक शब्द बोलते हैं और उससे हम एक और सत्तर अर्थों का अभिप्राय रखते हैं, इन अर्थों में से प्रत्येक को हम स्पष्ट कर सकते हैं।''

282. इन चीजों का उल्लेख हम केवल इसलिये करते हैं कि कुछ पारम्परिक कथनों तथा वचनों के कारण जो अभी तक शाब्दिक रूप से पूर्ण नहीं हुए हैं, लोग उद्विग्न न हों, वे अपनी व्याकुलता को समझ की अपनी कमी पर आरोपित करें, पारम्परिक

कथनों में दिये वचनों की अपरिपूर्णता पर नहीं, क्योंकि उस धर्म के इमामों द्वारा अभीष्ट अर्थ इन लोगों ने नहीं जाना है, जिसके साक्षी स्वयं पारम्परिक कथन हैं। अतः मनुष्य ऐसे वचनों से, दिव्य अनुग्रहों से अपने को वंचित न होने दें। अपेक्षाकृत, उनसे जो उनके मान्यता प्राप्त अर्थ प्रकाशन हैं, प्रकाश की तलाश करें, जिससे अप्रकट रहस्य उद्घाटित हो जायें और उनके समक्ष प्रकट हो जायें।

283. तथापि, पृथ्वी के लोगों के बीच हम किसी को नहीं देख रहे हैं जो सत्य के प्रति सत्यनिष्ठा से लालायित हो, अपने प्रभुधर्म के दुर्बोध विषयों के सम्बन्ध में दिव्य प्राकट्यों का मार्गदर्शन खोजता हो। सभी विस्मृति के भू-देश के निवासी हैं और सभी दुष्टता तथा विद्रोह के लोगों के अनुयायी हैं। सत्य ही ईश्वर उनके प्रति वही करेगा जो वे स्वयं अपने प्रति करते रहे हैं और उनको उसी तरह भुलाया जाएगा जैसे उन्होंने उसके दिवस में उसको भुलाया है। उसकी ऐसी न्यायाज्ञा है उनके लिए, जिन्होंने उसे अस्वीकार किया है और यही उनके लिए होगा जिन्होंने उसके चिह्नों को अस्वीकार किया है।

284. उसके शब्दों के साथ हम अपने विवेचन का समापन करते हैं - उदात्त है वह - ''और जो कोई उस दयामय के स्मरण से हाथ खींचेगा, हम एक शैतान को उससे आबद्ध करेंगे और वह उसका पक्का साथी होगा।''[176] ''और जो कोई मेरे स्मरण से विमुख होता है, सत्य ही उसका जीवन दीनता का होगा।''[177]

285. पूर्वकाल में इस प्रकार प्रकट किया गया है, यदि तुम समझ पाते। ''ब'' और ''ह'' द्वारा प्रकटित।[178]

शांतिलाभ हो उसे जो सद्रतुल-मुन्तहा से आह्वान करते रहस्यमय पक्षी की स्वर लहरियों की ओर ध्यान लगाता है। महिमामण्ड़ित हो हमारा प्रभु, वह सर्वोच्च!

टिप्पणियां

1. (क़ुरआन 36:30)

2. (क़ुरआन 40:5)

3. (क़ुरआन 11:38)

4. (क़ुरआन 71:26)

5.(क़ुरआन 29:2)

6.(क़ुरआन 35:39)

7. (क़ुरआन 11:61,62)

8. (क़ुरआन 40:28)

9.(कुरआन 11:18)

10. कुरआन 2:87

11. (क़ुरआन 3:70)

12.(क़ुरआन 3:71)

13.(क़ुरआन 3:99)

14. (क़ुरआन 3:7)

15. (कुरआन 76:9)

16.(क़ुरआन 5:114)

17.(क़ुरआन 14:24, 25)

18. (मैथ्यू 24:29-31)

19. (लेखांश बहाउल्लाह द्वारा अरबी में उद्धृत और फारसी में व्याख्यायित है)

20. (लूका: 21:23)

21. (''विलाप'' बारहवें इमाम को समर्पित)

22. (क़ुरआन 55:5)

23. (क़ुरआन 67:2)

24. (क़ुरआन 76:5)

25. (क़ुरआन 6:91)

26. (क़ुरआन 41:30)

27. (क़ुरआन 70:40)

28. (क़ुरआन 82:1)

29. (क़ुरआन 14:48)

30. (क़ुरआन 39:67)

31. (प्रार्थना के दौरान अपना मुखड़ा निर्धारित दिशा की ओर करना)

32. (मक्का)

33. (मदीना)

34. (क़ुरआन 2:144)

35. (नतमस्तक)

36. (मक्का में)

37. (क़ुरआन 2:149)

38. (क़ुरआन 2:115)

39. (क़ुरआन 2:143)

40. (क़ुरआन 74:50)

41. (क़ुरआन 28:20)

42. (क़ुरआन 26:19)

43.(क़ुरआन 24:35)

44.(क़ुरआन 25:19,21)

45. (क़ुरआन 19:22)

46. (क़ुरआन 19:28)

47. (मैथ्यू 2:2)

48. (क़ुरआन 3:39)

49. (मत्ती 3:1-2)

50. (शेख अहमद अहसाई और सैय्यद काज़िम-ए-रश्ती)

51. (क़ुरआन 55:29)

52. (क़ुरआन 51:22)

53. (क़ुरआन 2:282)

54. (क़ुरआन 55:56)

55. (क़ुरआन 2:87)

56. (क़ुरआन 2:87)

57. (क़ुरआन 25:7)

58. (क़ुरआन 2:210)

59. (क़ुरआन 44:10)

60. (क़ुरआन 3:119)

61. (शियाओं के छठें इमाम)

62. (क़ुरआन 25:7)

63. (क़ुरआन 4:46)

64. (कुरआन 2:79)

65. (क़ुरआन 24:35)

66. (कुरआन 9:33)

67. (कुरआन 2:177)

68. (क़ुरआन 6:104)

69. (क़ुरआन 3:28)

70. (क़ुरआन 41:53)

71. (क़ुरआन 51:21)

72. (क़ुरआन 59:19)

73. (कुरान 2:253)

74. (क़ुरआन 7:146)

75. (क़ुरआन 6:35)

76. (ईसाइया 65:25)

77. (क़ुरआन 7:179)

78. (क़ुरआन 11:7)

79. (क़ुरआन 50:15)

80. (क़ुरआन 50:15)

81. (क़ुरआन 50:20, 21)

82. (जौन 3:7)

83. (यूहन्ना 3:5-6)

84. (क़ुरआन 7:179)

85. (क़ुरआन 7:179)

86. (लूका 9:60)

87. (मुहम्मद के चाचा की उपाधि)

88. (क़ुरआन 6:123)

89. (क़ुरआन 37:173)

90. (क़ुरआन 9:32)

91. (क़ुरआन 11:18)

92. (क़ुरआन 35:15)

93. (मार्क 2:3-12)

94. (क़ुरआन 6:91)

95. (क़ुरआन 15:72)

96. (क़ुरआन 5:64)

97. (क़ुरआन 48:10)

98. (क़ुरआन 29:23)

99. (क़ुरआन 2:46)

100. (क़ुरआन 2:249)

101. (क़ुरआन 18:110)

102. (क़ुरआन 13:2)

103. (क़ुरआन 17:44)

104. (क़ुरआन 78:29)

105. (क़ुरआन 57:3)

106. (क़ुरआन 2:210)

107. (क़ुरआन 28:5)

108. (क़ुरआन 13:41)

109. (क़ुरआन 3:183)

110. (क़ुरआन 3:182)

111. (क़ुरआन 2:89)

112. (क़ुरआन 2:285)

113. (क़ुरआन 54:50)

114. (क़ुरआन 43:22)

115. (बाब)

116. (क़ुरआन 2:19)

117. (क़ुरआन 36:20)

118. (इमाम अली)

119. (क़ुरआन 2:85)

120. (कुरान 33:40)

121. (क़ुरआन 6:103)

122. (क़ुरआन 16:61)

123. (क़ुरआन 21:23)

124. (क़ुरआन 55:39)

125. (क़ुरआन 55:41)

126. (बगदाद)

127. (क़ुरआन10:25)

128. (क़ुरआन 6:127)

129. (कुरआन 2:136)

130. (कुरआन 2: 253)

131. (कुरआन: 18:110)

132. (क़ुरआन 8:17)

133. (कुरान 48:10)

134. (क़ुरआन 33:40)

135. (क़ुरआन 2:189)

136. (क़ुरआन 17:85)

137. (हाजी करीम खान)

138. (अज्ञानियों का मार्गदर्शन)

139. (आरोहण)

140. (नारकीय वृक्ष)

141. (पापी) (क़ुरआन 44:43-44)

142. (आदरणीय) (क़ुरआन44:49)

143. (मूसा के समय का जादूगर)

144. (क़ुरआन 7:58)

145. (क़ुरआन 16:43)

146. (क़ुरआन 29:69)

147. (क़ुरआन 29:69)

148. (1260 का वर्ष ए.च. बाब की उद्घोषणा का वर्ष)

149. (क़ुरआन 2:1)

150. (क़ुरआन 2:23)

151. (क़ुरआन 45:6)

152. (क़ुरआन 45:8)

153. (क़ुरआन 26:187)

154. (क़ुरआन 8:32)

155. (क़ुरआन 45:24-25)

156. (क़ुरआन 29:23)

157. (क़ुरआन 37:36)

158. (क़ुरआन 40:34)

159. (क़ुरआन 3:7)

160. (क़ुरआन 45:23)

161. (क़ुरआन 38:67-68)

162. (क़ुरआन 5:62)

163. (क़ुरआन 6:7)

164. (क़ुरआन 2:148)

165. (क़ुरआन 14:27)

166. (इमाम हुसैन)

167. (क़ुरआन 26:227)

168. (क़ुरआन 2:94)

169. (क़ुरआन 34:13)

170. (क़ुरआन 59:2)

171. (वह जिससे प्रार्थना की जाती है)

172. (क़ुरआन 11:112)

173. (क़ुरआन 54:6)

174. (अली द्वारा प्रकटित दर्शन की पाती)

175. (क़ुरआन 25:44)

176. (क़ुरआन 43:36)

177. (क़ुरान 20:124)

178. (ब और ह अर्थात बहा)